विचार दृष्टि

वर्ष : 8 | अंक : 29 | अक्टूबर-दिसंबर 2006 | 25 रुपये

- आतंकवाद के साए में हमारी राष्ट्रीय चेतना
- भारतीय राजनीति में पनपती वंशवाद की प्रवृत्ति
- वंदे मातरम् आज़ादी का जयघोष
- जरूरी है लेखक का स्वाभिमान
- काश! सरदार पटेल होते ....
- ये सुविधाभोगी सासंद

LOCOMOTION
THE ESSENCE OF LIFE

पटना हड्डी एवं रीढ़ रोग अस्पताल प्रा.लि.
Patna Bone & Spine Hospital Pvt. Ltd.

A Centre Dedicated to Advanced Care of Bone & Spine Surgery Only

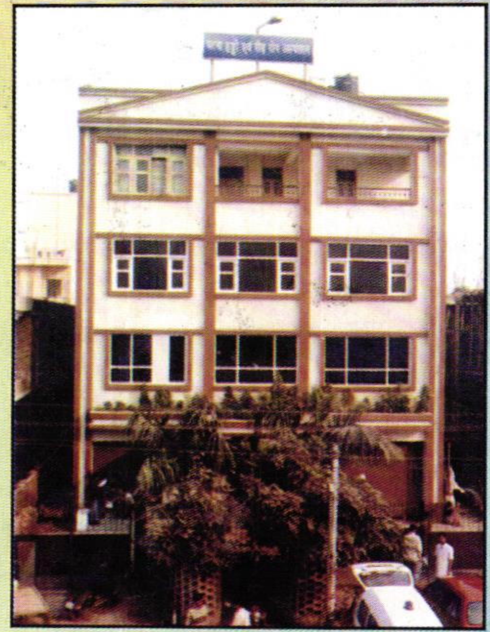

1. टूटी हड्डियों को कम्प्यूट्रीकृत एक्सरे (IIT) के द्वारा बैठाने की सुविधा।
2. हाथ/पाँव की सभी हड्डियों के टूट बिना प्लास्टर, बिना ज्यादा चीर-फाड़ के क्लोज्ड इन्टर लौकिंग नेल (Close Interlocking Nail) द्वारा इलाज, ताकि मरीज तुरन्त चल सके।
3. छोटे छिद्र द्वारा (Arthroscopic) घुटने के अन्दर की खराबियों का इलाज।
4. जन्मजात, पोलियो, चोट के बाद टेढ़ी-मेढ़ी हड्डियों का इलिजारोब (Ilizarov) तकनीक द्वारा इलाज।
5. रीढ़ (गर्दन समेत) की हड्डियों एवं नस का ऑपरेशन, छोटे छिद्र (Microdiscectomy) द्वारा डिस्क प्रोलैप्स का ऑपरेशन।
6. रीढ़ की चोट की सम्पूर्ण एवं विशिष्ट चिकित्सा।
7. पूर्ण जोड़ प्रत्यावर्तन (Total Joint Replacement)।
8. वास्कुलर, न्यूरो, प्लास्टिक, फेसियोमैक्जिलरी, माइक्रो सर्जरी के विशेषज्ञों द्वारा एक दल के रूप में बहुअंगीय (Polytrauma) कठिन चोटों का इलाज।
9. हृदय, न्यूरो, छाती के औषधि विशेषज्ञों की देख-रेख।

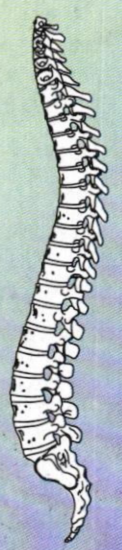

Dr. Vishvendra Kumar Sinha
M.B.B.S. (Pat.), D. orth. (Pat.) M.S. (orth.), FICS (USA) Ph.D. (orth.)

H-3, Doctors Colony, Kankarbagh, PATNA-800 020 Ph. : 2361180
एच.-3, डॉक्टर्स कॉलोनी, कंकड़बाग, पटना-800 020, फोन : 2361180

विचार दृष्टि

(राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी)
वर्ष- 8 अक्टूबर-दिसंबर, 2006 अंक- 29

संपादक-प्रकाशक : **सिद्धेश्वर**
सं. सलाहकार : **गिरीश चंद्र श्रीवास्तव**
प्रबंध संपादक : **सुधीर रंजन**
उप संपादक : **डॉ॰ शाहिद जमील**
सहायक संपादक : **अंजलि**
आवरण साज-सज्जा : **अलका रघुवंशी**
शब्द संयोजन : **गंगा-यमुना प्रकाशन,**
आवास सं॰ सी॰/6, पथ सं॰ 5, आर॰ ब्लॉक, पटना-800001

संपादकीय-प्रकाशकीय कार्यालय

'दृष्टि', 6 विचार विहार, यू॰-207,
शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92
☎ : (011) 22530652 / 22059410
मोबाईल:9811281443/ 9811310733
फैक्स : (011) 52487975
E-mail: vichardrishti@hotmail.com
'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-800001
☎ : 0612-2228519

पटना कार्यालय

आवास सं॰ सी॰/6, पथ सं॰ 5, आर॰ ब्लॉक,
पटना-800001 ☎ : 0612-2226905

ब्यूरो प्रमुख

नागपुर : मनोज कुमार ☎ : 2553701
कोलकाता : जितेन्द्र धीर ☎ : 24692624
चेन्नई : डॉ० मधु धवन ☎ : 26262778
तिरूवनंतपुरम : डॉ॰ एन॰ चंद्रशेखरण नायर
बैंगलूर: पी॰एस॰चंद्रशेखर ☎ :26568867
हैदराबाद : डॉ॰ ऋषभदेव शर्मा ☎ : 23391190
जयपुर : डॉ॰ सत्येंद्र चतुर्वेदी ☎ : 2225676
अहमदाबाद : रमेश चंद्र शर्मा 'चंद्र'

प्रतिनिधि

दिल्ली : श्री उदय कुमार 'राज़'
लखनऊ : प्रो. पारसनाथ श्रीवास्तव,
ग्वालियर : डॉ. महेन्द्र भटनागर
सतना : डॉ. राम सिया सिंह पटेल
देहरादून : डॉ. राज नारायण राय
हैदराबाद : श्री चंद्र मौलेश्वर प्रसाद
एरणाकुलम : डॉ॰ पी॰ राधिका
मुद्रक : प्रोलिफिक इनकारपोरेटेड एक्स-47, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेज-2, नई दिल्ली-20

मूल्य एक प्रति	:	25 रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	200 रुपये
आजीवन सदस्य	:	1000 रुपये
विदेश में एक प्रति	:	US $ 05
वार्षिक	:	US $ 20
आजीवन	:	US $ 250

एक 👁 में
रचना और रचनाकार

पाठकीय पन्ना ... 02

संपादकीय
आतंकवाद के साये में ... 05

विचार-प्रवाह
वंदेमातरम् आजादी का जयघोष ... 07
देवेंद्र स्वरूप
ज़रूरी है लेखक का स्वाभिमान ... 08
डॉ॰ नरेंद्र शर्मा 'कुसुम'

साहित्य
कबाड़ में सिमटी जिंदगी (कहानी)... 09
कृष्ण कुमार राय
योद्धा (लंबी कहानी) ... 12
डॉ॰ शाहिद जमील

काव्य-कुँज
फ़ैज़, फ़ातमी, शशि शेखर, अजय, ...20
सुलेमान, राग़िब,डॉ॰ विजय, वीणा,
डॉ॰ नंदा, पिल्लै, डॉ॰ महेश,
नलिनीकांत, मनु सिंह

व्यंग्य
हम साथ-साथ हैं ... 25
शुक्ला चौधरी

समीक्षा
गहरे अँधेरे को ... 26
सिद्धेश्वर
कविवर तरुण ... 27
डॉ॰ कुमार रजनीकांत रंजन
श्रीरामदूत हनुमान ... 28
डॉ॰ शत्रुघ्न प्रसाद

अध्यात्म
माँ-बाप के प्रति संतान का कर्त्तव्य... 29
डॉ॰ जाहिद अनवर
'झूठा सच' 30
चंद्र मौलेश्वर प्रसाद

राजनीतिक नजरिया
भारतीय राजनीति में वंशवाद 31
सिद्धेश्वर
ये सुविधाभोगी सांसद ... 33
राधाकांत भारती

दृष्टि
प्रतिनिधिक लोकतंत्र के लिए 34
सिद्धेश्वर

शिक्षा
वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था 35
डॉ॰ नवल किशोर प्र॰ श्रीवास्तव

शख़्सियत
काश! सरदार पटेल होते...... ... 39
उदय कुमार 'राज़'

दक्षिण भारत
हैदराबाद की चिट्ठी ... 41

गतिविधियाँ
नामवर हुए अस्सी साल के ... 42

सम्मान
साइजी माकिनो को हिंदी रत्न... ...44

संस्मरण
उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ 47
नेपाली के साथ गुजरे दिन 50
सत्येंद्र नारायण सिंह 53

श्रद्धांजलि
हृषिकेश मुखर्जी का निधन ...54
साभार-स्वीकार ...55

स्वाभिमान

समीक्षा

वंशवाद

शख़्सियत

सम्मान

संस्मरण

श्रद्धांजलि

पत्रिका-परामर्शी

❑ पद्मश्री डॉ.श्यामसिंह 'शशि' ❑ प्रो॰ राम बुझावन सिंह ❑ प्रो. धर्मेंद्र नाथ 'अमन' ❑ श्री जियालाल आर्य ❑ डॉ॰ बालशौरि रेड्डी ❑ श्री जे.एन.पी.सिन्हा ❑ श्री बाँकेनन्दन प्र॰ सिन्हा ❑ डॉ॰ सच्चिदानंद सिंह 'साथी' ❑ डॉ॰ एल॰एन॰ शर्मा

पत्रिका-परिवार के सभी सदस्य अवैतनिक हैं
रचनाकारों के विचारों से पत्रिका-परिवार का सहमत होना आवश्यक नहीं।

राष्ट्र की ज्वलंत समस्याओं पर दो-टूक विचार प्रगट कर स्वतंत्र पत्रकारिता की निर्भीकता का बहुत अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। जीवन के विविध क्षेत्रों एवं पहलुओं से संबंधित शेष रचनाएँ स्तरीय भी हैं। बधाई।

शिववंश पाण्डेय
पूर्व उपाध्यक्ष, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद
'लीलाधम', 3/307, न्यू पाटलिपुत्र कॉलोनी, पटना-800013

विचारोत्तेजक और प्रेरक

'विचार दृष्टि' के अंक 28 में आपका संपादकीय 'मौजूदा लोकतंत्र में नागरिकों का राष्ट्रीय उत्तरदायित्व' विचारोत्तेजक और प्रेरक दोनों है। मेरे आवास पर 16 जून की संगोष्ठी में इन्हीं मुद्दों पर विचार-मंथन हुआ था, जैसा कि आपने अपनी रपट में कहा भी है। संपादकीय में आपने जो मौजूदा लोकतंत्र में सामंती प्रवृत्ति के पनपने की बात उठाई है, वह एकदम सही है। हमारी तथाकथित लोकशाही नेता मुगल सामंतों की भांति ही एक भ्रष्ट व्यवस्था का पोषण कर रहे हैं। बात उनकी जवाबदेही की है, जो जनता या लोक, जो वास्तविक शासक है, के प्रति होनी चाहिए। पर हुआ यह है कि लोकतंत्र में से 'लोक' गायब हो गया है, केवल 'तंत्र' रह गया है। मेरी राय में 'लोकतंत्र' संज्ञा अपने आप में प्रदूषित है – लोक आस्था को खंडित करनेवाली है 'लोकराज' या 'स्वराज' शब्द अधिक सार्थक होंगे इस दृष्टि से, तभी तंत्र की जकड़न से मुक्ति मिल पाएगी।

'पाचर' जी पर आपका आलेख, विनोदशंकर गुप्त और डॉ0 के.एन.पी. श्रीवास्तव जी के लेख सूचनाप्रद और रोचक लगे, भाई सतीश कौशिक, कमलेश भारतीय और चन्द्रसेन विराट की काव्य प्रस्तुतियाँ अंक को पठनीय बनाती हैं। डॉ0 राजनारायण राय का नाटक 'तलाश' भी साहित्य-चिंतन को नए आयाम देता है। मेरा हार्दिक साधुवाद स्वीकारें इस स्तरीय संयोजन हेतु।

कुमार रवीन्द्र
'क्षितिज' 310, अर्बन एस्टेट-2, हिसार-125005, हरियाणा
फोन : 01662-247347

ज्ञानवर्द्धक एवं सुरुचिपूर्ण

'विचार दृष्टि' का जुलाई-सितम्बर 2006 अंक पढ़कर मन आनंद विमोर हो गया। डॉ. के.एन.पी. श्रीवास्तव के सामाजिक निबंध 'बुजुर्गों की दुनिया' पढ़कर मुझे मध्य प्रदेश की लेखिका सुशीला कपूर के एकांकी संग्रह 'पीले पात' की याद ताजा हो गयी। मैंने अपनी पत्रिका 'साहित्य प्रहरी' के समीक्षा विशेषांक - 1 में उसकी समीक्षा प्रकाशित की थी। किंतु 'पीले पात' में जहाँ वृद्धावस्था को अभिशाप मानकर सिर्फ उसका रोना रोया गया था, वहीं 'बुजुर्गों की दुनिया' में वृद्धावस्था को आनंदमय बनाने के लिए बड़े ही सुंदर, उपयोगी एवं लाभप्रद सुझाव दिये गये हैं।

आपने अपनी पत्रिका में दक्षिण भारत के साहित्य एवं साहित्यकारों की चर्चा कर संपूर्ण भारत को एकसूत्र में बाँधने का सराहनीय प्रयास किया है। दक्षिण भारत के ख्यातिलब्ध साहित्यकर डॉ. राबूरि भरद्वाज से तमिलानाडु हिंदी अकादमी के अध्यक्ष और हिंदी एवं तेलुगु साहित्य के ख्यातिलब्ध हस्ताक्षर डॉ. बाल शौरि रेड्डी का साक्षात्कार सचमुच आज के साहित्यकारों के लिए युग-युग तक प्रेरणस्रोत रहेगा। निदा फाजली, चितरंजन भारती एवं संजय जोशी की रचनाएँ भी समसामयिक, आनंददायक एवं उपयोगी हैं। डॉ. शाहिद जमील का आध्यात्मिक निबंध 'प्रलय से पूर्ण की चंद निशानियाँ' काफी ज्ञानवर्द्धक एवं सुरुचिपूर्ण लगा।

पत्रिका की अन्य रचनाएँ एवं सामग्रियाँ भी उच्च स्तरीय, पठनीय, उपयोगी, ज्ञानवर्द्धक, प्रेरणादायक एवं अंतस्तल को छू लेनेवाली हैं। ऐसे सुंदर अंक के कुशल समायोजन एवं सुसंपादन के लिए आप मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें। आपके संपादन-कला की जितनी भी प्रशंसा की जाय, कम होगी।

डॉ. भगवान सिंह 'भास्कर'
पखंड कार्यालय के सामने, लखरावँ, सिवान-841226 (बिहार)

ज़रा इनकी भी सुनें

विदेशी ज़मीन पर बननेवाला कोई भी क़ानून हमारे संप्रभु अधिकार को नहीं छीन सकता। भारत ऐसे किसी क़ानून के आगे घुटने टेकनेवाला नहीं है।

– प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह

'राजनीति के उस पार के लोकार्पण में राजनीति के इस पार के लोग मौजूद हैं। इस पार हो या उस पार, मझधार में नहीं होना चाहिए।

– अटल बिहारी वाजपेयी

भारतीय टीम को कोचिंग देना क्रिकेट में सबसे बड़ी चुनौती है और मैं न सिर्फ़ चुनौतियों का सामना कर रहा हूँ, लुत्फ़ भी उठा रहा हूँ।

– ग्रेग चौपल

हेयर कुछ ऐसे लोगों में हैं जो अंपायर का सफ़ेद कोर्ट पहनकर मीनी हिटलर बन जाना चाहते हैं। हेयर के फ़ैसले ने पूरे मुल्क की इज़्ज़त उछाली है।

-इमरान ख़ान

आई.सी.सी या तो अँधी है या फिर बेवकूफ़, जिसने यह महसूस नहीं किया कि हेयर और पाक के बीच 36 का आकड़ा है।

-ज्यॉफ बॉयकाट

मेरा साफ़ तौर पर मानना है कि जब 'वंदे मातरम्' कोई मज़हबी गीत नहीं है तो इसके विरोध का कोई औचित्य नहीं है।

– मौलाना वहीदुद्दीन

स्वास्थ्य मंत्री को जनता के स्वास्थ्य की बजाए औद्योगिक स्वास्थ्य की कहीं ज़्यादा परवाह है।

– सुनीता नारायण

आतंकवाद के साये में हमारी राष्ट्रीय चेतना

नागरिकों में चेतना जागृत करके ही आतंकवाद पर क़ाबू पाया जा सकता है। किसी भी राष्ट्र की समृद्धि और उसकी स्वतंत्रता को अक्षुण्ण बनाए रखने में वहाँ के नागरिकों की राष्ट्रीय चेतना सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है और इस राष्ट्रीय चेतना को बाँधे रखने के लिए वहाँ के लोगों में सांस्कृतिक एवं भावनात्मक एकता के सूत्र होने चाहिए। राष्ट्रीय चेतना कोई निश्चेष्ट भावना नहीं, बल्कि एक अत्यंत गतिमान, उत्तेजक एवं स्फूर्तिदायक चेतना है, जो मनुष्यों के अपने राष्ट्र के उत्थान एवं समृद्धि हेतु संगठित रूप से प्रयास करने के लिए प्रेरणा प्रदान करती है।

दरअसल, इस देश के प्राय: प्रत्येक क्षेत्र के नागरिकों में आज जितनी तेज़ी से राष्ट्रीयता की भावना का ह्रास होता चला जा रहा है उतना पहले कभी नहीं देखा गया था। राष्ट्रीयता की भावना अपने राष्ट्र के गौरवमय अतीत पर गर्व और स्वाभिमान की शक्ति, एकता पर बल- इन सबकी चेतना फैलाने में नागरिकों का योगदान होता है।राष्ट्रीयता ऐसी भावना है जिसका संबंध मनुष्य की अंत:करण और भीतरी चेतना से होता है। 'राष्ट्रीयता' शब्द मनुष्य की स्वाभाविक वृत्तियों में से एक प्रमुख वृत्ति है जिसके कारण मानव अपने राष्ट्र के प्रति प्रगाढ़ प्रेम एवं अभिन्न लगाव रखता है और वह अपने राष्ट्र को सदा समृद्ध एवं उन्नतिशील देखना चाहता है। इसी भावना से प्रेरित होकर व्यक्ति अपने राष्ट्रहित और समग्र समाज-कल्याण के लिए सर्वस्व न्योछावर कर देता है और इस त्याग और बलिदान में एक सच्चा देशभक्त अपने आपको गौरवांवित महसूस करता है। किंतु आज ऐसा लगता है कि इस देश में राष्ट्रीय चेतना की कमी के चलते आतंकवाद और हिंसा के हम शिकार हैं।

आतंकवाद अब केवल जम्मू-कश्मीर तक सीमित नहीं है, बल्कि इसने भारत के अधिकांश क्षेत्रों को अपनी चपेट में ले रखा है। देश की आर्थिक राजधानी मुंबई को अभी-अभी आतंकवादी धमाकों ने हिला दिया और वहाँ के लोगों का जीवन थरथरा गया। मुंबई के लोकल ट्रेन में बम धमाके और उसके हादसे में वहाँ के दो वर्गों के लोगों को अलग-अलग रूप में देखा गया। एक ओर जहाँ शहर का निम्न-मध्य वर्ग सड़कों पर उतर घायलों की मदद कर रहा था, उन्हें अस्पताल पहुँचा रहा था, उनके परिजनों के आँसू पोछ रहा था, बदहवास लोगों को भोजन-पानी उपलब्ध करा रहा था और उन्हें धीरज बँधा रहा था, तो वहीं दूसरी ओर शहर का दूसरा वर्ग अपने ड्राइंग रूम में टी॰वी॰ देखने व हादसे पर गंभीर बहस करने में व्यस्त था, फिर डिनर के साथ देश की चिंताओं में ग़मगीन था और यह सोचते-सोचते प्रतिदिन की तरह अपने मख़मली गद्दों में मख़मली चादर ओढ़कर नींद के साथ दिन भर की दिमाग़ी क़वायदों की थकान मिटा रहा था। फिर दूसरे दिन सुबह से रोज़मर्रा के कामों में पहले की तरह लग गए, जैसे कहीं कुछ हुआ ही न हो। क्या इस लचीलेपन को भयंकर त्रासदी और उससे उपजी पीड़ा के प्रति संवेदनहीनता नहीं कही जाएगी? होना तो यह चाहिए था कि दूसरे दिन लपककर पुन: उसी लोकल ट्रेन को पकड़ने की बजाय हादसे और हादसे के पीछे चेहरों से लड़ने के लिए उठ खड़ा हुआ जाए। आख़िर हम किस मिट्टी के बने हैं? हमारे देश में रोज़ आतंकी हमले कहीं न कहीं हो रहे हैं और हम अपनी 'बहादुरी' पर ही इतरा रहे हैं। इससे भयानक और लज्जाजनक स्थिति और क्या हो सकती है?

दरअसल, हम अपने आस-पास से बेख़बर हम किसी भी तरह की चिंता को अपने से दूर रखना चाहते हैं मानो हम पर किसी मुश्किल का साया भी नहीं पड़नेवाला हो। ऐसा लगता है कि संवेदनहीन होने के साथ-साथ हमारी सामाजिक एवं राष्ट्रीय चेतना मर-सी गई है। जिस समाज में सामाजिक प्रतिबद्धता तथा सामूहिकता का भाव न रह गया हो और जिसमें आसन्न संकटों का सामना मिलकर करने की भावना समाप्त हो रही हो, वह समाज किसी भी तरह की असुरक्षा, आतंक, व्यभिचार और लूट के लिए सबसे कारग़र वातावरण उपलब्ध कराता है। हम यह भी भूल चुके हैं कि सामूहिक सजगता ही सरकार और प्रशासनतंत्र को अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग होने के लिए मजबूर करती है। हम यह भी नहीं समझ पा रहे हैं कि धीरे-धीरे हम स्वयं इस आतंक और हिंसा की ज़द में आ रहे हैं और उसका अगला निशाना हम ही हैं। यह आत्महनन का रास्ता है। आत्महनन के रास्ते पर चलती हुई सभ्यता के संदर्भ में रघुवीर सहाय के विचार क़ाबिले ग़ौर हैं; ''लोकतंत्र ने हमें इंसान की शानदार ज़िंदगी और कुत्ते की मौत के बीच चांप लिया है। दोनों के अंतराल की ज़मीन पर लोकतंत्र के उपजाए यथार्थ के तनाव में फँसकर आदमी का मन मरने लगता है। आधा ज़िंदा और आधा मुर्दा मन लिए आदमी 'इंसान की शानदार ज़िंदगी' और 'कुत्ते की मौत' के बीच अपनी जीवनयात्रा ज़ारी रखने को विवश होता है।''

हालांकि यह भी सच है कि इस देश की जनता ने प्राकृतिक आपदाओं के वक़्त हिम्मत दिखाई और हौसलाअफ़ज़ाई की है। न जाने कितनी बार यहाँ के नागरिकों ने अपने कर्म से यह साबित कर दिया है कि हम हिंदुस्तानी कुछ अलग ही मिट्टी के बने हैं। आँधी-तूफ़ान चाहे जैसे भी आएँ, फीनिकस पक्षी की तरह हर बार हम अपनी राख़ से जी उठेंगे। आपने देखा नहीं मुंबई हादसे के वक़्त भी शहर के एक वर्ग ने विस्फोटों के सिर्फ़ तीन घंटों के भीतर ख़ून देनेवालों की लंबी-लंबी क़तारें उन तमाम अस्पतालों के बाहर लग गई जिनमें विस्फोटों से घायल हुए ज़्यादातर लोग भर्ती थे। आधी रात होते-होते अस्पतालों को यह सूचना जारी करनी पड़ी कि सारे ब्लडबैंक पूरी तरह भर चुके हैं और अब उन्हें ज़्यादा ख़ून की ज़रूरत नहीं है। यह इस बात का द्योतक है कि ऐसे विपदा के वक़्त हम सभी एक-दूसरे के साथ भाई की तरह पेश आते हैं और हमारी आत्मा बहुत शक्तिशाली हो जाती है। इसी संदर्भ

में हरियाणा के हल्देरी गाँव में घटी घटना भी काफ़ी रोमांचकारी है, जिसे यहाँ प्रस्तुत करना यथोचित जान पड़ता है। घटना यूँ है कि एक पाँच साल का वह बच्चा प्रिंस, जो पिछले दिनों खेलते हुए 16 इंच व्यास के 60 फुट गड्ढे में गिर गया और 50 घंटे तक जीवन और मौत से जूझते हुए संघर्ष करता रहा, किंतु ऐसे वक़्त सेना के अदम्य साहस, दृढ़ इच्छाशक्ति, आधुनिक तकनीक और इस देश की समस्त जनता सहित दुनिया के करोड़ों लोगों ने उसकी सलामती के लिए दुआ माँगी और अंततः बच्चे को बिना खरोंच के बाहर निकालने में सेना सफल रही। इस घटना को टी॰वी॰ चैनलों के ज़रिए लोग देश भर में मंदिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों और गिरजाघरों में प्रार्थनाओं का नज़ारा देखते रहे। सीधे दूरभाष और एसएमएस के माध्यम से लोग टीवी चैनलों पर प्रिंस को शुभकामनाएँ देते रहे। इन दो घटनाओं के आधार पर ही हम कह सकते हैं कि देशद्रोही एवं असामाजिक ताक़तों की कोशिशों को नाक़ामयाब करने में हम सक्षम होंगे, यही है हमारी राष्ट्रीय चेतना और सामूहिक सजगता, जिसके ज़रिए आतंकवाद से मुक़ाबला किया जा सकता है।

दूसरी ओर सच्चाई यह है कि आतंक के सवाल के यथार्थ से हमने अपनी आँखें मूँद ली हैं। आतंकवाद और ख़ास तौर पर सीमा पार से प्रायोजित आतंकी कार्यवाइयों को किस तरह रोका जाए इस मुद्दे पर गंभीरता से विचार नहीं किया जा रहा है। आतंकवाद से लड़ने के लिए न केवल देश के नागरिकों में राष्ट्रीय चेतना जागृत करने की ज़रूरत है, बल्कि राष्ट्रीय सहमति बनाने की कोशिश भी जरूरी है और पाकिस्तान पर दबाव बनाए रखने के साथ-साथ हमें खुद पर भी भरोसा रखना होगा तथा अपनी आंतरिक सुरक्षा को मज़बूत बनाना होगा, क्योंकि सीमा पार से आतंकवादी कार्रवाइयों को खुले शह का नापाक खेल खेला जा रहा है और हम लगातार शांति प्रक्रिया जारी रखने की बात करते हैं। ऐसा लगता है कि भारतीय नेतृत्व आतंकवाद से मुक़ाबला करने के प्रति आवश्यक प्रतिबद्धतासे लैस नज़र नहीं आता। प्रत्येक आतंकवादी घटना के बाद संकल्प और चेतावनी रूपी कुछ शब्दवाण छोड़े जाते हैं, लेकिन वहाँ धरातल के स्तर पर कुछ भी नहीं किया जाता। अभी तक भारत में ज़रूरी इच्छाशक्ति का परिचय भी नहीं दिया है। हम केवल तरह-तरह के भाषणों, बयानों, संकल्पों और प्रस्तावों के ज़रिए आतंकवाद से लड़ने का प्रयास करते हैं और देश लगातार आतंकवाद के साए में जीने को बाध्य होता है। मुंबई में पिछले बम बलास्ट के पीछे प्रतिबंधित सीमी का हाथ बताया जाता है, जो भारत की पंथनिरपेक्षता, संप्रभुता और अखण्डता को स्वीकार नहीं करता। फिर भी इन राष्ट्रद्रोही तत्त्वों से न निपटकर भारतीय राजनीति के अगुआ अपनी तुष्टिकरण नीति के तहत आज भी इन जयचंदों का मानसिक और भौतिक सहयोग कर रहे हैं। वे राष्ट्रहित की तुलना में वोट-बैंक को अधिक महत्त्व दे रहे हैं। ज़रूरत तो इस बात की है कि जो समाज व राष्ट्रविरोधी तत्त्व जिस समुदाय के बीच जाने-अनजाने संरक्षण पाते हैं, उन्हें बेनक़ाब किया जाए। यह तभी संभव है जब समुदाय जागरूकता का परिचय दे और लोगों में राष्ट्रीयता की भावना जागृत की जाए।

पिछले दिनों छत्तीसगढ़ में दंतेवाड़ा जिसने के एर्राबोर गाँव में नक्सलियों ने योजनाबद्ध तरीक़े से नरसंहार कर जिस पाशविकता का परिचय दिया वह निंदनीय तो है ही सरकार के लिए चुनौती भी है। जिस तरह से नक्सलियों ने बीस लोगों का गला रेत-, तीन को ज़िंदा जलाया और छः को गोली मारी, उससे उनकी क्रूरता और निर्ममता झलकती है। इतना ही नहीं, उन्होंने तीन सौ घरों में आग लगा दी, महिला पुलिस अधिकारी सहित 23 का अपहरण किया और हमले के बाद से 250 व्यक्ति लापता हैं। देश भर में नक्सली हिंसा और उसका आंदोलन कितना व्यापक हो गया है, यह इस तथ्य से साफ़ ज़ाहिर होता है कि इनकी गतिविधियाँ पहले जहाँ13 राज्यों तक सीमित थीं, उसका दायरा बढ़कर अब 21 राज्यों के 160 जिलों तक फैल गया है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि पश्चिम बँगाल के नक्सलबाड़ी गाँव से उपजा यह आँदोलन पिछले तीन दशकों में काफ़ी व्यापक रूप ले चुका है। स्वाभाविक रूप से इस राष्ट्रीय समस्या के यथार्थ पर जब हम नज़र डालते हैं तो इसके पीछे सामाजिक, आर्थिक और भूमि सुधार के अधकचरे प्रयास की विसंगतियाँ तो हैं ही, साथ ही भूमिहीन किसानों और नौजवानों की बेकारी और लाचारी जिसकी ओर केंद्र सरकार को विशेष ध्यान देना होगा। आतंकी और नक्सल से प्रभावित संवेदनशील इलाक़ों की सुरक्षा के लिए सरकार को कड़े क़दम उठाने होंगे।

ऐसी विकट स्थिति में सभी राजनीतिक दलों एवं उसके नेताओं को भी अलग-अलग बयानबाज़ी, एक दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप, अपने-अपने स्वार्थों में खींचातानी, राजनैतिक बेईमानी को अनिवार्यतः त्याग करके एकमतीय निश्चय एवं प्रयास करना होगा। ऐसे वक़्त जब हम राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी, राष्ट्रीय एकता व अखण्डता के प्रतीक लौहपुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल, 'जय जवान जय किसान' के प्रणेता लाल बहादुर शास्त्री तथा लोकनायक जय प्रकाश नारायण जैसे महापुरुषों की जयंतियाँ मना रहे हैं, हम सभी देशवासियों का यह राष्ट्रीय एवं नैतिक दायित्व बनता है कि हम अपने राष्ट्रहित से जुड़े कर्त्तव्य का निर्वहन ठीक ढंग से करें। हम अपनी रक्षा तभी कर पाएँगे जब हर स्थिति के लिए हम चौकन्ना रहें और हममें सामूहिक जवाबदेही और सजगता का भाव मज़बूत हो। आतंकवाद और हिंसा से लड़ने के लिए चाहिए सामाजिक एवं राष्ट्रीय चेतना और प्रेम। ऐसा करके ही हम इन महापुरुषों के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर सकते हैं। भारत सरकार को भी इस आतंकवाद का मुक़ाबला उसी निर्णायक तरीक़े से करना होगा जैसा पंजाब के आतंकवाद को कुचलने में सामने आया था। जबतक आतंकवाद के मूल स्रोतों को नष्ट नहीं किया जाएगा तबतक निर्दोष एवं बेक़सूर लोगों की हत्याओं के सिलसिले को भी पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता। अतएव देश के सभी नागरिकों को अपनी मज़हबी संकीर्णता को त्याग कर इंसानियत के रास्ते पर अग्रसर होना होगा और भाईचारे एवं सद्भाव का वातावरण बनाने का प्रयास करना होगा तभी आतंकवाद की इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से निपटा जा सकता है।

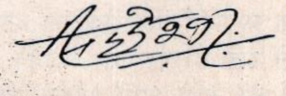

बंकिम चंद्र चटर्जी

वंदे मातरम् आज़ादी का जयघोष

○ देवेंद्र स्वरूप

'अथर्ववेद' का 'पृथ्वी सूक्त' कहता है कि ''यह भूमि माता हमें अलग-अलग बोलियाँ बोलनेवाले, भिन्न आचार-विचारों का पालन करनेवाले हम सब जनों को समान रूप से अपना दूध पिलाकर पालन-पोषण करती है। इसलिए हे भूमि तू मेरी माता है और मैं तेरा पुत्र हूँ।'' भूमि के प्रति यह माता-पुत्र भाव ही पूरे विश्व में राष्ट्रीयता का आधार माना जाता है। भिन्न उपासना पंथों को माननेवाले सभी इसाई और मुस्लिम राष्ट्रों में भूमि की वंदना करनेवाले राष्ट्र गीत प्रचलित हैं। किंतु भारत का दुर्भाग्य है कि भारतीय समाज का एक वर्ग राष्ट्र गीत 'वंदेमातरम्' अपनाने के लिए तैयार नहीं है।

1876 में बंकिमचंद्र चटर्जी ने जब इस गीत को शब्द-रूप दिया तब वस्तुत: वे हज़ारों साल पुराने 'पृथ्वी सुक्त' को ही पुन: मुखरित कर रहे थे। 1882 में यह गीत उनके 'आनंदमठ' उपन्यास का अंग बनकर 'युद्धघोष' बन गया। 1896 में जब काँग्रेस के कोलकाता अधिवेशन में राष्ट्र कवि रवींद्रनाथ ठाकुर ने इसे स्वर प्रदान किया तब उसकी अध्यक्षता मुंबई की अंजुमने इस्लाम के महासचिव एवं अधिवक्ता रहमतुल्लाह एम सयानी कर रहे थे। 1906 में काँग्रेस के कोलकाता अधिवेशन में जब यह राष्ट्र गीत प्रस्तुत किया गया तब दादा भाई नौरोज़ी अध्यक्ष पद पर विराजमान थे। जब 1905 में वायसराय लार्ड कर्ज़न ने बंगाल के विभाजन की घोषणा की और उसके विरूद्ध बंगाल में प्रबल जन ज्वार उमड़ा, तब 13 मई 1906 के प्रसिद्ध बारीसाल काँफ्रेस में बंगाल के सभी प्रमुख नेताओं की उपस्थिति में 'वंदे मातरम्' का गायन हुआ। इस काँफ्रेंस की अध्यक्षता अब्दुल रसूल नामक प्रसिद्ध नेता ही कर रहे थे। स्पष्ट ही, एक बिंदु तक 'बंदे मातरम्' को भारत के सभी संप्रदायों ने राष्ट्र गीत के रूप में शिरोधार्य किया। 'वंदे मातरम्' सही अर्थों में हमारी राष्ट्रीय एकता का प्रतीक बन गया। बंग भंग विरोधी स्वदेशी आंदोलन में 'वंदे मातरम्' को युद्ध मंत्र बना दिया। कहा जाता है कि ''जब शब्द के साथ श्रद्धा, तप और बलिदान का भाव जुड़ जाता है तो वह मंत्र शक्ति बन जाता है।'' 'वंदे मातरम्' राष्ट्रभक्तों के लिए प्रेरणा और ब्रिटिश सरकार के लिए भय का कारण बन गया। बंगाल के छात्र कक्षाओं में, सड़कों पर 'वंदे मातरम्' का घोष करते तो ब्रिटिश सरकार डर जाती। कुख्यात कार्यालय सर्कुलर जारी करके 'वंदे मातरम्' के घोष पर प्रतिबंध लगा दिया। हज़ारों छात्र विद्यालयों से निकाल दिए गए। 'वंदे मातरम्' का मंत्र बंगाल से बाहर निकलकर पूरे भारत में गूँजने लगा। नागपुर में डॉ० हेडगेवार को 'वंदे मातरम्' कहने के अपराध में स्कूल से निकाल दिया गया।

दक्षिण में कवि सुब्रह्मण्यम भारती ने 'वंदे मातरम्' को लोकप्रिय बना दिया। कोलकाता में विपिनचंद्र पाल और अरविंद घोष ने मिलकर वंदे मातरम् नामक अँग्रेज़ी दैनिक प्रारंभ किया, जो प्रखर राष्ट्रीयता का उद्घोष मानकर देश-विदेश में पढ़ा जाने लगा। खुदी राम बोस, प्रफुल्ल चाली, अशफ़ाउल्लाह ख़ाँ जैसे अनेक युवा क्रांतिकारी 'वंदे मातरम्' का घोष करते हुए फाँसी के फंदे पर चढ़ गए। 'वंदे मातरम्' अपने भीतर भारत के राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास समेटे है। इसके पीछे त्याग और साहस की रोमांचकारी गाथाएँ छुपी हैं।

'वंदे मातरम्' के गायन पर पहली बार आपत्ति उठी 1923 में काँग्रेस के काकानाड़ी अधिवेशन में जब उस वर्ष के काँग्रेस अध्यक्ष मोहम्मद अली उस मंच से उठकर चले गए जब देश के श्रेष्ठ गायक पं० विष्णु दिगंबर पलुसकर ने काँग्रेस परंपरा का पालन करते हुए 'वंदे मातरम्' का गायन प्रारंभ किया। उस समय भी मोहम्मद अली का तर्क था कि इस्लाम मे संगीत के लिए कोई जगह नहीं है। 'वंदे मातरम्' का असली विरोध प्रारंभ हुआ 1937 के मुस्लिम लीग के लखनऊ अधिवेशन में जब मिस्टर जिन्ना ने सात प्रांतों में काँग्रेसी सरकारों को 'हिंदू राज' और गाँधीजी को हिंदू पुनरुत्थानवादी घोषित करते हुए एक प्रस्ताव पारित करके मुसलमानों से 'वंदे मातरम्' का वहिष्कार करने की अपील की। इस वहिष्कार को रोकने के लिए काँग्रेस ने एक उच्च स्तरीय समिति द्वारा 'वंदे मातरम्' के प्रथम दो चरणों को राष्ट्र गीत के रूप में मान्यता प्रदान की, किंतु इससे मिस्टर जिन्ना का पृथकतावादी अभियान रुका नहीं, आगे बढ़ता रहा जिसकी परिणति 1947 के भारत विभाजन में हुई।

क्या यह चिंता की बात नहीं कि विभाजन का मूल्य चुकाने के बाद भी भारतीय मुस्लिम नेतृत्व का एक वर्ग इस पृथकतावादी मानसिकता से बाहर नहीं निकल पा रहा है और समय-समय पर 'वंदे मातरम्' राष्ट्र गीत का विरोध करता है, वहिष्कार करता है। आख़िर केंद्रीय मानव संसाधन मंत्रालय की ओर से सभी राज्य सरकारों को भेजे गए इस प्रपत्र पर का उन्हें आपत्ति क्यों है कि सात सितंबर 2006 को सभी विद्यालयों में 'वंदे मातरम्' का सामूहिक गान हो? तर्क दिया जा रहा है कि 'वंदे मातरम्' इस्लाम विरोधी है, क्योंकि इस्लाम हमें 'अल्लाह' के अलावाऔर किसी के सामने सिर झुकाने, इजाज़त नहीं देता। उनसे यह सवाल पूछा जा सकता है कि कश्मीर का हज़रतबल मस्जिद में जो बाल रखा हुआ है और जिसकी पूजा की जाती है, क्या वह अल्लाह का बाल है?

काबा में हज के समय जिस काले पत्थर को चूमा जाता है, क्या वह मूर्ति पूजा नहीं है? निज़ामुद्दीन औलिया की दरगाह और अजमेर की दरगाह में जो चादर चढ़ाई जाती है, कसीदे गाए जाते हैं, क्या वह निराकार अल्लाह की पूजा है? राष्ट्र गान के वहिष्कार के पक्ष में लोकतंत्र और सेकुलरिज़्म की दुहाई दी जा रही है, यह सब तर्क खोखले हैं और पृथकतावादी मानसिकता के आवरण मात्र है। इस पृथकतावादी मानसिकता का ही परिणाम है कि जो भारतीय मुसलमान डकनमार्क में छपे कार्टूनों के विरूद्ध सड़कों पर उतर आते हैं, भारत में अतिथि बनकर आए अमेरिकी राष्ट्रपति के विरूद्ध मुंबई के पार्क में लाखों की संख्या में इकट्ठे होकर विरोध प्रदर्शन करते हैं। वही मुस्लिम नेता मुंबई बम बिस्फोटों में सैकड़ों देशवासियों की हत्या से क्षुब्ध होकर आतंकवाद के विरूद्ध प्रदर्शन तक नहीं करते।

लज्जा की बात यह है कि इस पृथकतावादी राष्ट्रविरोधी मनोवृति के विरूद्ध राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने की बजाए वोट लोलुप राजनीति उसके सामने घुटने टेक कर राष्ट्र के मनोबल को दुर्बल बना रहा है।

– राष्ट्रीय सहारा से साभार

ज़रूरी है लेखक का स्वाभिमान

○ डॉ नरेंद्र शर्मा 'कुसुम'

स्वाभिमान किसी भी व्यक्तित्व का प्रभविष्णु अंग है। व्यक्ति की तेजस्विता का भी वह एक महत्त्वपूर्ण घटक है। इसी दृष्टि से स्वाभिमान को सर्वोच्च गुण के रूप में स्वीकारा गया है। जहाँ तक लेखक के स्वाभिमान की बात है लेंखकीय अस्मिता के अखण्ड स्वरूप के लिए वह बहुत ज़रूरी है। महान लेखकों में स्वाभिमान एक मायने में बद्धरूढ़ होता है और वे उसे अक्षुण्ण रखने की हर संभव कोशिश करते हैं। पर यह ज़रूरी नहीं है कि सभी लेखक इसी श्रेणी के हों। देखा यहाँ तक गया है कि बहुत से लेखक तुच्छ लाभ के लिए अपने स्वाभिमान की बलि दे देते हैं। अपनी लेखकीय अस्मिता को नज़रअंदाज़ करके सत्तारूढ़ व्यक्ति या राजनीतिक दल को खुश करने के लिए अनपेक्षित स्तुतिगान करते हुए दिखाई देते हैं। सत्तारूढ़ व्यक्ति की प्रशंसा में 'चालीसा लिखना' या उसके स्तवन में काव्य-सृजन करना स्वाभिमानशून्य लेखक की पहचान है। चाटुकारिता या चरणवंदन के द्वारा ऐसा लेखक अपने तुच्छ स्वार्थं की पूर्ति करता है। ऐसा लेखक स्वाभिमान के राज-पथ को छोड़कर अवसरवादिता और पदलोलुपता या अर्थप्राप्ति की पगडंडियों को पकड़ता है। ज़ाहिर है इस क़वायद में उसकी लेखकीय क्षमता का अपव्यय और उसका लेखकीय क़द बौना तो होगा ही। सच को सच कहने की हिम्मत वह कहाँ से जुटा पाएगा? लेखन के बहुमान्य मूल्यों को वह कैसे बरक़रार रख पाएगा? अपने निजी स्वार्थों की पूर्ति में क्या वह 'सत्यम् शिवम् सुंदरम्' के सार्वभौमिक लेखकीय आदर्श को अक्षत रख पाएगा? ये सवाल लेखक के स्वाभिमान से जुड़े हुए हैं और यह बहुत ज़रूरी है कि हर लेखक ये विचार करे कि क्या वह छोटे-छोटे स्वार्थों को पूरा करने में आपने स्वाभिमान को शक्तिमती सत्ता के पास कहीं गिरवी तो नहीं रख रहा है? कहीं वह शक्तिपीठ की परिक्रमा करके अपने को नीचे तो नहीं गिरा रहा है? यह हर लेखक जानता है या उसे जानना चाहिए कि सत्ताएँ अस्थाई होती हैं, परिवर्तनशील होती हैं, राजनीतिप्रेरित होती हैं इसलिए उनका मुखापेक्षी होना एक स्वाभिमानी लेखक के लिए शोभा नहीं देता। क्यों न वह सम्यक् लेखन जैसी स्थाई प्रवृत्ति से जुड़े रह कर अपनी एक स्थाई पहचान बनाए जिससे कि उसका तथा लेखन, दोनों का भला हो।

पर इसका एक दूसरा पहलू भी क़ाबिले ग़ौर है। आज के भौतिकता बहुल समाज में क्या लेखक एक अलग 'द्वीप'

बनकर ज़िंदा रह सकता है? क्या वह वीतराग कुंभनदास की तरह कर सकता है कि 'संतन कौ कहा सीकरी सों काम'? क्या लेखक पवनभक्षी बनकर जी सकता है? आज हालात काफ़ी बदल गए हैं। एक लेखक को वह सभी कुछ चाहिए जो हर आदमी को चाहिए। वह भौतिकता से भी मुक्त नहीं हो सकता। मात्र लेखन उसकी जीविका का सहारा नहीं बन सकता और समाज में पद, सामाजिक पहचान, राजा का वरदहस्त किसे नहीं चाहिए? लेखक भी तो उसी समाज का एक अंग है। ऐसी स्थिति में लेखक से यह अपेक्षा करना कि वह त्याग, तपस्या और निस्पृहता के प्रतिमान स्थापित करेगा, बेमानी बात है। पर इस सबसे यह तो सिद्ध नहीं होता कि लेखक

उन सभी लोगों की जमात में शामिल हो जाए जो अपने स्वाभिमान को ताक़ में उठाकर रखते हैं और हर भौतिक स्वार्थपूर्ति के लिए कुछ भी करने को तैयार रहते हैं। लेखक का 'धर्म' और 'दायित्व' उसे अन्य लोगों से विशेष स्थान प्रदान करते हैं। लेखकीय वैशिष्ट्य और उसकी लोकमंगल के प्रति प्रतिबद्धता महीयसी लेखन परंपरा का एक अभिन्न अंग रही है। इस परंपरा का निर्वाह होता रहा है और स्वाभिमानी लेखकों ने इस परंपरा को आगे बढ़ाया है। इससे लेखन को मूल्यधर्मिता के पालन में मदद मिली है। इसलिए आज भी यह निहायत ज़रूरी है कि लेखक को अपनी वरीयताएँ तय करनी चाहिए और अपने स्वाभिमान को बरक़रार रखते हुए अपनी लेखकीय अस्मिता का कभी भी अवमूल्यन नहीं होने देना चाहिए। यह भी कहा जा सकता है कि अब इस प्रकार की आदर्शवादिता अप्रासंगिक है और लेखक ही क्यों संन्यस्त रहे, वह भी क्यों अपने को पद या अन्य लाभों से वंचित रखे। यह बात अलग है कि यह सब उसे स्वाभिमान की क़ीमत चुकाने पर ही क्यों न मिले। **अब ऐसी स्थिति में हर लेखक को स्वयं तय करना है कि वह या तो भीड़ का एक गुमनाम हिस्सा बन जाए या भीड़ से अलग अपने स्वाभिमान की छाया में बैठकर चीरस्थाई लेखन-कर्म में प्रवृत्त हो।** यह लेखक का निजी मामला है कि वह कह सकता है कि :

गुज़ार लूँगा अँधेरे में ज़िंदगी लेकिन,
दीया किसी से न मागूँगा रौशनी के लिए।

संपर्क : पथ सं॰-2, जवाहर नगर, जयपुर - 302004, राजस्थान

❋❋❋

कबाड़ में सिमटी ज़िंदगी

○ कृष्ण कुमार राय

आस-पास की घनी बस्ती से विसर्जित मल-मूत्र और गंदा पानी इसी नाले से बहता हुआ आगे जाकर एक छोटी-सी नदी में जाकर गिरता था। साँस रोककर नाक दबाए बिना नाले के पास से गुज़रना मुश्किल था। वहाँ की असहनीय दुर्गंध से नाक फटने लगती थी। बाँग्ला देश के कुछ विस्थापित हिंदू परिवार, जो वहाँ के बहुसंख्यकों के ज़ुल्म और अत्याचार से त्रस्त हो, देश छोड़कर कई साल पहले भाग कर चोरी-छिपे भारत की सीमा में घुस आए, रोज़ी-रोटी और ठाँव की तलाश में अनेक नगरों और क़स्बों की ख़ाक छानते अब इस शहर में आ पहुँचे थे। उनकी स्थिति भिखायियों से भी बदतर हो चुकी थी। ऐसी समस्याओं के प्रति सरकार की संवेदनहीनता और उपेक्षात्मक रवैया तो सर्वविदित है। न उन्हें इस समस्या से कुछ लेना-देना था और न इसके समाधान की दिशा में कुछ सोचने की फ़ुर्सत थी। इन निराश्रित विस्थापितों को उनके भाग्य भरोसे दर-दर की ठोकरें खाने और अपनी मंज़िल स्वयं तलाशने के लिए छोड़ दिया गया था। जिस गली-कूचे या मुहल्ले-टोले में उनका पेर पड़ता, वहाँ के लोग दुत्कारकर उन्हें भगा देते। उनकी पीड़ा और दु:ख-दर्द को समझनेवाला कोई न था। उन्हें कोई काम देना और बदले में दान के रूप में ही सही, कुछ आर्थिक सहयोग देना तो दूर रहा, हृदयहीन शहरी जमात उन्हें लुच्चा-बदमाश, उचक्का या गिरहकट समझ कर एक-दो दिन से ज़्यादा कहीं टिकने न देता था। जीविका का कोई साधन तलाशने से पहले उन्हें कहीं पैर टिकाने को ठिकाना मिलना तो ज़रूरी था और ऐसे ही किसी उपेक्षित स्थान की तलाश में भटकते वे इस गंदे नाले के किनारे आ पहुँचे थे। यहाँ की नारकीय स्थिति के चलते कोई इधर झाँकने का नाम न लेता था। स्थान बिल्कुल सुनसान और वीरान था। दिन में कभी-कभी आवारा कुत्तों सूअरों के झ़ाण्डों तथा रात में गीदड़ों की सिवाय कोई इंसान का पूत वहाँ नज़र नहीं आता था, यहाँ तक की पास में स्थित धोबियों की बस्ती के गदहे भी इधर नहीं फटकते थे। इंसानी बस्ती के सर्वथा अनुपयुक्त इस गंदी जगह से नाक-भौं सिकोड़कर यदि ये विस्थपित ख़ानाबदोश परिवार भी भाग खड़े होते तो फिर शायद इस सघन आबादीवाले शहर में पनाह लेने का कोई ठिकाना उन्हें नहीं मिलता। अत: उस नरक में उगे कुछ झाड़-झंखाड़ों, पेड़-पौधों, कँटीली झाड़ियों और बबूल के पेड़ों की नाम मात्र छाँव को ही उन्होंने अपना ठाँव बनाकर डेरा डाल दिया। देखते ही देखते वहाँ दर्जनों छोटी-छोटी झुग्गियाँ अस्तित्त्व में आ गई। आस-पास कुछ साफ़-सफ़ाई भी कर दी गई।

इन विस्थापितों को अब पैर टिकाने

के लिए ऐसा ठिकाना मिल गया था जहाँ से खदेड़े जाने का तत्काल कोई ख़तरा नहीं था। कुछ दिनों तक तो इन परिवारों की औरतों और बच्चे सुबह से ही नगर में भिक्षाटन के लिए निकल जाते और वयस्क पुरुष कुद भी काम की तलाश में गली-गली की ठोकरें खाते फिरते, किंतु तन-मन से टूटे हुए इन व्यक्तियों को लोगों की घोर उपेक्षा की सिवाय कुछ भी हासिल नहीं हुआ। उनका जीवन कटना दूभर हो गया। आख़िरकार मरता क्या न करता। अंतिम विकल्प के रूप में अपराध-जगत की ओर क़दम बढ़ाने से पहले उनकी नज़र शहर की गली-कूचों, नाके-नुक्कड़ों पर यत्र-तत्र बिखरे कूड़े-कबाड़ और नगर की बाहरी सीमा पार स्थित उन बड़े-बड़े गड्ढ़ों या नदियों के तीरों पर जा टिकी जहाँ नगरपालिका की कुड़ा गाड़ियों द्वारा वर्षों से गिराए जा रहे कूड़े-कचड़े का अंबार लग चुका था। इस गंदगी में भी उन्हें रोज़ी की कुछ संभावना नज़र आई। सालों से देश के बड़े-बड़े शहरों और क़स्बों की ख़ाक छानते उन्होंने देखा था कि कब़ाड़ से कितने ही छोटे-छोटे उद्योग पनप और फल-फूल रहे हैं। पालीथीन की पुरानी थैलियों को गलाकर नई थैलियाँ तैयार की जाती हैं, दफ़्ती और गत्तों के छोटे-मोटे टुकड़ों की लुगदी बनाकर उनसे कार्डबोड या पैकिंग के डबबे तैयार किए जाते हैं, टूटे-फूटे प्लास्टिक के सामानों को गलाकर उनसे तरह-तरह के खिलोने तथा अन्य सामान बनाए जाते हैं, काँच के टूकड़ों को गलाकर छोटी-बड़ी शीशियाँ तैयार की जाती हैं और लोहे, टीन या अन्य धातुओं के टूटे-फूटे और जंग लगे टुकड़ों से ही अच्छी कमाई हो जाती है। इन निष्प्रयोज्य सामानों की आपूर्ति कल-कारख़ानों को बड़े-बड़े कबाड़ियों द्वारा की जाती है। कबाड़ के ये बड़े व्यापारी दरवाज़े-दरवाज़े फेरी लगाकर ख़रीद करनेवाले छोटे कबाड़ियों या दिनभर गली-कूचों और कबाड़ख़ानों से बीन-बटोरकर कबाड़ इकट्ठा करनेवाली घुमंतू औरतों, बच्चों या व्यस्कों से पानी के भाव कबाड़ ख़रीदकर उसका भण्डारन करते हैं और फिर बिचौलिए की भूमिका निभाते हैं। इसी कबाड़ के धंधे से ये बड़े कबाड़ी ख़ूब फल-फूल रहे थे। कितनों की तो बड़ी-बड़ी कोठियाँ बन गई थीं। पिछले कुछ समय से इन विस्थपित परिवारों के लोग भी कबाड़ बीन-बेचकर अपना पेट पालने लगे थे।

गंदे नाले के किनारे बसी इन्हीं झुग्गियों में से एक में रहता था चार प्राणियों का एक छोटा-सा परिवार। एक अधेड़ औरत, बारह और ग्यारह साल की दो मरियल-सी लड़कियाँ और उन्हीं दोनों जैसा एक नौ साल का नैनिहाल। बड़ी लड़की जनम से कानी थी और उसी के अनुरूप नाम भी पड़ गया था कनिया। दूसरी लड़की के दाहिने पैर में जन्मजात विकृति थी और वह भचककर चलती थी। लिहाज़ वह भचकनिया बन गई। छोटा

लड़का मंटू अंग-भंग का शिकार तो नहीं था, लेकिन शरीर में हाड़ की सिवाय माँस कहीं नज़र नहीं आता था। अधेड़ माँ मनिया तन से तो टंच थी लेकिल मन से चंट ही नहीं निर्मोही और क्रूर भी थी। कबाड़ की ज़िंदगी ने उसकी अपनी ज़िंदगी को भी कबाड़ कर डाला था। न दिल में ममता रह गई थी और न दिमाग़ में संवेदनशीलता। सब कुछ जैसे पत्थर बन चुका था। परिवार के इन सदस्यों का असली नाम क्या था, यह तो किसी को पता नहीं। विस्थापितों की उस छोटी-सी बस्ती के लोग उन्हें इन्हीं प्रचलित नामों से जानते थे। मनिया का आदमी बँग्ला देश से पलायन के बाद अपने परिवार के साथ कई वर्षों तक जगह-जगह की ठोकरें खाता रहा और इसी दौरान एक रात सर्प-दंश का शिकार होकर दुनिया से कूच कर गया था। उसके बाद बीबी और तीनों बच्चे बिल्कुल बेसहारा और अनाथ हो गए, लेकिन मनिया ने विस्थापितों के उस काफ़िले का साथ नहीं छोड़ा और उन्हीं के साथ चक्कर काटती यहाँ आ पहुँची थी। एक दिन मंटू सात बजे तक अलसाया हुआ ज़मीन पर पड़ा था। मनिया, कनिया और भचकनिया तीनों अपनी-अपनी प्लास्टिक की बोरियाँ पीठ पर लटकाए अपने नित्य के धंधे पर जाने को तैयार थीं। मनिया ने बेरहमी के साथ मंटू का कान पकड़कर खींचा और झन्नाटेदार चाँटे रसीद कर झल्लाती हुई बोली, ''ओ लौंडे! काम पर नहीं जाना है क्या? सूरज सिर पर चढ़ आया, तू अभी तक पड़ा है। रात को खाएगा क्या?''

अचानक मंटू के शरीर में गर्मी आ गई। तिलमिलाकर आँखें मलता हुआ उठ खड़ा हुआ। रात का बचा हुआ बासी भात माँ और दोनों बेटियाँ मिल कर चट कर चुकी थीं। जागता रहता तो शायद मंटू को भी कुछ मिल जाता। अब झुग्गी में खाने के लिए कुछ भी न था। मंटू कुछ देर तक चुप-चाप पड़ा महतारी का मुँह ताकता रहा। मनिया ने जब उसके चुतड़ पर फिर एक सोटा जमाया तो वह भी फौरन अपना थैला उठाकर चलने को तैयार हो गया। चारों झुग्गी से एक साथ बाहर निकले, लेकिन थोड़ा आगे जाकर चार दिशाओं में बँट गए। मंटू सबसे छोटा था। वह आस-पास की ही बस्तियों की ओर निकल जाता था। वहीं की गलियों और नुक्कड़ों पर बिखरे कुड़े-कतवार से मतलब की चीज़ें बीनकर अपनी झोली में डालता जाता था। कुड़े के बड़े-बड़े अंबारों को वह अपने सोटे से कुरेद-कुरेदकद उसमें से मसरफ़ की चीज़ें ढूँढ़ता फिरता। बस्ती की एक बंद गली के नुक्कड़वाले बड़े मकान में एक ठाकुर साहब रहते थे। सत्तर पार के बुज़ुर्ग इंसान थे। रोज़ तड़के अपनी छड़ी लेकर सेर के लिए निकल जाते जब लौटते तो प्राय: उनकी नज़र सड़क के कूड़े-कबाड़ से पालीथिन की थैलियाँ, प्लास्टिक के टूटे-फूटे टुकड़े, शीशियाँ, दफ़्ती-गत्ते आदि समान बीनकर अपने थैले में भरते इस फटेहाल मैले-कुचैले छोकरे पर पड़ती थी। आज जब ठाकुर साहब सैर से लौटकर अपने मकान के गेट के पास पहुँचे तो देखा कि नुक्कड़ के कबाड़ख़ाने के पास पेड़ के नीचे वही छोकरा ज़मीन पर पड़ा हुआ है। उन्होंने पास जाकर पूछा, ''बेटा! इस कबाड़ के ढेर के पास क्यों पड़े हो?'' छोकरे ने ज़रा चैतन्य होकर ठाकुर साहब की ओर देखा और डरते-डरते बोला, ''अभी चला जाता हूँ दादा जी। तबीयत ठीक नहीं है। झुग्गी में पड़ा था तो माँ ने चाँटा मारकर बाहर कर दिया। आज कुछ खाने को भी नहीं मिला। चला नहीं जाता, पेड़ की छाया देखकर थोड़ी देर पड़ गया था।''

ठाकुर साहब बड़े धर्मनिष्ठ और दयालु इंसान थे। छोकरे को अपने साथ घर ले आए और रात की बची दो रोटियाँ और एक अचार का टुकड़ा लाकर उसे खाने को दिया। भूखा छोकरा रोटियाँ लेकर चबाने लगा, लेकिन बासी-सूखी रोटियाँ गले में अँटक रही थीं। छोकरा गिड़गिड़ाता हुआ बोला, ''दादा जी, हमलोग भात खाते हैं। थोड़ा-सा पानी दिलवा दीजिए तो उसी में डुबोकर रोटी खा लूँगा।'' छोकरे की बात सुनकर ठाकुर साहब का ह्रदय द्रवित हो उठा उन्होंने पानी के बदले आधी ग्लास चाय लाकर छोकरे को दी तो उसी में रोटी डुबो-डुबोकर वह जल्दी-जल्दी खाने लगा। पेट में कुछ पड़ने के बाद उसकी जान में जान आई और वह फिर अपना थैला पीठ पर लटकाकर अपने धंधे पर जाने को तैयार हो गया। ठाकुर साहब ने उसका नाम पूछा तो उसने मंटू बतलाया। ठाकुर साहब ने जिज्ञासावश पूछा, ''तुम रहते कहाँ हो मंटू?''

''दादा जी बस्ती के बाहरी तरफ जो नाला है, उसी के किनारे हमलोगें की झुग्गी है।'' ठाकुर साहब ने माथा सिकोड़कर आश्चर्य से कहा, ''वह तो निहायत गंदी जगह है। वहाँ तो दिन भर सूअर लोटते रहते हैं। उस गंदे नाले के पास तुमलोग कैसे रहते हो?''

क्या किया जाए दादा जी, और कहीं कोई टिकने नहीं देता। कम से कम वहाँ से खदेड़नेवाला तो कोई नहीं। मजबूर होकर हमलोगें ने वहीं डेरा डाल दिया है।''

''मंटू! तुम सारा दिन कबाड़ के अंबार को कुरेदते और छेटी-छोटी चीज़ें बीनते-बटोरते रहते हो। यहाँ बस्ती की पाठशाला में आकर पढ़ाई क्यों नहीं करते? इसमें कोई पैसा नहीं लगता। किताब कापी मुफ़्त मिलती है और दोपहर का खाना भी मिलता है।''

''दादा जी! पेट का सवाल है। हम पढ़कर क्या करेगे? सारा दिन बीन-बटोरकर यदि थैला भरकर न ले जाऊँ तो माँ मार-मारकर खलड़ी उधेड़ डालेगी। इसीलिए गली-गली घूमकर कबाड़ बीनता हूँ और अपना पेट पालता हूँ।''

ठाकुर साहब को छोकरे के हाल पर बड़ा तरस आया। बोले, ''मंटू! तुम यहीं मेरे घर रहा करो। मैं तुम्हें पहनने को कपड़े दूँगा। दोनों जून खाना भी मिलेगा। घर-बाहर की साफ-सफाई और छोटे-मोटे काम करते रहना। पेड़-पौधों की सिंचाई भी करना।''

''ना, ना दादा जी! में यहाँ नहीं रह सकता। माँ को पता चल गया तो आकर घसीट ले जाएगी और पीट-पीटकर भर्ता बना देगी। मुझे अपने काम पर जाने दीजिए दादा जी। आज बहुत देर हो गई है। देखना है थैला भर भी पाता है या नहीं।''

''मंटू! तुम तो रोज़ इधर आते हो, में तुमको एक-दो दिन का मौक़ा देता हूँ। अपनी माँ से भी पूछना। अगर उसे एतराज न हो तो सोचकर मुझे फिर बतलाना। मै तुम्हारी ही भलाई के लिए कह रहा हूँ मंटू।

वैसे तुम जब भी इधर आओ मेरे दरवाज़े पर ज़रूर आ जाया करो। तुम्हें कुछ खाने को मिल जाया करेगा और बच्चों के पुराने कपड़े भी दिलवा दूँगा।'' बात टालने की गर्ज़ से छोकरे ने कहा, ''ठीक है दादा जी! अब मैं जा रहा हूँ। थैला अभी बिल्कुल खाली है। लौटने से पहले इसे भरना है।'' इतना कहता हुआ मंटू अपना थैला लटकाकर बाहर निकल गया और अपनी नित्य की राह पर चलता रहा। आज काफी दिन चढ़ आने से घुमंतु औरतें और बच्चे अधिकतर काम का कबाड़ बीन-बटोरकर जा चुके थे। मंटू शाम चार बजे तक चक्कर काटता रहा, लेकिन थैला आधा से ज़्यादा नहीं भर पाया, माँ की मार के डार से उसके पैर जैसे आगे नहीं बढ़ रहे थे। वापसी में जब वह फिर ठाकुर साहब वाली बंद गली के नुक्कड़ के पास से गुज़र रहा था तो देखा कि दिनभर में वहाँ कुछ और कूड़े-कतवार का अंबार लग गया है। वह अपने सोटे से उसे कुरेदकर अपने काम की चीज़े ढूँढ़ने लगा। तभी अचानक एक ज़ोरदार धमाका हुआ और देखते ही देखते उसके शरीर के कुछ अंग उड़ गए और अतड़ियाँ निकलकर लटक गईं। पलक झपकते मंटू वहीं कूड़े के ढेर के पास ढेर हो गया। शायद किसी आतंकवादी या शरारती तत्त्व ने ज़िंदा बम कूड़े के ढेर में छुपाकर रख दिया था जो मंटू के लिए प्राणघातक बन गया था। धमाका इतना तेज़ था कि सुनकर ठाकुर साहब भी अपने अहाते से बाहर निकल आए। देखा तो कूड़े के ढेर के पास वही घुमंतू छोकरा ढेर होकर पड़ा था।

यह दर्दनाक दृश्य देख कर ठाकुर साहब स्तब्ध रह गए और उनके दयालु हृदय को इतना आघात पहुँचा कि अनायास ही उनकी आँखों में आँसू छलछला आए। आज सबेरे ही तो उन्होंने उस छोकरे को अपने घर में शरण देने की बात कही थी, लेकिन विधि का विधान कौन जानता है। कुछ ही घंटों के अंदर उसे तो अपने नारकीय जीवन से ही सदैव के लिए मुक्ति मिल गई थी। पेट की पीड़ा और माँ के सोटे का भय उसे निगल गया। ठाकुर साहब ने तुरत ड्राइवर को बुलाकर अपनी जीप बाहर निकलवाई और मंटू की क्षत-विक्षत लाश तथा उसके अधभरे कबाड़ के थैले को उसमें लदवाया। फिर वह स्वयं भी ड्राइवर के साथ जीप में बैठकर बस्ती की सीमा के पार गंदे नाले के पास बसी विस्थापितों की बस्ती में जा पहुँचे। वहाँ की एक घुमंतू औरत को मृत छोकरे की लाश दिखलाई तो उसने मनिया की झुग्गी की तरफ इशारा करते हुए लाश वहाँ ले जाने को कहा। ठाकुर साहब ने मनिया की झुग्गी के सामने पहुँचकर बच्चे का अंग-भंग शव और उसका थैला उतरवाया और कूड़े के ढेर में छिपे बम के विस्फोट से हुए दर्दनाक

हादसे की बात मनिया को बतलाई। मनिया ने एक बार भर आँसू बेटे की लाश को देखा, लेकिन माथे पर बल नहीं पड़ा। इतनी ही देर में क्षेत्र की गंदगी और वहाँ फैली दुर्गंध ने ठाकुर साहब को इतना बेचैन कर दिया कि पल भर भी वहाँ रुकना उनके लिए असहाय हो गया। उन्होंने जेब से एक सौ रुपये का एक नोट निकालकर मनिया को थमाया और नाक दबाए जीप में सवार होकर वहाँ से चलते बने। मनिया ने एक बार रोष भरी नज़रों से मंटू के अधभरे कबाड़ के थैले को देखा और उठाकर झुग्गी के अंदर लोका दिया। फिर वह मृत बेटे की टाँग पकड़कर घसीटती हुई उसे गंदे नाले के किनारे ले गई और धीरे से उसी में लुढ़का दिया।

अभी मनिया लौटकर अपनी झुग्गी के पास आई ही थी कि उसने देखा कि पड़ोस की एक अन्य विस्थापित औरत भगीरथी एक सगड़ी पर भचकनियाँ की भी लाश लदवाए आ पहुँची। मनिया पर नज़र पड़ते ही वह बोली, ''ओ री मनिया! आज तो गजब हो गया। जब मैं अपना कबार बेचकर लौट रही थी तो मेरे देखते-देखते सड़क के किनारे खड़ा एक बिगड़ैल साँढ़ भचकनिया का लाल रंग का लंबा फ्रॉक, पीठ पर लदा भारी-भरकम लदा थैला और भचक-भचककर उसका चलना देख कर सहसा भड़क उठा और अपनी पैनी सींगों से उठकर उसे ऐसी पटखनी दी कि वह फिर उठ न सकी। मैंने पास जाकर देखा तो भचकनिया दम तोड़ चुकी थी। मैंने सोंचा कि उसकी लाश और थैला सगड़ी पर लदवाकर साथ लेती चलूँ, वरना वहाँ सड़क पर पड़े-पड़े उसकी न जाने क्या दुर्गति होगी। सगड़ीवाला इतना नेक है कि उसने पैसा भी नहीं लिया।''

भगीरथी की बातें सुनकर मनिया ने एक बार उदास नज़रों से भचकनिया की लाश को घूरकर देखा और आहें भरते हुए माथा पीट लिया। फिर बिना कुछ बोले उसकी भी टँगरी पकड़कर घसीटती मनिया हुई उसे ठिकाने लगाने वैतरणी रूपी गंदे नाले की ओर चल पड़ी। आज का दिन मनिया के लिए निहायत मनहूस साबित हुआ था। उसके छोटे से परिवार के चार कामकाजी हाथ कट चुके थे, किंतु इतना संतोष ज़रूर था कि उसी के साथ दो पेट कम हो गए थे। कनिया को अपनी छोटी बहन और भाई की अप्रत्याशित मौत का ग़म तो कम था, इस बात की चिंता उसे अधिक सता रही थी कि क्रूर माँ की सारी डाँट-फटकार और मार अब उसे अकेले ही झेलनी पड़ेगी। उधर हृदयवहीन मनिया की निरस ज़िंदगी पर कोई ख़ास फ़र्क नहीं पड़ा था। दो मासूम ज़िंदगियाँ कबाड़ की भेंट चढ़ जाने के बाद भी अब भी माँ-बेटी के जीवन का आधार बना हुआ था, शायद किसी दिन उनके भी कबाड़ में समाहित हो जाने की प्रतीक्षा में।

संपर्क : एस॰ 2/51-ए॰
अर्दली बाज़ार,
अधिकारी हॉस्टल के पास,
वाराणसी-221003

योद्धा

○ डॉ॰ शाहिद जमील

सात दिनों के अंदर 'सड़क निर्माण घोटाला' का भौतिक जाँच-प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का आदेश प्राप्त हुआ तो मेरी परेशानी बढ़ गई। वक्त कम था और मामला नाज़ुक। मुझे चिंतित देखकर पी॰ए॰ साहब ने बताया कि बिंदेश्वरी शर्मा वहाँ जा चुके हैं। मैंने उन्हें फ़ौरन तलब किया। शर्मा जी भागते हुए आए और शालीनता से पूछा,

''सर! आपने? ...''

''बैठ जाइए शर्मा जी ... दरअसल मुझे गोकुलडीह प्रखण्ड जाना है, इसी के मुतअल्लिक़ जानकारी चाहिए ...''

मैंने कहा।

''सर! मेरे विचार से तो वन क्रांति एक्सप्रेस मुनासिब ट्रेन है। रात के सात पचपन में दिल्ली से आती है। उसी से जाइए सर! तिलकामाँझी जंक्शन पर उतर कर वहाँ से लोकल ट्रेन पकड़ के चण्डी तक चले जाइएगा। चण्डी से गोकुलडीह एक बस आती-जाती है। पहाड़ियों से घिरे गाँवों के बीच एक सुंदर श्याम बंगला है। इसी में गोकुलडीह प्रखण्ड है।

''आप इसी ट्रेन से गए थे? ...''

मैंने यूँ ही पूछ लिया।

''जी सर! ... मुझे आरक्षण नहीं मिला था ... फिर भी ...''

''फिर भी क्या ...?''

''बहुत आराम से गए थे ...''

''वह कैसे ...?''

''जब किसी तरह आरक्षण नहीं मिला तो सोचा जनरल बोगी में ही चले जाएँगे। निकला तो था समय से पहले लेकिन रिक्शावाले ने अंबेदकर चौक पर ट्रॉफिक पुलिस को दो रुपया देने से इंकार कर दिया तो उसने भी मेन रोड से जाने पर रोक लगा दी। घुमा-फिराकर पहुँचाने में उस युवक ने देर कर दी। किसी तरह प्लेटफारम टिकट कटाकर अंदर चला गया। ट्रेन लेट नहीं होती तो छूट ही जाती सर! गाड़ी आई तो अकेली जंनरल बोगी में पहले से ही तिल धरने की जगह नहीं थी। पूरी शक्ति लगाकर अंदर घुसने में हैण्डिल टूटकर सूटकेस प्लेटफारम पर जा गिरा और लॉक भी खुल गया। मैंने कई लोगों से गिड़गिड़कर सूटकेस माँगा लेकिन कोई टस से मस नहीं हुआ। एक कुली तो उसी पर पाँव रखकर आगे बढ़ गया। मजबूरन उतरना पड़ा। टूटे सूटकेस के साथ घुसना असंभव था। निराश होकर स्लीपर बोगी के मुसाफिरों को हसरत से देखने लगा ... कृष्ण कन्हैया की लीला, गाड़ी खुलने से एक मिनट पहले कंडक्टर मेरे करीब आकर फुसफुसाया,

''जगह नहीं मिली तो अंदर आ जाओ ...''

इजाजत मिलते ही बोगी में घुसकर ट्वायलेट के पास खड़ा हो गया। लगभग आधे घंटे के बाद वह आया और पूछा,

''कहाँ जाना है ...? टिकट है ना ...?''

''जाना तो तिलकामाँझी तक है ... लेकिन मेरे पास प्लेटफारम टिकस है ... रिक्शावाले ने ...''

वह राम कहानी सुनने के मूड में नहीं था। मैं चुप हो गया। मुझे लगा आदमी व्यावहारिक है। आम खाने से मतलब रखता है।

''आप 19 नंबर पर चले जाइए ...''

उसने चार्ट देखकर कहा।

मैं जाने लगा तो वह कँधे पर हाथ रखकर धीरे से बोला,

''सौ रुपये ...''

''मैंने सौ का नोट फौरन पकड़ा दिया कि वह बर्थ देकर भी आधा किराया माँग रहा था ...''

सफ़र की पूरी कहानी सुनने की कल्पना से भयभीत हो कर मैंने फ़ौरन कहा,

''शर्मा जी! मुझे सी॰एस॰ कोटा से आरक्षण मिल जाएगा ... जानने लायक़ अगर कोई ख़ास बात हो तो सिर्फ़ वही बता दिजीए ...''

''हाँ सर! मौका निकाल कर आप उस जामुन के पेड़ को जरूर देख लिजिएगा, अभी सीजन है ... उजले जामुन को जरूर चखिएगा ...''

''उजला जामुन ...?''

मेरी आँखें हैरत से फैल गईं।

शर्मा जी बच्चों की तरह चहक कर गर्दन हिलाते हुए बोले,

''जी सर! मुझे भी विश्वास नहीं हुआ था लेकिन इसमें सच्चाई है। संयोगवश जब मैं गया था तो जामुन का सीजन नहीं था ... सिर्फ पेड़ और समाधि देख सका था ... सर! उस पेड़ को लोग 'प्रेम-साक्षी' कहते हैं ... एक दंत-कथा भी मशहूर है ... एक आशिक मिजाज अँग्रेज अधिकारी ने श्यामली प्रेमिका के लिए 'श्याम बंगला' बनवाया था। सर्प-दंश से उसकी मौत हो गई तो आशिक ने भी जहर खा लिया था। बंगले के हाते में ही दोनों की संयुक्त समाधि है। पहली बरखी पर समाधि से सटे जामुन का एक पौधा नजर आया था। वही नन्हा पौधा अब एक विशाल वृक्ष है। पूरब और पश्चिम की ओर बाहें फैलाए इसकी दो बड़ी शाखाएँ हैं। परंतु पश्चिमी शाखा में उजला जामुन फलता है। लोगों का मत है, रंग-वंश के भेद-भाव को नकारता यह सच्चे प्रेम का प्रतीक है ... यह परंपरा भी चली आ रही है कि युगल प्रेमी अमावस की रात काले और उजले धागे लपेटते हुए एक

साथ उस पेड़ के सात फेरे लेते हुए एक दूसरे को प्रेम-विश्वास दिलाते और साथ जीने-मरने की कस्में खाते हैं ...''

''आप तो बहुत कुछ जानते हैं ... चलिए इत्मीनान हो गया ...''

इतना कहकर में उठ गया। चैंम्बर से निकलते वक़्त सोचा, शर्मा जी सचमुच बड़े गप्पी हैं। सुना है औरतों में ख़ासे मक़बूल हैं।

सफ़र का सामान रखते हुए कौसर का गुस्सा प्रकाष्ठा पर था। सरकार को बददुआएँ देकर भी उसका जी हल्का नहीं हुआ तो वह बड़बड़ाने लगी,

''जान-बूझकर जंगल में भेजा जा रहा है ... अब मैं इतनी भी भोली नहीं, ख़ूब समझती हूँ। आसाम और जम्मू-कश्मीर इलेक्शन में भी आप को जबरन भेजा गया था ... और बनिए लड़ाकू ... इतनी समझ नहीं, सीनियर से लड़ना, दीवार से सिर टकराना है ... दफ़्तर घर नहीं होता ... कारगर नुस्ख़ा, ख़ुशामद से ख़ुदा ख़ुश ... लेकिन मेरी सुनता ही कौन है? मंकुहा (विवाहिता) हूँ ना, बांदी (दाई) होती तो काम छोड़ने का ख़ौफ़ दिलाती ...''

बिजली चली गई तो हमेशा की तरह एलाने आम हुआ,

''जो जहाँ है, वहीं रहेगा ...''

मैं भी स्टैचू हो गया। अक्सर कप-गिलास मुझसे ही टूटे हैं। बिजली गुल होते ही आम तौर पर उसके गुस्से का पारा चढ़ जाता और कान चौकन्ने हो जाते हैं। कैंडिल जलाते ही उसे जीजा जी याद आ गए।

''एक नौशे भाई (जीजा जी) हैं। घर-बाहर के ताने-मेहने सुनकर भी बीवी-बच्चों को ख़ुश रखने में लगे रहते हैं ... कितनी चालाकी से अलग हुए। सारा इल्ज़ाम घरवालों पर लगा ... सिर्फ़ दो साल किराए के मकान में रहे और एक आलीशान मकान बनवा लिया। लाडली शहला ने एक वक़्त का खाना छोड़ा, दूसरे दिन कार की चाबी उसके हवाले कर दी गई ...''

ख़िलाफ़े मामूल बिजली फ़ौरन आ गई तो कौसर चुप हो गई। बेटियाँ आँगन से उठकर अपने कमरे में चली गईं। मैंने टहलकर कनखियों से देखा। कमरे में वह मुझे नज़र नहीं आई। जिज्ञासा बढ़ी कि आख़िर वह कहाँ है और कर क्या रही है? बाथरूम का दरवाज़ा आधा खुला था। बेआवाज़ क़दमों से चलकर किचन में झाँका। पाथेय रखते हुए वह ख़ुद से बातें कर रही थी,

''अब्बा जी ने ज़िद ठान ली थी वरना उन लोगों ने तो मुझे ही ... अपनी-अपनी क़िस्मत ... आपा (दीदी) कमशक्ल हो कर भी बाज़ी मार गईं ... सब्ज़ी के लिए भी चपरासी को पाँच सौ के नोट थमाती हैं ... शादी-बियाह में क़ीमती गिफ़्ट देकर किस अदा से कहतीं, ना बाबा ... मुझसे यह नहीं सुना जाएगा कि नाहीद ने भी सौ रुपये का लिफ़ाफ़ा पकड़ाया है ... कोई बाज़पुर्श (पूछताछ) करनेवाला भी नहीं इनसे। क्या किया है बीवी-बच्चों के लिए ...?''

मैं जवाब दे सकता था लेकिन उलटे पाँव लौट आया। एक चुप्पी हज़ार बला टालती है ... ऐसे मौक़ों पर अक्सर मैं ख़ामोशी की गुफ़ा में दुबक जाता हूँ। पहली झड़प में पराजित मुर्ग़े की तरह कभी रूबरू नहीं होता। विचार-दर्पण में अपना ही चेहरा अच्छा लगता है।

रात के सवा ग्यारह बजे चण्डी रेलवे स्टेशन पर उतरा। दो-चार मुसाफ़िरों के साथ डिब्बे से थोड़ी रोशनी भी प्लेटफ़ार्म पर उतर आई थी। क्षणिक प्रकाश का लाभ उठाते हुए स्टेशन मास्टर के कमरे में दाख़िल होकर मैंने वेटिंगरूम खोलने की गुज़ारिश की।

सरापे का जाएज़ा लेकर नौजवान स्टेशन मास्टर ने कहा,

''सर! आधी रात तो गुज़र चुकी है। अच्छा होगा यहीं आराम-कुर्सी पर लेटकर सुबह कर लें ... वैसे अगर आप चाहें तो ...''

बग़ैर कुछ कहे-सुने मैं आराम-कुर्सी पर लेट गया। दो-तीन मिनट तक गर्दन झुकाए वह कुछ दर्ज करता रहा, फिर उठा और पुश्त की रैक पर रखे थर्मस के साथ दो कप उठा लाया। एक कप चाय टेबुल पर छोड़कर दूसरा कप पेश करते हुए बोला,

''अगर साथ दें ... तो ... लुत्फ़ बढ़ जाएगा ...''

''जी शुक्रिया ...''

मैंने इंकार का रोड़ा नहीं उछाला।

''किसी ख़ास काम से ही आए होंगे ...?''

''जी ...'' बातों का सिलसिला ख़त्म करने की नीयत से कहा।

''मेरे लायक़ कोई ख़िदमत हो तो बिला तकल्लुफ़ कहिएगा ...''

मैं ख़ामोश रहना चाहता था। मुझे अपनी पहचान भी पोशीदा रखनी थी लेकिन ज़रूरत की कोख से ख़ुदग़र्ज़ी भी जन्म ले लेती है। मैंने इल्तजा की,

''बड़ी मेहरबानी होगी ... अगर आप बस के मुतअल्लिक़ ज़रूरी जानकारी दे सकें तो ...''

वह ख़ुश होकर बोला,

''बमभोले, सुबह आठ बजे आती और नौ बजे लौट जाती है और शाम पाँच बजे आकर छः बजे लौटती है। इस तरह दोनों तरफ़ से आने-जानेवालों को सुबह और शाम का वक़्त मिल जाता है। ये वक़्त ट्रेन से भी मेल खाता है। बस स्टैंड यहाँ से नज़र आता है। सड़क बहुत ख़राब है इसी सबब चालीस किलोमीटर के सफ़र में कम से कम दो घंटे लग ही जाते हैं ... टमटमवाले मुसाफ़िर की मजबूरी और उसकी हैसियत देखकर किराया माँगते हैं। टमटम से जाने की सलाह मैं आपको नहीं दूँगा ...''

इत्मीनान नसीब हुआ तो थका जिस्म गुथे हुए आटे की तरह ढीला पड़ने लगा। तीसरे पहर ने माँ की तरह बाहें फैला दी और मैं उनमें समा गया।

माल गाड़ी के खुलने की आवाज़ से नींद टूट गई। उसने मुस्कराकर सलाम किया। मेरे मुँह से अनायास ''वाअलैकुम अस्लाम'' निकल गया। मंद हवाओं से झील में पड़ती-बढ़ती तरंगों की तरह झेंप चेहरे पर फैलने लगी। उसका चेहरा कमल की तरह खिल गया।

''बहुत थके थे ... इसीलिए छोड़ दिया था ...'' उसने कहा।

आस्तीन के अंदर घुसी घड़ी निकाल कर देखने ही वाला था कि उसने कहा,

''अभी वक़्त है। वेटिंगरूम की सफ़ाई करा दी है ... ताज़ा चाय लाने गया है, वह आता ही होगा ... अब आप भी फ्रेश हो लें ...''

पाँव के नीचे से फिसल कर गिरा सूटकेस उठाते हुए मुझे एहसास हुआ, आदमी जन्मजात अहानिकारक होता है। इसीलिए वह बढ़े नाखुन काट लेता है। मज़हबी मुल्क

और ज़मीनो ज़ुबान से जुड़ी भावनाएँ स्वउत्पन्न पौधों की तरह दिल में उगतीं और ज़िंदा रहती हैं।

स्नान का इंतज़ाम ताज़ा था। फ़िनाईल की बू तेज़ थी। साबुन की टिकिया के साथ शैम्पू का छोटा पाऊच भी रखा था। छत के कोने झोल से भरे थे, जिनमें बड़े कीड़ों की खोखली लाशें झूल रही थीं। छिपकल्लियाँ घड़ियाल की तरह बेसुध थीं। ईंट घुसाकर रौशनदान को बंद कर दिया गया था। निकम्मे फ़लश के ऊपर बना घोंसला वीरान था। स्थाई बंद खिड़की पर अर्द्धजला आँसू बहाए ऊँगुली भर लंबा केंडिल सर कटे बुत की तरह खड़ा था। मोबिल के डिब्बे में भरा पानी रिस-रिसकर पेंदे से जा लगा था। मनचलों ने दीवारों पर कोयले और ईंट के टुकड़ों से इंसान और जानवर की संयुक्त अश्लील तस्वीरें बनाकर गंदे वाक्य भी अंकित कर दिए थे। किसी ने चित्रकार की माँ-बहन को गाली लिख दी थी। नहाने की बाल्टी घिनौनी, पानी मटमैला और जग की हैंडिल टूटी हई थी। शदीद कराहियत पैदा हुई तो गुसुल (स्नान) की ख़ाहिश ने दम तोड़ दिया।

स्टेशन मास्टर अख़बार पर नाश्ता सजाए प्रतीक्षारत था। कुर्सी पर बैठते ही उसने अख़बार मेरी जानिब कुछ ज़्यादा ही खिसका कर बोला,

''अम्माँ डाँट-डपटकर रखवा देती हैं ... बहन के हाथों का बना है। अब्बा के इंतक़ाल के बाद अम्माँ ने बावर्चीख़ाने में क़दम नहीं रखा ... लेकिन उनकी नाक बड़ी हस्सास (संवेदनशील) है। कहीं भी हों, हिदायात देती रहती हैं। अब मसाला तैयार हो गया है ... और भुनो गोश्त को ... पुलाव में अभी कन्नी होगी, देगची के डक्कन पर अँगारा रख दो ... वह गर्म मसालों का ख़ूब इस्तेमाल करवाती हैं। एक बार सालन में मज़ा कम होने की शिकायत पर अब्बा से नाराज़ होकर उन्होंने कहा था, खाने में लज़्ज़त मेवा-मसालों से ही बढ़ाई जाती है। छटाक भर-भर की पुड़ियों को महीने भर चलाना पड़ता है। महँगाई पर ख़ुदा की मार पड़े ... ग़रीब-गुरबा तो डाक्टर की सख़्त हिदायत पर मरीज़ को फल-दूध चखाते हैं ...''

कल्पना की बालकोनी पर कौसर आ खड़ी हुई। उसने भी बेसन का लड्डू और अण्डे का हलवा बनाया है। सब की पसंद-नापसंद का पूरा ख़्याल रखती है। बैगन सदफ़ (बड़ी बेटी) को पसंद है तो फ़लक (मंझली) को नापसंद, मैं भिंडी नहीं खाता तो अमास को गोश्त और अंडा चाहिए। बैगन के अलावा आलू की भांजी, भिंडी के साथ मूँग की दाल बनाकर समस्या का समाधान कर देती। अंडा ख़त्म होने से पहले ही याददहानी शुरू।

विगत रमज़ान की बात याद आ गई। बीस नवंबर को ईद थी। अगर पचीस-छब्बीस को पड़ती तो सरकार पेशगी तंख़ाह की घोषणा कर सकती थी। एक अन्य लोन की क़िस्त भी शुरू हो गई थी। काम चलाऊ ख़रीदारी की बात हो रही थी कि कौसर अपनी क़िस्मत को कोसने लगी। इस बार वह अगले वर्ष के आश्वासन पर भड़क उठी थी। सरकार की तरह मैं भी आश्वासन से काम निकालना चाहता था। स्थिति बिगड़ते देखकर मैं बाहर निकल गया कि बक-बोल लेने से उसका जी हल्का हो जाएगा।

उसे पता चल नहीं पाया था कि मैं फ़ौरन लौट कर अँधेरे कमरे में लेटा हुआ हूँ। मुझे ग़ैरमौजूद समझकर कह रही थी,

''मैं भी पागल हूँ। चाहती हूँ नौशे भाई जैसा बन जाएँ ...''

फिर बेटियों की ख़बर लेने लगी थी,

''कैसी हो तुम सब? सीधे-सादे बाप के ख़िलाफ़ सुनती रही ... तरस नहीं आया? चुप नहीं करा सकती थी ...?''

मीयादी बुख़ारवाले दिन भी अच्छे गुज़रे थे। काम-काज ठप। वह भौंरे की तरह बार-बार फेरा लगा जाती। कभी पेशानी पर, तो कभी बनियान के अंदर हाथ घुसाकर सीने पर रखे रहती। एक बार नज़रें बचाकर तपते गाल पर रुख़सार (गाल) रखकर कहा था, ''तवा की तरह गरम है ...''

फिर उसे ग़ुस्सा आ गया था,

''इंजन वाला (दूसरे को बैठाकर परीक्षा पास) डॉक्टर होगा या फिर कैप्सूल में ही सत्तू भरा है ...''

कौसर दवा अपने होथों से खिलाती है। वह पहले हाथ में पानी का भरा गिलास पकड़ाती। दवा मुँह में रखते ही बुलंद आवाज़ में ''काफ़ी अल्लाह साफ़ी अल्लाह'' (सेहतयाबी की दुआ) का जाप करने लगती ...

''आपने तो हलवा चखा ही नहीं ... इसी हफ़्ते का बना है ... माफ़ कीजिएगा ... मैं भी क्या-क्या बताने लगा ...''

स्टेशन मास्टर लज्जित नज़रों से देखते हुए बोला।

कौसर ओट में चली गई। मैंने सोचा,

''परदेशी का प्राण उसके देश में ही रह जाता है ...''

बस स्टैंड जाते वक़्त वह लगातार खड़ा रहा। नज़र मिलते ही हाथा हिला देता। अपनाइयत का जज़्बा धूप में शबनम की तरह चमकने लगता।

बस स्टैंड की भीड़ देखकर दिल की धड़कनें बढ़ गईं। पानवाले से पूछा तो मालूम हुआ, बस कल नहीं आई थी, बारात लेकर कहीं गई है। वक़्त काटने के लिए मैं टहलने लगा। एक बूढ़ी औरत झोला पकड़े बैठी थी। मुर्ग़ी झोले से बाहर सिर निकाले मुँह खोलकर ज़ोर-ज़ोर से साँस ले रही थी। एक लड़का बकरी का कान पकड़े उसे कटहल का पत्ता खिला रहा था। एक होटल के सामने दो-तीन कुत्ते खाते हुए लोगों को निवेदक नज़रों से देख रहे थे। उनमें एक ज़ख़्मी था। उसक. गर्दन का नासूर रिस रहा था। कीड़ों और मक्खियों से वह बेकल था। उसे कहीं भी ज़्यादा देर तक खड़ा रहने नहीं दिया जा रहा था। एक चाय दुकानदार ने उसके कूल्हे पर गर्म पानी डालकर उसे भगाया और एक बूढ़े ने लाठी दिखाकर दुत्कारा लेकिन वह फिर आ गया। यक़ीनन वह ज़्यादा भूका होगा। दुकानदार की पालतू बिल्ली टेबुल के नीचे टहल-टहलकर इत्मीनान से जूठन खा रही थी। गुल्लर के पेड़ के नीचे मजमा लगाए संपेड़ा, साँप और नेवले को लड़ने के लिए उक्सा रहा था। दोनों लड़ना नहीं चाहते थे लेकिन तमाशबीन लड़ाई देखने के लिए बेताब थे। टमटम में जुते मड़ियल और ज़ख़्मी घोड़े की गर्दन में झूलता तोबरा

ख़ाली हो चुका था। अब वे तोबरे से निजात पाने के लिए सिर झटक रहे थे ...

अचानक शोर बुलंद हुआ तो देखा धूल उड़ाती-रेंगती हुई बस आ रही है। स्टैण्ड लगने से पहले ही मुसाफ़िरों ने हल्ला बोल दिया। मैं दूर हटकर तमाशा देखने लगा लेकिन बस छूट जाने का ख़ौफ़ पैदा होते ही भीड़ चीरता और सूटकेस खींचता हुआ पीछे की ओर बढ़ने लगा। दौराने सफ़र आम तौर पर ख़ुदगर्ज़ी आम हो जाती है। मुसाफ़िर एक-दूसरे से आगे निकलना चाहते हैं। बस में पीछे जाने को ही आगे बढ़ना कहा जाता है, जिस तरह ''नग्नता'' फ़ैशन कहलाता है।

पिछले चक्के के ऊपर बने दोसीटा के क़रीब पहुँचा ही था कि एक ज़ोरदार धक्का खाकर उसी पर लुढ़क गया। सीट पर पहले से ही एक मैला-बदबूदार गमछा पड़ा था। मैंने उठकर आगे बढ़ने की हिमाक़त नहीं की।

बस का इंजन स्टार्ट छोड़कर ड्राइवर कूद गया था। बहुत देर बाद सीट संभालते ही उसने सरसरी जायज़ा लिया। गेट जाम देखकर वह बिगड़ गया। पहले हल्की-फुल्की बेअसर गालियों से ख़लासी की ख़बर ली। उसके बाद दो-चार मुसाफ़िरों को केबिन में एडजस्ट करके उसने शंकर भगवान को देखा। उनका चेहरा उदास और गर्द से भरा था। चिक्कट साफ़ी से धूल उड़ाकर उसने बासी माले को बदला और अगरबत्ती जलाकर मुँह खोले प्लाई उड में खोंस दिया।

अब वह सिगरेट के कश लगाते हुए एक्सीलेटर दबाकर छोड़ रहा था। अगरबत्ती का धुआँ नदी किनारे बँधे नाव की तरह कमर लचक़ाता हुआ छत को छू लेना चाहता था लेकिन किसी न किसी के खाँसने, छींकने, ज़ोर से साँस छोड़ने और मुँह पर हवा करने के सबब बल खाकर शीशे पर चिपकाए गणेश भगवान, साईं बाबा, काजोल, शाहरुख़, सचिन और सानिया के चरण-चेहरों को छू लेने की कोशिश करता। गेट पर लिखा था, ''लटक मत, पटक दूँगी। अंदर आ जा जगह दूँगी।''

ड्राइवर ने जब ज़ेर-ज़ेर से एक्सीलेटर दबाना शुरू किया तो हलचल पैदा हुई। धूल मिश्रित डीज़ल के बदबूदार काले धुएँ से दम घुटने लगा। गेट से सटे विधायक लिखे सीट पर बैठा युवक बायाँ हाथ और सिर बाहर निकाल कर ठीक उसी तरह बस को थपथपाने लगा, जिस तरह ख़लासी ड्राइवर को गाड़ी चलाने का इशारा करता है। मुसाफ़िरों को चढ़ाता ख़लासी लपका और उस युवक के हाथ को मरोड़ते हुए खिड़की के अंदर ठूँस दिया। कम उम्र, दुबले-पतले ख़लासी को किसी ने कुछ भी नहीं कहा। अवामी बेहिसी (संवेदनशून्यता) और सहिष्णुता देखकर एहसास हुआ कि शोषण, अधिकार हनन और अत्याचार व अन्याय के विरूद्ध सार्वजनिक चुप्पी समाज में एड्स की तरह तेज़ी से फैल रही है।

बस रेंगने लगी तो किसी तरह गर्दन निकालकर एक मज़दूर-सा दिखता व्यक्ति मुझसे मुख़ातिब हुआ,

''सर! जरा-सा ...'' उसने खिड़की की ओर इशारा किया।

गमछेवाला समझकर उसे घुसने में मदद देते हुए सोचा,

''अब दूसरा भी आता ही होगा ...''

चक्के में लगे मोटे गिट्टिस, लूज़ स्प्रिंग और ओवर लोडिंग के कारण मडगार्ड चक्के से टकराने लगा। खट-खट की आवाज़ पैदा करता चक्का लोहार के हथौड़े की तरह कमर पर चोट करने लगा। गमछे के लावारिस होने की ख़ुशी काफ़ूर हो गई। बस की रफ़्तार बढ़ती तो खट-खट की आवाज़ पत्थर तोड़ती क्रशर मशीन फिर लकड़ी चीड़ती आरा मशीन की आवाज़ में तबदील हो जाती। लेकिन जब कभी रफ़्तार कमज़ोर पड़ती तो चोट को गिना जाना संभव हो जाता और कमर पर तबक़ कूटे जाने का एहसास होता।

बग़ल में बैठा व्यक्ति बिल्कुल तरोताज़ा था। एकआध किलोमीटर का सफ़र तय होने के बाद उसने माँगकर खैनी खाई और स्तनपान कराती एक औरत के अर्द्ध खुले स्तन को गर्दन घुमा-घुमाकर देखा। सड़क किनारे निर्माणाधीन महावीर मंदिर और गाँव की एक मस्जिद को भी उसने प्रणाम किया। उसके बाद उसने जिस्म को आड़ा-तिरछा करके बड़ी मुश्किल से सामने वाली सीट के नीचे पाँव घुसाकर एक नज़र मुझ पर डाली। संतुष्ट होकर पुश्त और खिड़की से बने कोण में सिर फँसाकर उसने आँखें मूँद लीं। चंद मिनटों में ही वह बेफिक्री से सो रहा था। खैनी के टुकड़े फूलकर फिसलने लगे। अर्द्ध खुले होठों के बाएँ कोने में मटमैला लार जमा होने लगा। देखते ही देखते लार का एक बड़ा क़तरा हलवाई के डब्बू से शीरे की तरह टपका और उसके बाज़ू पर गिरकर लुढ़क गया। होंठ और बाज़ू से जुड़े लार के तार पर जब कभी किरण पड़ती, चमकने लगता। मुझे तो उस में इंद्रधनुष के दो-चार रंग भी नज़र आए थे।

एक बड़े गड्ढे को पार करते वक़्त बस बायीं ओर अर्द्ध करवट हुई। उसकी काया चरमराई और एक धमाका हुआ। बैठे मुसाफ़िर भी एक-दूसरे पर लुढ़क गए। मैं बग़लगीर की आग़ोश में समा गया।

लोग धड़ाधड़ उतरने लगे। अधिकांश अपने-अपने सामानों को सर और कँधों पर डालकर बिना कुछ कहे-सुने चल दिए। चंद लोग ख़लासी की घोषणा की प्रतीक्षा में थे।

खैनी का लोंदा गरिबान में घुसकर बरसाती कीड़े की तरह मानसिक तनाव बढ़ाने लगा। बेकली से निजात पाने के लिए मैंने रूमाल को दस्ताने की तरह बाएँ

पँजे में फँसाकर हाथ सीने के अंदर घुसाया। चुटकी से लोंदे को पकड़कर आस-पास के हिस्सों को पोंछा। हाथ निकाला ही था कि कौसर आ धमकी,

''छी, तौबा, तौबा ... मैं कहती हूँ जल्दी फेंकिए इसे ...''

हाथ सीट के नीचे ले जा कर रूमाल को छोड़ दिया। सोचा, रूमाल नया है, कोई ग़रीब इसे पाकर खुश हो जाएगा।

ड्राइवर पेशाब करके खजूरबन्ना की तरफ़ चल दिया। ख़लासी हाथ भर लंबे स्क्रू-ड्राइवर से चक्के को ठोंक-बजाकर देखता हुआ गुस्से उगलने लगा,

''बहनचो ... नचिनया और बैंड बाजेवाले को छत पर चढ़ा दिया ... स्टेपनी भी गया ... लेबल्लैया! दूसरे चक्के में हवा नहीं ... खेल खतम पैसा हजम ... हा हा ... हा हा हा ... जा बढ़ा के ...''

बस को दो-तीन बार थपथपाकर वह इमली के पेड़ के नीचे खड़ा होकर पसीना पोंछने लगा। मुझे भी गुस्सा आ गया। मैंने सोचा,

''कैसे लोग हैं? किसी ने आपत्ति की और न किराया ही वापस माँगा ... फिर ख़्याल आया, हो सकता है, बस किसी बाहूबली नेता का हो या फिर दमन-अत्याचार के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने और हक़ हासिल करने की शिक्षा ही नहीं दी गई होगी इन्हें। सच है, अभ्यस्थ व्यक्ति संवेदनशून्य हो जाता है ...''

बस से उतरते ही बग़लगीर ने लपक कर अरदली की तरह हाथ से सूटकेस लेते हुए कहा,

''ओफिस ही जाना है ना सर! ... चलिए मैं पहुँचा देता हूँ ... जादा दूर नहीं, दो कोस बचा है ... पगडंडी से चलेंगे तो आधा कोस कम परेगा ...''

उसका ऑफ़र अच्छा लगा और जानकारी से राहत मिली।

दो-चार क़दम चलकर उसने सूटकेस को सिर पर रखा और सड़क छोड़ कर पगडंडी पर चलने लगा। उसकी रफ़्तार तेज़ थी। लेकिन जब कभी फ़ासिला ज़्यादा बढ़ जाता, वह खुद ही रुककर इंतज़ार करने लगता। एक जगह चापाकल के नज़दीक रुककर उसने पहले खूब पानी बहाया, फिर नल के मुँह को धोया। जब मैं क़रीब पहुँचा तो उसने इल्तजा की,

''सर! थोरा पानी पी लें ... अभी और चलना है ...''

ओक (चुल्लू) बनाने से पहले ही वह नल धीरे-धीरे चलाने लगा। जूता, पैंट की मुहरी और दोनों आस्तीन भीग गए।

''कोई बात नहीं ... सूख जाएगा ... मुहँ पर पानी मार लें सर! ...''

उसने बड़े-बुजुर्ग की तरह तसल्ली और मश्विरा दिया।

उसने पहले हाथ और मुँह धोया, फिर दाएँ हाथ से नल का मुँह बंद किया और दो-चार ज़ोरदार हाथ चलाकर मुँह हथेली से सटाकर ''सूँ , सूँ'' की आवाज़ निकालते हुए खूब पानी पिया। एड़ियाँ रगड़ के पाँव को जाँघ तक धोया, आँखों पर पानी के छपाके मारे और सड़क पर आ गया।

मेला जाते बच्चे की तरह सूरज आगे-आगे चल रहा था। आम के एक बाग़ से गुज़रते हुए उसने बूढ़े रखवाले को संबोधित किया,

''जय श्रीराम ... बरा मजा है काका! दिन भर खूब आम चूसो ... ये नहीं कि ...''

काका ने एक नज़र मुझ पर डालकर चौकी के नीचे रखे गिरे-भचके आमों पर डाली। उसने चुन-चुनकर दो-चार अच्छे-बुरे आम उसे देते हुए कहा,

''ले ... तू भी खा लेना ... ये कौन हैं ...?''

''राजधानी के बरा साहेब हैं। ओफिस तक छोरना है ...''

गमछी में आम बाँधते हुए उसने कहा।

काका ने फ़ौरन हाथ जोड़कर मुझे ''राम, राम'' कहा और बड़ी विनम्रता से पूछा,

''हुकुम हो तो हुजूर के लिए भी भिजवा दूँ ...?''

''नहीं ... नहीं ...''

तेज़ क़दमों से मैं आगे बढ़ गया।

''बरा नेक आदमी है सर! बिना माँगे भी दे दिया करता है ... चूआ आम खराब थोरे ही होता है ...'' उसने कहा।

दफ़्तर खुला था। लेकिन अधिकांश कुर्सियाँ ख़ाली थीं। बी॰डी॰ओ॰ के चेंबर में दाख़िल हो कर उसने सूटकेस टेबुल पर रखा और एक कुर्सी को हाथ से साफ़ करके बोला,

''बैठिए सर! बरा बाबू को खोजकर लाता हूँ ...''

उसके निकलने से पहले ही एक अधेड़ उम्र शख़्स दाख़िल हुआ और फ़र्शी सलाम ठोककर बोला,

''मुझे पता है, हुज़ूर को परेशानियों का सामना करना पड़ा है ... खुदा गवाह है, बंदा मजबूर था। हाकिम की संझली बेटी की तबीयत अचानक ख़राब हो गई और उन्हें शहर जाना पड़ा वरना रेलवे स्टेशन पर ख़ाकसार के साथ हाकिम को भी मुंतज़िर (प्रतीक्षारत) पाते ... इंतज़ामात का जायज़ा लेने निकला ही था कि ...''

वह मेरे हमसफ़र से मुख़तिब हुआ,

''चल हरिया! ... हाकिम वाले कमरे में ...''

सेहतमंद जिस्म, रंग साफ़, चेहरा गोल, भूरे बालों में क़ब्ज़ा बढ़ाते सुनहरे और उजले बाल, जादुई आँखें, बातों में चापलूसी और प्रभावकारी सदाचार ... आगे-आगे चलते हुए उस शख़्स के मुतअल्लिक़ मुझे यह समझते देर नहीं लगी कि यही बड़ा बाबू है।

कमरा अंदर से बहुत उमदा और सुसज्जित था। ज़रूरियात की लगभग तमाम चीज़ें मौजूद थीं।

''गुसुल करूँगा ...''

मैंने बुलंद आवाज़ में ख़ाहिश ज़ाहिर की।

हरिया हाथ जोड़कर जाने लगा, तब मैंने पचास रुपये का एक नोट उसकी तरफ़ बढ़ाते हुए कहा,

''इसे रख लो ... बच्चों के लिए कुछ लेते जाना ...''

''बड़ी मदद की है ...''

मैंने बड़ा बाबू से कहा।

बड़ा बाबू लपककर मेरा हाथ पकड़ते हुए बोला,

''इसकी यह मजाल कि मेहनताना वसूले। हाकिम को पता चल ही जाएगा ... हुज़ूर की ख़िदमत तो हम सब पर लाज़िम है। यह तो बिना नौकरी के ही ऑफ़िस टुकड़ों

पर एक बड़े कुंबे को पाल रहा है ...''
उसे घूरते हुए बोला,
''तू खड़ा क्यों है ... चल फुट ...''
हरिया चाबीवाले खिलौने की तरह चल पड़ा।

बड़ा बाबू को जैसे कुछ याद आ गई हो। वह लपककर बरामदे में गया और जाते हुए हरिया को रोककर आदेश देने लगा,
''रात को एक फेरा लगा जाना ... और कल ज़रा सवेरे चेहरा दिखाना ... ख़ास काम है ...''
तेज़ क़दमों से लौटकर बड़ा बाबू ने बड़ी आजिज़ी से कहा,
''हुजूर को मकरे से बाहर जाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी ... गीले कपड़े हमाम (स्नानागार) में ही छोड़ दीजिएगा ...''
इजाज़त तलब करके वह कमरे से निकल गया।
''सोरेन! ... सोरेन! ... अबे कहाँ मर गया ... काम चोर ... नौकरी मुस्तक़िल होते ही चाल-ढाल एक दम बदल गई ... आरक्षण ने मन बढ़ा दिया है, बेहुनर निकम्मों का ...''
बड़ा बाबू की फटकार सुनाई दे रही थी। अब वह हिदायात जारी कर रहा था,
''तेरी ड्यिुटी आज रात नौ बजे तक है, फिर सुबह पाँच बजे से हरिया के आने तक ... बड़े साहब के हुक्म को भगवान का हुक्म समझना ... काम चोरी नहीं ... नहीं तो हाकिम तुम्हें ...''

मुझे गुसुल की जल्दी थी। हमाम में घुस गया। तीन बार साबुन लगाकर गुसुल किया, फिर भी कराहियत सीने से चिपकी रही।

दिन भर आग बरसानेवाला सूरज मैदान छोड़ चुका था। सिर छुपाए परिंदे घोंसलों की जानिब लौट रहे थे। बोझिल क़दमों से चलते मवेशियों के गले में बँधे घँगरूओं की धीमी आवाज़ में घंटी की आवाज़ सर बुलंद थी। एक बच्चा भैंस की पीठ पर बैठा बाँसुरी बजाने में मगन था। पीठ पर टेहनियाँ लादे एक हाथी झूमता हुआ जा रहा था। टेहनियों में गुम महावत के सिर में बँधा गमछा दिखाई दे रहा था। जामुन के पेड़ पर गौरैयों का हुजूम फुदक-फुदककर शोर मचा रहा था। ताज़ा छिड़काव के सबब ख़स से छन-छनकर आती हवा में भीनी-भीनी ख़ुशबू के साथ नमी घुली थी। गुसुल ने भूख की शिद्दत बढ़ा दी तो मैं कमरे में लौट आया।

मुझे नाश्ता करते हुए देखकर बड़ा बाबू चकरा गया।
''हुज़ूर! हाकिम हमें ज़िन्दा नहीं छोड़ेंगे ... अगर ख़ता हो गई है, तो बंदा दस्तबस्ता माफ़ी का तलबगार है ... रहम कीजिए बंदापरवर! नाश्ता पेश करने की इजाज़त तलब करने ही ...''
बड़ा बाबू पाँव पकड़कर बैठ गया।
''ये क्या ... पाँव छोड़िए ...''
स्वर की नागवारी से वह फ़ौरन हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।
''क्या नाम है ...?''
मैंने सपाट लहजे में पूछा।
''ख़ाकसार का नाम तो रामावतार है लेकिन

सभी बड़ा बाबू ही कहते हैं ...''
''तो आप बड़ा बाबू के पद पर हैं ...?''
''संप्रति प्रभारी हूँ ...''
''मूल पद ...?''
''उच्च वर्गीय लिपिक ...''
''यहाँ कितने दिनों से हैं ...?''
''कोई बीस वर्षों से ...''
''कभी ट्रांसफ़र नहीं हुआ ...?''
''कई बार हुआ ...''
''फिर आ गए ...''
''नहीं हज़ूर! जाने का अवसर ही नहीं मिला ...''
''यानी ...''
''हाकिम लोग सप्ताह-दस दिन में ही स्थगन आदेश ले आते हैं ...''
''आप उनके मन-मुताबिक़ काम करते होंगे ...''
''इसमें तो कोई शक नहीं ...''
''उर्दू खूब बोलते हैं ... मैं तो समझा था ...''
''हज़ूर! फ़ैज़ाबादी हूँ ना ... अजदाद (पूर्वज) फ़ारसी के आलिम थे। मेरी तालीम भी मकतब से शुरू हुई ... अफ़्सोस! बच्चे उर्दू से भी नाबलद (अनभिज्ञ) रह गए ...''
''इन्हें चखिए ...''

अंडे का हलवा और बेसन का लड्डू पकड़ाते हुए मैंने कहा,
''तकल्लुफ़ तरद्दुद बिल्कुल नहीं ... सफ़र में कम से कम खाता-पीता हूँ ... अब तक आप से कोई शिकायत नहीं ... समझदार लगते हैं। जाँच में आवश्यक सहयोग करेंगे ...''
लड्डू बड़ा बाबू के गले में फँस गया। मुश्किल से कंठ के नीचे उतारकर बोला,
''हुज़ूर! एशाईया (डीनर) का इंतज़ाम ख़कसार ने अपने तौर पर ...''
''कहा ना ...'' मैंने नागवारी ज़ाहिर की।
''दो-चार क़िस्म का आम है ... इजाज़त हो तो सिर्फ़ वही ...''
उसने निवेदक स्वर में कहा।
''अच्छा ठीक है ... अब तो ...''
मैंने वाक्य अधूरा छोड़ दिया।

''माहिर मच्छुआ है। जाल खूब घुमाकर फेंकता है। छोटी मच्छलियों को भी नहीं छोड़ता होगा ...''
यही सोच रहा था कि उसने लहक कर पूछा,
''अब चाय पेश करूँ ...?''
''कीजिए ''
वह खुश होकर कमरे से निकल गया।

डॉइनिंग टेबुल सलीक़े से सजाया गया था। भाँप निकलते डिश दिल को नर्म और ख़ुशबू भूख की लौ तेज़ करने लगी।
''आख़िर आप नहीं माने ...''
फटकार का लहजा दोस्ताना था।
''हुज़ूर! ख़ाँ साहब के आँसू ने मुझे ...''
वह चुप हो गया।
''ख़ाँ साहब ...?''
''जी हुज़ूर! ख़ाँ साहब ने बीबी-बच्चों की मदद लेकर इन्हें बड़े चाव से तैयार किया। बहुक्म दस्तरख़ान लगाने से मना किया तो उनके आँसू रवाँ हो गए। उन्हें आँसू बहाते

देखकर बीबी-बच्चे भी सिसकने-बिलकने लगे कि सारी मेहनत अकारत चली गई। दिल में दाद और बख़्शिशि पाने की तमन्ना होगी ... हुज़ूर! उनकी यह हालत मुझसे देखी नहीं गई और मैंने ... अब हुज़ूर जो सज़ा तजवीज़ करें ...''

बड़ा बाबू इक़बालिया मुल्ज़िम की तरह सिर झुकाकर खड़ा हो गया।

मुझे शंसय में गिरफ़्तार देखकर बोला,

''बुज़ुरगों से सुना है, रिज़क़ (अन) पर खानेवाले का नाम लिखा होता है ... हुज़ूर दानिश्वर (प्रबुद्ध) हैं। कुफ़राने नेमत (स्वादिष्ट पदार्थ से इंकार) ...''

बड़ा बाबू शतरंज के माहिर खिलाड़ी की तरह मुझे घेर चुका था। प्यादे से शह मात खा गया। साथ देने की पेशकश को वह यह कहकर टाल गया,

''मेरी मजाल कि हुज़ूर की हमसरी (बराबरी) करूँ ... ज़र्रा (कण) आफ़ताब (सूर्य) नहीं हो सकता ... भला मैं हाकिम की जगह कैसे ले सकता हूँ ... और हुक्म ओदूली (आदेशोलंघन) भी नहीं कर सकता ... बस, साथ बैठने का शर्फ़ (सम्मान) हासिल कर लेता हूँ ...''

वह बग़ल की कुर्सी पर बैठकर कभी इल्तजा और कभी ज़िद करके खिलाने लगा।

बड़ा बाबू नाई की तरह विषय बदल-बदलकर लगातार बातें कर रहा था। बी॰डी॰ओ॰ का गुण-गान करते हुए उसने चंद बातों से भी आगाह करा दिया। मुझे मालूम हो गया कि बी॰डी॰ओ॰ प्रसिद्ध समाज सेवक श्रीगणेश त्रिपाठी का बेटा है। वह धार्मिक कामों में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेता है। कई महायज्ञ करा चुका है। उसका ससुर भारत सरकार में कैबिनेट मनिस्टर का पी॰एस॰ है। उसे कास्ट लाइन पर तंग किया जा रहा है। स्थानीय लोग उससे भी जलते हैं। पीठ-पीछे उसे ''डब्बूजी'' कहते हैं। बड़ा बाबू ने बेहिचक कहा,

''हुज़ूर! कौन नहीं जानता मंत्री और विधायक निधि से होने वाले कामों में माननीय मंत्री जी और विधायक जी की इच्छाओं का पालन करना ही पड़ता है ... विकास-कार्यों में लगे रहने वालों के सिर ही बदनामी आती है ... घोटाले का लेबल चिपका देना तो एक फ़ैशन है। जनहित याचिका दाख़िल करने का मक़सद मीडिया में छा जाना या फिर यह एहसास दिलाना होता है कि मुझे भी चाहिए ... दलित समाज तो सुरसा की तरह मुँह खोलता ही रहता है ... हुज़र जहाँदीदा (अनुभवी) हैं। आफ़ताब को चिराग़ दिखाने की हिमाक़त मैं नहीं कर सकता। सब जानते हैं, अफ़सर के ऊपर अफ़सर और उसके ऊपर भी बैठा है और सब एक दूसरे पर नज़र रखते हैं ...''

हाथ धोते वक़्त बड़ा बाबू कँधे पर तौलिया रखकर खड़ा हो गया। चाँदी की तश्त से कलात्मक तिंका पेश करके उसने कहा,

''माननीय मंत्री जी की निगरानी में हाकिम ने मिल-जुलकर तमाम काग़ज़ात तैयार करवाया है। चहलक़दमी के बाद हुज़ूर के मुलाहज़े (अवलोकन) के लिए पेश करूँगा ...''

चाँदनी रात में समाधि रहस्यपूर्ण लग रहा था। जामुन के पेड़ के नीचे रखे दिए में ज़रूर फिटक्री और कपूर का पाऊडर डाला गया होगा। इसी सबब तेज़ हवा में भी जल रहे थे। बनफूलों की खुशबू सुखदायी और फ़िज़ा कामोत्जेजक थी। सीढ़ियाँ चढ़ते वक़्त एहसास हुआ कि पैदल चलने से जाँघ चढ़ गए हैं। दो-तीन ख़ुशगवार डकार आए तो सोचा,

''रुख़स्त होते वक़्त ख़ानसामे को सौ रुपये बख़्शिश दूँगा और बड़ा बाबू की नज़रें बचाकर हरिया की जेब में भी पचास रुपये डाल दूँगा। दोनों ख़ुश हो जाएँगे ... कौसर को मेरे खाने-पीने की नाहक़ फ़िक्र होगी ...

''हुज़ूर! काग़ज़ात लेकर आ जाऊँ ...''

बड़ा बाबू की इजाज़त तलबी से ख़्यालों का सिलसिला टूट गया।

''चलिए ... चलता हूँ ...''

बड़ा बाबू चाँदनी रात में भी टॉर्च से रास्ता दिखाता हुआ गाईड की तरह चल रहा था।

बड़ा बाबू ब्रीफ़केस और एक ख़ूबसूरत पैकिट को टेबुल पर रखकर बोला,

''हुज़ूर! संबद्ध किरानी की बहन की शादी है। वह लंबी छुट्टी पर है। हुज़ूर को ज़र्रा बराबर भी ज़हमत न हो और मग़ज़पाशी (मानसिक कष्ट) न करनी पड़े इसलिए हाकिम जाँच-प्रतिवेदन की स्वच्छ प्रति टाइप करवा कर गए हैं ...''

मेरे तन-बदन में आग लग गई। मैंने तीखे स्वर में कहा,

''वेरी स्मार्ट ... आप के हाकिम अपने आपको समझते क्या हैं ...? दस्तख़त सबत (अंकित) करने आऊँगा ...?''

''ऐसी कोई बात नहीं है हुज़ूर! हाकिम ने ज़रूरी काग़ज़ात की नक़ल मुंसलिक (संलग्न) करवा दी है ... और सख़्त हिदायत भी दे गए हैं कि अगर एक-आध रद्दोबदल लाहक़ (आवश्यक) हो जाए तो उस हिस्से को फ़ौरन टाइप करवा दूँ ...''

वह गिड़गिड़ाकर बोला।

''वाह! ... बहुत ख़ूब ... इनायत ... शुक्रिया ... लेकिन ये क्या है ...?''

पैकेट की तरफ़ ईशारा करते हुए मैंने पूछा।

''हुज़ूर! यह एक रूबोट है, बेबी ट्वाय ... मेड इन इण्डिया ... देखने में राक्षस जैसा लेकिन यह दहाड़ता डराता नहीं ... नग़मे सुनाता और गिफ़्ट देता है ... पालिका बाज़ार में हाकिम को पसंद आ गया था ... वह जहाँ जाते वहीं से अक्सर कुछ न कुछ लाते ही रहते हैं ... गिफ़्ट देना हाकिम की पुरानी आदत है ...''

बड़ा बाबू राक्षस की विशेषताओं को गिनाकर बोला,

''पैग़ंबर हज़रत मुहम्मद सलम भी तुहफ़े दिया-लिया करते थे ... वालिद मरहूम से बचपन में सुना था ...''

रूबोट को पैकिट से निकालकर टेबुल पर रखते हुए बोला,

''वक़्त काफ़ी हो चुका है ... हुज़ूर ने लंबा सफ़र तय किया है। कड़ी धूप में पैदल भी चले हैं ... थक गए होंगे ... चम्पी और मालिश से सुकून मिल जाता है ...''

कुछ कहने-सुनने का मौक़ा दिए बिना बड़ा बाबू कमरे से निकल गया।

बड़ा बाबू के जाते ही इमरजेंसी लाइट क़रीब करके सबसे पहले ब्रीफ़केस

खोला। जाँच-प्रतिवेदन ऊपर ही रखा था। वह पृष्ठ मुस्करा रहा था, जो मात्र मेरे हस्ताक्षर का प्रतीक्षारत था। मैंने दम साधकर प्रतिवेदन को पढ़ा और संलग्न अभिलेखों पर समीक्षात्मक दृष्टि डाली। प्रतिवेदन बड़े सलीक़े से तैयार कराया गया था। कथित आरोपों को सुनियोजित साज़िश और विरोधियों की कारिस्तानी साबित किया गया था। स्थानीय लोगों विशेष रूप से शिकायतकर्ता पूर्व विधायक के सगे-संबंधियों के बयानात की अभिप्रमाणित प्रतियाँ भी संलग्न थीं। अख़बार में कोई चीज़ लिपटी हुई थी। खोलकर देखा। एक मख़मली डिब्बा था। डब्बे में चाँदी की कलात्मक क़लम के साथ सोने के ज़ेवरों का एक मुकम्मल सेट था। नाक की कील में जड़ा हीरे का नग जगमगाया। मैंने ब्रीफ़केस बंद करके रूबोट उठा लिया।

रूबोट को उलट-पुलटकर देखने लगा। उसकी शकल काले राक्षस जैसी और लिबास पाँच सितारा होटल के दरबान जैसा था। उसकी नाभी के नीचे एक यंत्र था। उसे छूते ही रूबोट सक्रिय हो गया। उसकी आँखें रौशन हुईं और रंगबिरंगी किरणें निकलने लगीं। होंठ हिले और सुरेली आवाज़ सुनाई दी,

सारे जहाँ से अच्छा हिंदुस्ताँ हमारा
हम हैं चील-कौवए, ये घोंसला हमारा
सारे जहाँ से अच्छा ....
न समझोगे तो मिट जाओगे ....

गाना ख़त्म होते ही रूबोट ने जेब में दायाँ हाथ डालकर निकाला। उसके हाथ में एक हज़ार का नोट था, जिसे वह पेश कर रहा था। नोट पकड़ते ही उसने फ़र्शी सलाम किया और क़हक़हे लगाकर ख़ामोश हो गया।

मैंने नोट को उलट-पुलट कर देखा। वह असली था। यंत्र छूते ही रूबोट सक्रिय होता। निर्धारित प्रक्रिया दुहराता और क़हक़हे लगाकर ख़ामोश हो जाता। मुझे लगा यह अलाउद्दीन के चिराग़ का जिन है। यांत्रिक युग में इसने भी कार्य-शैली बदल ली है। दौड़-धूपकर काम नहीं करता, बल्कि कैरेंसी पकड़ाकर अपने स्वामी की समस्याओं का समाधान कर देता है।

अचानक रूबोट के क़हक़हे में पायल की खनक शामिल हो गई। गर्दन घुमा कर देखा। न जाने कब से ख़ूबसूरत जोड़े में सजी-सँवरी एक हसीना खड़ी थी। उसके हाथ में तेल की शीशी और आँखों में मेहमान नवाज़ी (कुटुंब-स्वागत) की चाहत थी। मैं घबरा गया, जैसे बाथरूम में कोई अचानक घुस आया हो। मेरे मुँह से बेसाख़्ता निकला,

"कौन हो ...?"

"लच्छो सरकार ..."

"इस वक़्त क्यों आई हो ...?"

"मालिस करेला ..."

"मालिश की ज़रूरत तुम्हारे बड़ा बाबू को है ... निकलो कमरे से ... भागो ... जल्दी भागो ..."

अप्रत्याशित फटकार से बदहवास हो कर

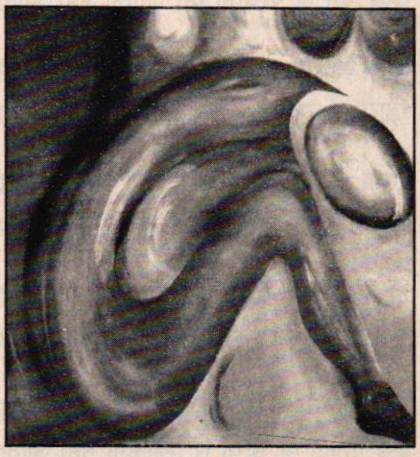

वह गिरती-पड़ती कमरे से निकल गई।

सुबह बड़ा बाबू को ब्रीफ़केस और रूबोट लौटा दिया। उसकी आँखों में ख़ौफ़ या शिकस्त का निशान नहीं था।

पाँच दिन बुहत बुरे गुज़रे। बड़ा बाबू का हर जवाब "बेटी न बेटा" जैसा द्विअर्थी होता। जगह-जगह की ख़ाक छानकर मशक्कत से तैयार किए गए जाँच-प्रतिवेदन को अल्लाह का नाम लेकर मुहर बंद लिफ़ाफ़े में पेश कर दिया।

करामाती रूबोट की कहानी सुनकर अलमास मचल गई। कौसर ने ठंडी आहें भरकर कहा,

"नन्हीं-सी जान के लिए भी नहीं सोचा ..."

थोड़ी देर ख़ामोश रहकर वह बोली,

"अगर मैं होती तो गिफ़्ट लेकर भी अपनी रिपोर्रट पेश कर देती। मूआ बड़ा बाबू क्या बिगाड़ लेता ...?"

चूल्हे पर उबलकर गिरे दूध की महक मिलते ही कौसर भागती हुई किचन में चली गई। बात आई-गई और पुरानी हो गई।

हफ़्ता-दस दिनों के बाद एक सुबह सदफ़ ने शक्की नज़रों से मुझे देखते हुए सवाल दाग़ा,

"पापा! आप ने तो कहा था, सरकार को सही रिपोर्ट सौंपा है, कई सफ़ेदपोश बेनक़ाब होंगे और कुछ लोगों को सज़ा भी मिलेगी ...?"

"हाँ, कहा तो था ..."

"लेकिन पापा ..."

"बात क्या है ...?"

"उन्हें तो क्लीन चिट मिल गई ..."

शीर्षक पर ऊँगली रखकर उसने मुझे अख़बार पकड़ा दिया।

ख़बर चार कॉलमी थी। माननीय मंत्री जी ने संवाददाता-सम्मेलन में जाँच-प्रतिवेदन का सार भी वितृत कराया था। ख़बर पढ़कर मैं सकते में आ गया। कमज़ोर स्वर में बोला,

"लगता है बड़ा बाबूवाले प्रतिवेदन को ही मेरे नाम से जोड़ दिया गया है ... वरना ..."

कौसर ने व्यंग्य का गोला फेंका,

"निकल गया ना ईमानदारी का जनाज़ा ...च ... च ... न ख़ुदा मिला न वसाले सनम ..."

"लेकिन मैं भी चुप नहीं बैठूँगा ..."

"मुझे मालूम है ... दूसरी जंग शुरू ..."

धूर्त बड़ा बाबू का मुस्कराता चेहरा आँखों के सामने रक़्स कर गया। आँगन से उठकर मैं कमरे में गाया और प्रस्तुत जाँच-प्रतिवेदन की प्रति का अध्ययन करने लगा —— !!!

संपर्क : आवास सं॰ सी॰/6,
पथ सं॰ 5, आर॰ ब्लॉक,
पटना - 800001
0612- 2226905 (आ॰)

❋❋❋

इस कहानी की घटनाएँ एवं पात्र कल्पित हैं—कहानीकार

हुस्न और मौत

○ फ़ैज़ अहमद फ़ैज़

दोनों जहाँ तेरी मुहब्बत में हार के
वह जा रहा है कोई शबे ग़म गुज़ार के

वीरान है मयकदा, खुम व साग़र उदास हैं
तुम क्या गए कि रूठ गए दिन बहार के

इक फ़र्सते गुनाह मिली, वह भी चार दिन
देखें हैं हमने हौसले परवरदिगार के

दुनिया ने तेरी याद से बेगाना कर दिया
तुझसे भी दिलफ़रेब हैं ग़म रोज़गार के

भूले से मुस्करा तो दिए थे वह आज **फ़ैज़**
मत पूछ वलवले दिल नाकरदाकार के

खुम व साग़र- मटका और चषक, परवरदिगार- पालक, वलवले- उत्साह, नाकरदाकार- कार्य से असमर्थ

ग़ज़ल

राज़े उल्फ़त छुपाके देख लिया
दिल बहुत कुछ जलाके देख लिया

और क्या देखने को बाक़ी है
आपसे दिल लगाके देख लिया

वो मेरे होके भी मेरे न हुए
उनको अपना बनाके देख लिया

आज उनकी नज़र में कुछ हमने
सबकी नज़र बचाकर देख लिया

फ़ैज़ तकमील ग़म भी न हो सकी
इश्क़ को आज़माके देख लिया

बहज़ाद फ़ातमी की दो ग़ज़लें

मय देने का तुझको जो सलीक़ा नहीं आता
साक़ी किसी मयनोश को पीना नहीं आता

प्यासे के क़रीं सच है कि दरिया नहीं आता
ग़ैरत को हमें भी तो डुबोना नहीं आता

मानूस है इस दर्जा ये दिल लज़्ज़ते ग़म से
हँसना भी अगर चाहूँ तो हँसना नहीं आता

लरज़ाँ है चिराग़ों की ज़्या जुंबिशे पर से
क्यों चैन से परवानों को जलना नहीं आता

फूलों की तो ख़ाहिश है मेरे दिल में भी लेकिन
ख़ारों से गुलिस्ताँ के उलझना नहीं आता

रहता है मेरे साथ तमन्नाओं का लश्कर
महफ़िल में तेरी कभी तंहा नहीं आता

हों कितने ही रौज़न दरो दीवार में फिर भी
ग़मख़ान-ए-मुफ़लिस में उजाला नहीं आता

जिस तिफ़्ल को मिलती नहीं दो वक़्त की रोटी
उस तिफ़्ल के हाथों में खिलौना नहीं आता

क्या जानें कशिश कैसी है सेहरा-ए-जुनूँ में
क्यों लौटकर घर बादापैमाँ नहीं आता

ये हुस्ने अमल का तेरे एजाज़ है वरना
साहिल के क़रीं खुद तो सफ़ीना नहीं आता

बहज़ाद कभी होगी न मुलाक़ात उससे
जाता है जो दुनिया से दोबारा नहीं आता

क़रीं - क़रीब, ग़ैरत - अभिमान, मानूस - परिचित, ज़्या - प्रकाश, रौज़न - छिद्र, तिफ़्ल - बालक, बादापैमाँ - यायावर

ये अख़्तियार है जारी नया नज़ाम करें
रवयतों का भी लाज़िम है एहताम करें

चलते हैं दूर तलक हम तलाशे मंज़िल में
थकन का है ये तक़ाज़ा सफ़र तमाम करें

बहुत से काम हैं करने अभी अज़ीज़ों को
हमारी फ़िक्र में क्यों ज़िंदगी हराम करें

मिटाएँ लफ़्ज़ अदावत को मिसले हरूफ़ ग़लत
ख़लूसो मेहर व मुहब्बत जहाँ में आम करें

दिया है दश्ते जुनूँ ने ये क़मती तुह्फ़ा तो
क्यों न चाके गरीबाँ का एहतराम करें

ग़तल है शिकव-ए-तक़दीर हर नफ़स **बहज़ाद**
कभी तो आप सलीक़े से कोई काम करें

हर एक स्मित से बारिश है पत्थरों की जहाँ
कहाँ छुपाएँ सिर अपना कहाँ क़्याम करें

शिकस्ता हो न सका जबकि मुफ़लिसी का हिसार
कहाँ से घर के उजाले का इंतज़ाम करें

निकल सके जो न अबतक हिसारे ज़ुल्मत से
वो कैसे घर के उजाले का इंतज़ार करें

हर आस्ताँ को जो दावा है कारसाज़ी का
कहाँ झुकाएँ सिर अपना किसे सलाम करें

नज़ाम- व्यवस्था, तमाम- समाप्त, मिसले हरूफ़ ग़लत- ग़लत शब्द की तरह, हर नफ़स- हर समय, क़्याम- ठहरना, हसार- घेरा, ज़ुल्मत- अँधेरा, आस्ताँ- ठोर, कारसाज़ी- काम करने का

संपर्क : श्रीगणेश अपार्टमेंट, बोरिंग रोड, पटना 800001 दूरभाष सं०- 0612- 2532859

शशि शेखर शर्मा की दो कविताएँ

उफ़! ये रुतबा यार तेरा

उफ़! ये रुतबा यार तेरा
हम दीवाने, हम फ़िदा।
दिल में सुर्ख़ सुहाग समेटे
छाती भर मदमस्त नशा।
बाँह उठे तो ठिठके मौसम
हँसे तो झरना नीलम का
आँख सुबह का कच्चा जोबन
काजल शाम का धुंधलका।
गाल बुरूंश के भीगे गुंचे
पलकें दिलकश मयकदा।
सांस कि पिघले जिसम का आलम
महुआ-वन से उठी हवा
अधर तराशे रस के फाहे
केसर पानी छू गया।
जिस्म पके अंगूर का गुच्छा
पोर-पोर बस मादकता।
छूए तो टेसू फूल, कि जैसे
पूरा जंगल धधक उठा।
सजे तो कोहबर भाग हमारा
मिले तो वक़्त इबादत का

***

दो अधर संवाद थर-थर

ओस में कुमकुम की लहरें
रात की बांहों में चंदन,
दो अधर संवाद थर-थर
और अद्‌भुत एक चुंबन।
अर्थ की हल्दी में लिपटे
शब्द के अक्षत नए,
बांह के मंडप में कंपित
अंग किसलय मद भरे।
यज्ञ की वेदी-सी काया
और स्वाहा हो रहा मन।
जब हथेली की नवेली
गुदगुदी खिलने लगी,
रात के कंधे पे गदराई
नदी झुकने लगी।
बीनना होठों पे तेरे
चाँद की नन्ही किरण।
वह सुकोमल शाम और
सिंदूरिया अभिसार तेरा,
खिलखिलाते लाड़ में
लिपटा हुआ मनुहार तेरा।
आज अर्पित हो रही है
ज़िंदगी, मेरे सजन।

***

संपर्क : सचिव, लोक स्वाथ्य अभियंत्रण विभाग, पटना

ग़ज़ल

○ नाशाद औरंगाबादी

साँप से दोस्ती का सिला मिल गया
डँस लिया जूँही मौक़ा मिल गया

कुछ उम्मीदें थीं वाबिस्ता जिस ज़ात से
वह भी अग़ियार से बेवफ़ा मिल गया

आपने जो दिया शुक्रिया-शुक्रिया
जितना सोचा था उससे सवा मिल गया

कल लिपट के मैं साये से रोता रहा
धूप में दोस्त इक गुमशुदा मिल गया

सिर उठाकर चला जब कोई उसे
राह में इक न इक हादसा मिल गया

वह फ़रिश्ता नहीं एक इंसान था
नील में भी जिसे रास्ता मिल गया

भूल जाएँगे वह हर सितम दहर का
निको 'नाशाद' सा बावफ़ा मिल गया

संपर्क : डी॰/33, एन॰आई॰टी॰,
फ़रीदाबाद- 121001
(हरियाणा)
दूरभाष - 9835430036

***

अजय कुमार की दो कविताएँ

महल और मकान

फूस का मकान
समेटे सारा जहान
सहेजने के लिए
नहीं कुछ भी
लेकिन
दहलीज़ पर रौशन
चिराग़ इंसानियत का

द्वार रहित घर
छप्पर से झाँकती
धूप, चाँदनी और फुहार
फ़र्क़ नहीं घर और रास्ते में
ज़रूरत नहीं इजाज़त की

महल
तराशा हुआ
आभूषणों की तरह
बेशुमार पहरेदार
इजाज़त नहीं
हवा को भी
बिना पूछे प्रवेश करने की
लेकिन हर तरफ़
घुटन का साम्राज्य

संवेदना की मौत
सपनों की चोरी
गणित का बढ़ता प्रचलन
क़दम नहीं बढ़ाता कोई
बिना जोड़-घटाव के

रोबोट मानव निर्मित मानव
नियंत्रित चेहरे के भाव
ख़त्म होता अंतर
दु:ख-सुख में टपके आँसूओं का।

***

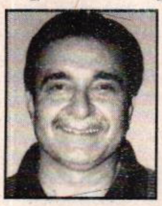

सहज नहीं है ...

चमकने वाली हर चीज़
सोना नहीं होती
मरूभूमि में भी
होता है अक्सर सागर का भ्रम
दुनिया चल रही है
अपूर्ण सपनों के सहारे
रेत पर बने
सपनों के घिरौंदे
हक़ीक़त के शोलों को
मुट्ठियों में भर लेने की
नहीं है शक्ति हम में
कंगन और चुड़ियों के क्षद्म रूप
नेकलस
मोतियों के माले
दिलकश डिज़ाईन
दरअसल हैं
फाँसी के फंदे।
पायल की रूनझुन
कमरधनी
याद दिलाती हैं
स्वतंत्रता की चिता की
बेड़ियों में जकड़ी वीरांगनाओं की
हे नारी! उठो, जागो
अपनी दशा देखो, दिशा बदलो
तुम्हें पुष्पित होने के लिए
करना ही पड़ेगा लंबा संघर्ष
इस फ़रेबी दुनिया में
सहज नहीं है
सत्य से आँखें मिलाना।

***

संपर्क : आयुक्त एवं सचिव, सहकारिता विभाग, पटना

ग़ज़ल

○ मो॰ सुलेमान

लड़ाई से तो कुछ हासिल नहीं है।
पुजारी अम्न का पागल नहीं है।

उठे शोले, जले बादल गगन के।
बरसने को कोई बादल नहीं है।

समन्दर नूर का, दिल की ज्योति।
ये साहिल गर दिखे, साहिल नहीं है।

ये बादल जब से सहरा से गए हैं,
हिरन की आँख में काजल नहीं है।

मेरे माथे पे बल-सा पड़ गया है,
कहा बीबी ने जब, 'चावल नहीं है।'

ये जीवन काम करने को बना है।
यहाँ आराम का इक पल नहीं है।

उदारीकरण औ' डालर की खर-खर,
सुलेमां ज़र तेरी मंज़िल नहीं है।

संपर्क : अपर समाहत्ता, बेतिया,
पश्चिमी चंपारण

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

MAHESH HOMOEPATHIC LABORATORY & GERMAN HOMOEO STORES

Saket plaza, Jamal Road, Patna-800001
Ph:(0612) 2238292 (O) 2674041 (R)
Offers a wide range of mother Tinchers, Billutin Biochemic Tablet patents, Globels

Dr. Mahesh Prasad - D.M.S. Patna)
Dr. Arum Kumar -D.H.M.S. (Patna)

Spcialist in chronic Diseases

ग़ज़ल

○ इफ़्तख़ार राग़िब

दिल है बेबस तुझे भुलाने में
बिन तेरे कुछ भी नहीं ज़माने में

तख़्त और ताज खो दिए हमने
बज़्मे शेरो सुख़न सजाने में

फूट पड़ते हैं आँखों से आँसू
मोड़ आते हैं वह फ़साने में

किस नतीजे पे आप पहुँचे हैं
कट गई उम्र आज़माने में

दर्द व ग़म से अगर हो दिल लबरेज़
ख़ून जलता है मुस्कराने में

चंद तिनके हैं तेरी यादों के
कुछ नहीं दिल के आशियाने में

काश खुद को भी देखते **राग़िब**
रह गए ऊँगलियाँ उठाने में

संपर्क : 'दबिस्ताने अदब', पोस्ट बॉक्स नं॰11671, दोहा, क़तर दूरभाष सं॰- 4328000

विडंबना

○ वीणा जैन

स्वच्छ हो
सुंदर हो,
सजा-धजा, साधन सामग्री से युक्त घर हो
गंदगी, टूट-फूट, रंग-रोग़न में ज़रा भी दाग़
ना पसंद हो।

नहाया हो
धोया हो,
क़ीमती वस्त्रों से ढका शरीर हो,
अंग-अंग आभूषणों से सजा हो,
ज़रा भी कमी नहीं, ना पसंद हो

मगर ये-
कैसी विडंबना है, कि
दिल की, दिमाग़ की, गंदगी पसंद हो।
ग़लत खानपान हो, आदतें ख़तरनाक हों
बीमारियों का न डर हो, बेमौत,
मरना पसंद हो।

पशु की बात और है
अज्ञान है, नासमझ है
मगर तुम इंसान हो, ज्ञानवान, बंद्धिमान हो
फिर क्यों तुम्हें विडंबनाओं में
जीना पसंद हो।

संपर्क : फ्लैट सी॰ आशीर्वाद, 9-क्रास, तीसरा फेज, बंगलोर, कर्नाटक

सोने की चिड़िया

डॉ॰ हीरालाल नंदा 'प्रभाकर'
○ उर्फ बेताब लखनवी

जो होना न चाहिए वही हो रहा है।
कुछ कह नहीं सकते ये क्या हो रहा है।।
नगर क़स्बों गलियारों में शोर हो रहा है।
नफ़रत का धुँवा चारो ओर हो रहा है।।

अजीबो ग़रीब आज मंज़र हो रहा है।
क़ातिल बलात्कारियों का ज़ोर हो रहा है।।
मनमानी का बोलबाला सरेआम हो रहा है।
अपनी डफली और अपना राग हो रहाहै।।

अजीब जद्दोजहद से वतन गुज़र रहा है।
भ्रष्टाचार रूपी दानव मुँह फार रहा है।।
कहलाता था सोने की चिड़िया जो वतन।
उसी सरज़मी में हादसे पे हादसा हो रहा है।।

हम चाहते हैं रोशन हो वतन ये हमारा।
नामुरादों आतंकियों से हो निपटारा हमारा।।
जमहूरियत का अमनचैन से बदले नज़ारा।
हमेशा बढ़े हिंदू मुस्लिमों में भाईचारा।।

संपर्क : 1/2, अजय अपार्टमेंट्स, जनकल्याण नगर के पास, मलाड (प॰), मुंबई-95, महाराष्ट्र

क्षणिकाएँ

○ डॉ॰ महेशचंद्र शर्मा

(1)
जीवन-मरण

जीवन क्या है?
अनवरत आगे बढ़ते रहना।
तथा
मरण है क्या?
जीवन-यात्रा में स्थिर हो जाना।

(2)
सार्थक जीवन

जीवन में महत्त्वाकाँक्षी होता है जो,
तथा तदर्थ प्रयत्नशील भी रहता है।
रचनात्मक कर्म में लगा रहता है जो,
जीवन सार्थक भी उसी का होता है।।

(3)
सफलता का रहस्य

परिस्थितियों से संघर्ष करने में ही,
खिलता है व्यक्तित्व का कमल।
'संघर्ष' है जीवन में 'सफलता का रहस्य',
इस बात पर करना है हमें सदैव अमल।।

संपर्क : 'अभिवादन', 128-ए॰, श्याम पार्क (मेन), साहिबाबाद
(ग़ाज़ियाबाद) उ॰प्र॰-201005

मंद पवन

○ के॰जी॰ बालकृष्ण पिल्ले

मंद पवन की गोद में चाँदनी के
झीने आवरण में
हिमकणों की गँध सूँघती हुई
खिलती जाती है
धीरे धीरे धीरे
तब अपूर्व छटा बिखर जाती है
जिसे विकास कहते हैं।
अपने को सर्वाधिक प्रगतिशील
दिखाने
कोई कली
समय के पूर्व ही
अपनी पंखुड़ियाँ खोल दे
और भ्रमर को मधु पिलाने लगे
तो विकास नहीं कहलाएगा
... की तड़प ही कहलाएगा

संपर्क : गीताभवन, पेरूरकटा
पोस्ट तिरूअनंतपुरम्-695006

हाइकु गीत

○ नलिनीकांत

ग्रहण करें
ऊर्जा सूर्य की तरह
आलोक बाँटें।

विषमता की
फैली दूरियाँ और
खाइयाँ पाटें।

आओ मिलके
अंदर-बाहर का
अँधेरा छाटें।

हँसी खुशी की
खुशबू से भर दें
बाज़ार हाटें।

संपर्क :
अंडाल, प॰ बंगाल-713321

ग़ज़ल

○ डॉ॰ दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'

जी रहा है नगर गोलियाँ क्या करें,
रक्त से खेलता होलियाँ क्या करें।

दीखते एक दो थे कहीं कंटकी,
आज हर मोड़ पर टोलियाँ क्या करें।

भेड़िया हो रहा आदमी आदमी,
रूप की लग रही बोलियाँ क्या करें।

पश्चिमी नग्नता बन गई सभ्यता,
देह पर रह गई चोलियाँ क्या करें।

धनबली भुजबली आ डटे राज में,
पुलिस फैला खड़ी झोलियाँ क्या करें।

देखता मन मसौसे खड़ा वह गुणी,
अवगुणी भाल पर रोलियाँ क्या करें।

संपर्क : सिविल लाइंस,
कोटा-324001

दशहरे की
शुभकामनाओं सहित :
मे. सुपर सिमेंट ट्रेड़िग
लफार्ज सीमेंट के ए.सी.
सी., के.सी. थोक एवं
खुदरा विक्रेता
संपर्क करें:-
सिद्धेश्वर कॉम्प्लेक्स
मीठापुर, खगौल रोड,
पटना-800001
संस्थापक : स्व॰ सिद्धेश्वर प्रसाद सिंह

पहरेदार

○ मनु सिंह

मैं छोटा आदमी था
मारा गया
उसी गुजरात में
मेरे ही पोरबंदर के पास
भेरावल में
गीतोपदेशक श्री कृष्ण को
ब्याधा ने मारा था
कहाँ उसे कोई गाली देता?
क्यों मारा मेरे कृष्ण को?
नहीं न
क्योंकि उससे तुम्हारा स्वार्थ
सिद्ध नहीं होता दीखता
अरे!
नाथू ने एक को
मारा
और तुम तो
एक ही दिन में लाखों को मार रहे
भूखी जनता की रोटी छीन रहे
बताते हो अपने को ग़रीबों का
पहरेदार
न कोई तुमसे बढ़कर दूसरा दावेदार
कहते फिरते हो अन्न दूँगा
गर पड़े अकाल
घर जलने पर मकान दूँगा
लेकिन कमीशन कितना लोगे
यह भी पहले तय कर लो
नहीं तो फ़र्क़ पड़ने पर
बवाल होगा
लाठी-डण्डा और गोली से
जनता पर वार होगा
फिर जाँच कमीशन बहाल होगा
फिर ढाक के वही तीन पात
हर जगह का यही हाल
चारों ओर बह रही
यही बयार
मत हाँको डींग
कुछ तो शर्म करो
तुम तो लगते ऐसे शातिर
ऐसे निर्लज कि
निर्लज भी शरमा जाए।

संपर्क : विनोवा नगर,
पोस्टलपार्क, पटना-1

हम साथ-साथ हैं

○ शुक्ला चौधरी

''हैलो डॉक्टर साहब! नमस्ते, कैसे हैं?''

''नमस्ते, आप कौन?''

''अरे डॉक्टर साहब! हम कौन हैं, इससे क्या? बस जान लीजिए कि हम साथ-साथ हैं।''

''देखिए, आप कौन हैं, क्या चाहते हैं और क्या कह रहे हैं, मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है। आप बाद में फोन करें। इस वक्त में ज़रा व्यस्त हूँ, क्योंकि मरीज़ों से अस्पताल भरा है।''

और खट् की आवाज़ से झुँझलाकर डॉक्टर साहब ने फोन रख दिया।

ऐसे फुर्सत के यारों से उलझने का वक्त यहाँ किसके पास है? ऐसे उलजुलूल लोगों के मुँह लगते तो सुदूर कोलकाता से यहाँ बोरीविली में आकर चौदह ही सालों में इतना यश और पैसा नहीं कमा पाते। गर्व से उन्होंने नज़रें घुमाकर अपने चैंबर को देखा। पाँच मंज़िलों वाला यह नर्सिंग होम उनके सूझ-बूझ और मेहनत का परिणाम है। स्वास्थ्य मंत्री खुद आए थे मुंबई से इसका उद्घाटन करने। पूरे इलाके में सबसे शानदार नर्सिंग होम है और सभी प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। बस, पैसे फेंककर खरीदने की ज़रूरत है। शानदार अस्पताल शानदार लोगों के लिए। आख़िर अमीरों के लिए भी तो कोई सोचे। सरकार है कि बस ग़रीबों के लिए एक के बाद एक ख़ैराती अस्पताल खोलती फिरती है और घाटे का रोना रोती है।

अभी उस दिन मिसेस झुनझुनवाला कह रही थीं कि पहले बीमारी से डर लगता था, पर जब से आपने नर्सिंग होम खोला है, बीमारी का भी मज़ा आने लगा है। पेरिस में जहाँ मेरी भाभी का इलाज हुआ था, वह नर्सिंग होम भी बिल्कुल ऐसा ही था। सुनकर डॉक्टर साहब गर्व से गद्-गद् हो उठे थे और उनकी पत्नी को और भी नमक-मिर्च लगाकर डाक्टर साहब के भाविष्य-परिकल्पनाओं को सुनाने लगी थीं।

यह सब सोचते हुए डॉक्टर साहब मन ही मन मुस्करा उठे और सामनेवाले मरीज़ की बातों पर ध्यान देने लगे। तभी फोन की घंटी बजी। इस बार मोबाइल की। ''हैलो!''

''देखिए डॉक्टर साहब, झुँझलाकर फोन रखने की ज़रूरत नहीं। आख़िर हम साथ-साथ हैं।''

''अरे आप फिर से? आपको मेरे मोबाइल नंबर का कैसे पता चला?''

''अरे डाक्टर साहब, आप सिर्फ मोबाइल नंबर की बात कर रहे हैं? हमें तो आपके बारे में और भी बहुत कुछ पता है। जैसे इस वक्त आपकी पत्नी रीना देवी ब्यूटी पॉर्लर में हैं, आपका बेटा राजेश स्कूल में है और बड़े मज़े से खेल रहा है, क्योंकि यह उसके गेम्स का क्लास है और ...''

''बस कीजिए, आपको इतनी ख़बरें कहाँ से मिलीं?''

''ख़बरें रखना पड़ता है, डाक्टर साहब, आख़िर हम साथ-साथ हैं।''

''बकवास बंद कीजिए। आप कब से यह पंक्ति दोहरा रहे हैं, जबकि मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि आप कौन हैं और हम साथ-साथ कैसे हैं?''

''अभी समझाए देते हैं डॉक्टर साहब, ज़रा आप पसीना तो पोंछ लीजिए। आप जिन अमीरों को अपने नर्सिंग होम में लूटते हैं, वे जब गरीबों को लूटते हैं तो बड़े दिलेर नज़र आते हैं, परंतु बीमारी के आगे लाचार होकर आपके शरण में आते हैं और आप उनसे लाखों खसोटते हैं। आप दोनों वर्ग ही लुटेरे हैं, पर नक़ाबपोश लुटेरे। मैं भी एक लुटेरा हूँ पर नक़ाब नहीं पहनता, घिन आती है। नाम सुना होगा आपने अपने दोस्तों से। नाम है- नवाब भाई।''

अब डॉक्टर साहब वाक़ई पसीने से लथ-पथ होने लगे। सामने रखा पानी का गिलास एक ही घूँट में पी गए और इशारे से मरीज़ को बाहर जाने को कहा, फिर चपरासी को इशारा किया कि किसी को अंदर न आने दे।

फिर आवाज़ में नर्मी लाकर बोले, ''मुझसे क्या चाहते हो भाई?''

''चलो भाई पे उतर आए यानी आप मान गए कि हम साथ-साथ हैं। अच्छा है, ज्यादा वक्त नहीं लगा। अब आपको बताएँ कि आप कैसे साथ निभाएँगे। ध्यान से सुनिए। अगले सप्ताह इसी वक्त, इसी दिन आपके नर्सिंग होम के गेट में एक सफ़ेद मारुति वैन आकर रुकेगी। आप अपने चपरासी के हाथों एक काला बैग भेजेंगे जिसमें पचास लाख रुपये होने चाहिए। घबराइए नहीं, आपके लिए रक़म ज़्यादा नहीं है। इतना तो आप दो ही महीने में कमा लेंगे। और हाँ, हम आप लोगों की तरह एक ही आदमी को बार-बार नहीं लूटते।''

जैसे-जैसे बात डॉक्टर साहब के हलक़ से उतरने लगी, चेहरे पर भावों का इंद्रधनुषी रंग बिखरने लगा। मेहनत की कमाई को ऐसे कैसे निकलने देते? आवाज़ में कड़की लाकर बोले,

''देखो भाई, इस तरह के गीदड़ घुड़की से मैं डरनेवाला नहीं। यूँ ही नहीं कमाई जाती यश ओर पैसा, मेहनत के साथ-साथ हिम्मत की भी ज़रूरत होती है और तुम किस बलबूते पर खुद को मेरे साथ तुलना कर रहे हो? दूसरों की कमाई पर पलनेवाले परजीवी, तुम क्या जानो मेहनत किसे कहते हैं?

''क्यों, हम मेहनत नहीं करते क्या? ये जो पिछले दो महीने से तुम और तुम्हारे परिवारवाले का पल-पल का हिसाब रख रहे हैं, वह मेहनत नहीं है क्या? ख़ैर छोड़ो, अपना-अपना नज़रिया है पैसा कमाने का।''

''पर आप मेरी पहुँच से वाकिफ़ नहीं हैं।''

''अच्छी तरह वाकिफ़ हूँ, डॉक्टर साहब। यही काम तो पिछले दो महीने से कर रहा हूँ। हराम का नहीं खाता हूँ। ख़ैर आपको बता दूँ कि मेरा फ़ोन रखते ही आप जिस पुलिस अफ़सर को फ़ोन करेंगे, वो भले ही आपको दिलासा दे कि वह आपके साथ हैं, पर ऐसा है नहीं। ये पुलिस भी अजीब चीज़ है, वो आपको बचाने के लिए आपसे पैसे लेगी और हमें बचाने के लिए हमसे। सरकार के पेसे अलग लेगी। इसके बाद आप उस मंत्री को फ़ोन लगाएँगे जिसके साले का इलाज आपने पिछले महीने फ्री किया था। आप सोचते हैं कि वो आपके साथ हैं, पर ऐसा भी नहीं है। वो सब आपसे भी लेंगे और हमसे भी लेंगे, पर बचाएँगे किसी को भी नहीं, बल्कि मौक़ा पाते ही पिटवा देंगे। अब तो आप समझ गए ना कि कौन आपके साथ हैं, कौन नहीं?''

डॉक्टर साहब को बात अब कुछ-कुछ समझ में आ रही थी।

संपर्क : हिंदी शिक्षा-साहित्यकार, 22/सी॰, जगत चौधरी रोड, पो॰ बरिशा, कोलकाता-8

गहरे अँधेरों को शब्दों से मिटाने का सफल प्रयास

कवि

पेशे से प्राध्यापक लखनलाल सिंह 'आरोही' का प्रथम कविता संग्रह है 'अँधेरे में शब्द'। कवि ने जब आस्वादार्थ और समीक्षार्थ इस पुस्तक को मुझे दिया तो इसके शीर्षक ने मुझे इसका स्वाद लेने को मजबूर किया। सच मानिए पिछले दिनों प्रो॰ राम बुझावन बाबू की पुस्तक के प्रकाशन के सिलसिले में मैं दिल्ली के लिए जब पटना से प्रस्थान किया तो संपूर्णक्रांति एक्स॰ गाड़ी में जाते वक्त ही मैंने एक साँस में संग्रह-की सारी कविताएँ पढ़ डालीं, कारण कि इसकी प्राय: सभी रचनाएँ अत्यंत सरल और आस-पास की हैं। हालांकि कई रचनाएँ ऐसी भी हैं जो हाथ लेती हैं और कुछ सोचने को विवश करती हैं। कवि जब कहता है;

कबतक/ फाड़कर अपनी/ आँख/ देवता के आगे/ गिड़गिड़ाते रहोगे?/ कबतक/ खाकर/ शोषण की मार/ शरीर का खून/ जलाते रहोगे?/ कबतक/ हाशिए पर/ पेड़/ नारों से/ भरमाते रहोगे? तब पाठक यह सोचने को मजबूर हो जाता है कि जनांदोलन अब ज़रूरी है और कवि अँधेरे में शब्द तलाशने लगता है।

साँप की हरकतें, गाँव की नदी, पेड़, गायों के दूध तथा पोखर के सूखने से कवि निराश नहीं होता, क्योंकि गाँवों के लोगों की आँखों का पानी अभी भी बाक़ी है। कवि को चिंता इस बात को लेकर है कि केवल आँखों का पानी छोड़कर बाक़ी प्रदूषण से लेकर ताप, ठंढ, बाढ़, आतंक और दुख का सैलाब, चेहरों का तनाव, रोटी-सब्ज़ी का दाम तथा रिश्तों में दुराव सबकुछ बड़ता ही जा रहा है। यह बात ठीक है कि गाँव अब पहले जैसा गर्व करने लायक़ नहीं रह गया है, शहर के सारे दुर्गुण और विद्रूपताएँ धीरे-धीरे गाँवों को भी अपनी आग़ोश में ले रखा है, मगर वहाँ के लोगों की आँखों का पानी ही उसकी प्रतिष्ठा को बचाए हुए है।

कवि ग्रामवासियों का ही एक हिस्सा है इसलिए गाँव की हर घटना को देखने और समझने का उसे मौक़ा मिलता है। आख़िर तभी तो बचपन में व्याह दी गई फुलिया को दुल्हा रास नहीं आने के बाद कवि उसके मन को टटोलता है और उसकी व्यथा समझता है। फुलिया का व्यथित मन गाँव के ही एक युवक सोनू को अपना जीवन साथी बनाने को विवश करता है और यही गाँव के लिए एक चुनौती बन जाती है। आख़िरकार पुलिस द्वारा सोनू को पकड़कर ले जाने के बाद फुलिया रात की साज़िश की शिकार हो नदी में मिल जाती है और इस प्रकार समाज को नंगा कर उसके मुँह पर तमाचा मार जाती है। समाज की विसंगतियों को कवि ने फुलिया की घटना के माध्यम से जिस प्रकार उजागर किया है उसकी दाद दिए बिना हम नहीं रह सकते। क्योंकि यह सब कवि की अनुभूति के स्तर पर महसूस होता है जो परिस्थितिजन्य है। इस प्रकार कवि आरोही

काव्य-संग्रह : अँधेरे में शब्द
कवि : प्रो॰ लखनलाल सिंह आरोही
समीक्षक : श्री सिद्धेश्वर
पृष्ठ : 80 मूल्य : 100-/

की कविताएँ संवेदना और अनुभव के दो किनारों को जोड़ती हैं इसलिए उनकी कविताओं में द्वंद्व से अधिक सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है। इनकी रचनाएँ बताती हैं कि कैसे इस उत्तरआधुनिक समय में संवेदनाएँ और संकुचित होती जा रही हैं।

अपनी कई कविताओं में साँप को केंद्र में रखकर कवि बार-बार एक ही बिंदु की परिक्रमा करता दिखता है। इसे मैं उनका कोई दोष नहीं मानता, बल्कि साँप के माध्यम से समाज के सर्पिली होते जाने का उनका संकेत साँप के प्रति उनकी अनुरक्ति की प्रगाढ़ता का परिचायक है।

अगर तड़प नहीं है तो प्रेम में समर्पण भी नहीं हो सकता। 'आरोही' जी की कविता तपन की कविता है, तड़प की कविता है। प्रेम पवित्र और सरल होता है इसलिए उसमें वक्रता नहीं होती। तभी तो 'अमृत-बोध' शीर्षक कविता में कवि कहता है; मेरी दृष्टि पर/ तुम्हारे/ छा जाते ही/ मेरा मन/ वृंदावन/ हो जाता है। छाया की क्या बात-/ काँटों की चुभन/ तुम्हारे स्पर्श का अमृत-बोध देती है।

कविता कला की पुजारी नहीं, भावों की प्रतिस्थापक है। कला ने भावों को अभिव्यक्त करने में अपना सहयोग प्रदान किया। इस संग्रह की कविताओं की भाषा सरल होने के साथ-साथ भावानुकूल और अर्थबोधक है, जो अभिव्यक्ति को सकारात्मकता प्रदान करती है। जनसाधारण का जो उद्वेग है, आवेग है उनकी जो जीवन प्रक्रिया है कवि 'आरोही' इस संग्रह की कविताओं में उसके संवाहक हैं। दरअसल, आज का प्रबुद्धजन अपने तामझाम की वजह से आम आदमी से कटता जा रहा है और जो साहित्य आम आदमी के जीवनानुभवों के बीच से नहीं निकलता वह आत्ममुग्धता का साधन बन जाता है। किंतु 'आरोही' जी की कविताओं से गुज़रने से ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी हर रचना, हर चरित्र जीवंत है। गाँव में रहने के चलते वहाँ की ज़िंदगी को उन्होंने रूपाकार दिया है, उसे अपनी रचना में सजाया है, जिसे देखने-समझने के लिए दृष्टि चाहिए। दृष्टि के अभाव में रचनाएँ निष्प्राण हैं।

बिना लाग-लपेट के कवि 'आरोही' ने अपनी वैचारिकता को अभिव्यक्त किया है। इस संकलन के 'अँधेरे के शब्द' शीर्षक कविता में मुझे याद आती हैं मुक्तिबोध की अत्यंत ही सुप्रसिद्ध कविता 'अँधेरे में' और कवि विश्वनाथ की एक कविता 'अँधेरे के ख़िलाफ़'। तेवर जानने के लिए उसकी इन पंक्तियों को देखें : मैंने/ जब भी अँधेरे के ख़िलाफ़ बग़ावत की है/ कुछ अँधेरपसंदों के हाथ और मुँह/ मुझे बुझाने के लिए बढ़े हैं किंतु अँधेरे के ख़िलाफ़/ मेरी बग़ावत रही है सदा जारी/ जलते-बुझते। बिना किसी बनावटीपन के कवि ने अपने अनुभवों से पाठकों को साक्षात्कार कराया है। अनेक कविताओं में इनका रोमांटिक रुप प्रकट हुआ है। रोमांटिक कल्पना के विविध रंग और अभिव्यक्ति के अलग ढंग हैं।

शेष पृष्ठ 28 पर देखें.....

कविवर तरुण के व्यक्तित्व व कृतित्व को उजागर करती कृति

किसी पुस्तक की समीक्षा करते वक्त दो बातों की ओर समीक्षक का ध्यान जाना ज़रूरी है। एक तो यह कि समीक्षा इसलिए की जाती है कि रचनाकार के लक्ष्य को, उसके भाव को ठीक-ठीक हृदयंगम करने में सहारा मिले, इसलिए नहीं कि समीक्षक की भाव-भंगी और सजीले पदविन्यास द्वारा अपना मनोरंजन करें। दूसरे यह रचनाकेंद्रीत होने के साथ-साथ रचनाएँ समस्याकेंद्रीत और विचारोत्तेजक हैं या नहीं। समीक्षक उसको केवल विश्लेषण-मूल्याँकन के लिहाज़ से नहीं देखे, बल्कि स्वयं रचनाकार की ऊर्जा से रचनाएँ प्राकृत हुई हों और रचनाएँ किसी बुनियादी सवालों से जूझने के लिए आमंत्रित करती हों, यह भी देखें। समीक्षक को केवल भावपक्ष, कलापक्ष के व्याख्यान तक सीमित रहने से बचने का प्रयास करना चाहिए। और हाँ, पुस्तक की सभी रचनाओं पर टिप्पणियाँ प्रस्तुत की ही जाएँ, यह कोई ज़रूरी नहीं।

–संपादक

किसी व्यक्ति की ऊँचाईं का शायद सबसे बड़ा प्रतिमान है उसका खुला व्यक्तित्व, उदार स्वभाव, सहजता, चिंतन और किसी के लिए भी सुलभ हो सकने की क्षमता। जब किसी रचनाकार के व्यक्तित्व और कृतित्व का विश्लेषण-आकलन किया जाता है तो यह भी देखना ज़रूरी होता है कि उसके चिंतन की अभिव्यक्ति लेखन में कहाँ तक फलीभूत हुई है। साहित्यकार प्रो॰ दीनानाथ 'शरण' द्वारा संपादित अभिनंदन ग्रंथ सरीखे प्रस्तुत ग्रंथ 'साहित्य के मौन साधक : कविवर तरुण' में संजोए विभिन्न स्तर के लेखकों की रचनाओं से गुज़रने पर ऐसा लगता है कि न केवल तरुण जी का व्यक्तित्व उक्त प्रतिमान में खरा उतरता है, उनका कृतित्व भी यह एहसास दिलाता है कि उनके चिंतन लेखन में फलीभूत हुए हैं। इस पुस्तक के सहयोगी रचनाकारों ने जहाँ कविवर तरुण के अतीत और वर्तमान के पृष्ठों को झाँकते हुए उनके प्रति अपनी प्रतिबद्धता दोहराई है, वहीं उनकी रचनाएँ तरुण जी के व्यक्तित्व, आचरण और चिंतन के साथ-साथ उनकी सरलता, सहजता से पाठकों को परिचित कराती हैं। साथ ही यह भी बतलाती हैं कि तरुण जी के रास्ते पर चलकर बदलते हुए परिवेश और समय के साथ चला जाए तो लेखक अपने अस्तित्व को बचाए रखने में समर्थ हो सकता है।

ग्रंथ के नायक तरुण जी कोशी के किनारे स्थित बिहार के सुपौल जिला में महानगर के कोलाहल और चकाचौंध की दुनिया से दूर रहते हैं। वे लोक में आशक्त नहीं होते हुए भी लोक हित का सदा ध्यान रखते हैं और लोग उनसे प्रेरणा लेते हैं। इस दृष्टि से जब हमारी नज़र रचनाकारों के विचारों पर जाती है तो हम पाते हैं कि ज्ञान-परंपरा किसी न किसी रूप में छनकर तरुण जी के आचरण और लोगों के विश्वास में उतर आई हैं। वेसे भी संकल्पपूर्वक प्रयत्न करते रहना, विनम्र होना, अपने को साहित्य और समाज के प्रति समर्पित कर देना और सन्मार्ग पर चलना एवं सीधी-साधी जीवन पद्धति से जीना जैसे उन्होंने अपनी आदत बना डाली है। अपने सच्चे और कुशल व्यवहार के कारण जिस व्यक्ति ने लोगों की प्रतिष्ठा पा ली है उसपर रचनाकारों के विचारों का जायज़ा लेना इसलिए भी ज़रूरी है कि सब का चखा रस अपने में समाहित कर लें।

ग्रंथ : साहित्य के मौन साधक : कविवर तरुण
संपादक : प्रो॰ दीनानाथ शरण
समीक्षक : डॉ॰ कुमार रजनीकांत रंजन
पृष्ठ : 214 मूल्य : 300-/

ग्रंथ के संपादक की 'कविता के कॉलोनी में नई इमारत' मेरी दृष्टि में विवादास्पद है। वे तरुण जी के संदर्भ में उनकी छायावादी प्रवृत्तियों की धारा में बहकर रामचरित मानस को भी तुच्छ बना देते हैं जो भीषण साहित्यिक भूल कही जा सकती है। जिस धर्मग्रंथ को जन-जन का कंठहार समझा जाता है और प्रसाद की 'कामायनी' एवं छायावाद अपने काव्यवैभव के बल पर अपनी विलक्षणता सिद्ध करती है और जो लोकमंगल, आदर्श एवं मान्यताएँ मानस के माध्यम से स्थापित की गईं उसी का प्रतिफल है कि वह ग्रंथ सर्वव्यापक हो गया। सात दशक पूर्व की छायावादी प्रवृत्तियों से संपन्न 'रेत के हाशिए पर' कविता की कॉलोनी में नई इमारत है तो क्या भावों, विचारों, नए प्रयोगों, नए चित्रों और नूतन बिंबों की दृष्टि से अज्ञेय युगीन कविताएँ पुरानी इमारत है?

डॉ॰ नवल किशोर प्रसाद श्रीवास्तव ने जहाँ तरुण द्वारा रचित 'रेत के हासिए पर' अपने विचार प्रस्तुत करते हुए उनमें व्यक्तिगत जीवन निष्ठा के साथ-साथ परंपरा एवं धर्म से उपार्जित अनुभूतियों का एहसास किया है, वहीं युगल किशोर प्रसाद ने संग्रह को संपूर्णता में परखने का प्रयास करते हुए इसके उद्देश्य और सुख-दुख के अद्‌भूत समन्वय को महत्त्वपूर्ण माना है। इनके अतिरिक्त मदनेश्वर झा, ब्रह्मदेव प्रसाद यादव, डॉ॰ रामचरण महेंद्र, राणाप्रताप सिंह, प्रो॰ चंदेश्वर प्रसाद सिंह, डॉ॰ वंदना वीथिका तथा डॉ॰ विनय कुमार चौधरी ने भी तरुण जी के काव्य में बिंबों, मिथकों एवं प्रतीकों के प्रयोग को स्वाभाविक एवं संप्रेषणीय कहा है।

इस प्रकार नए-पुराने साहित्यिक दिग्गजों के लेख एवं विविध सामग्रियों ने इसे आकर्षक उवं संग्रहणीय तो बनाया ही है, साहित्योदान से चुने गए विविध रंगों और महकवाले मनमोहक पुष्पों से यह माला भी बन गई है, जिसे साहित्य में रुचि रखनेवाला पाठक पहनना चाहेगा। संपादक तो इसके लिए बधाई के पात्र हैं, एहसान उनका भी जिनकी रचना रूपी पुष्पों से यह माला बन पाई है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि साहित्य की गरिमा विचार-शून्यता में नहीं, बल्कि विचारों की सार्थकता पर आधारित है। इस दृष्टि से तरुण जी की रचनाधर्मिता को इस पुस्तक के माध्यम से जाना जा सकता है। तरुण जी जीवन में कितना समष्टि व्यंजित हैं यह रचनाकारों द्वारा दर्शाए गए उनके भाव से पता चलता है, जिन्होंने तरुण जी के साथ निश्चित रूप से तादात्म्य बनाने में सफलता पाई है। इस अर्थ में पुस्तक की सार्थकता सिद्ध होती है। विश्वास है कि इसका साहित्य जगत में स्वागत किया जा सकेगा।

संपर्क : हिंदी विभागाध्यक्ष, आर.एन. कॉलेज, हाजीपुर, वैशाली।

भक्तिमूलक चरित्र की प्रस्तुति

हाइकु छंद में 'श्री रामदूत हनुमान' अंगिका और खड़ी हिंदी के साहित्यकार डॉ॰ नरेश पाण्डेय 'चकोर' ने हनुमान के भक्तिमूलक चरित्र को प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है। वैसे डॉ॰ 'चकोर' अंगिका काव्य के कवि तथा प्रभावी गीतकार हैं। पर ये खड़ी हिंदी में

हाइकु-संग्रह : श्रीरामदूत हनुमान
कवि : डॉ॰ नरेश पाण्डेय 'चकोर'
समीक्षक : डॉ॰ शत्रुघ्न प्रसाद
पृष्ठ : 64 मूल्य : 50-/

भी लिखते रहते हैं। इनकी यह रचना प्रयोग की दृष्टि से चर्चित होगी। यदि कविवर 'चकोर' रामदूत हनुमान का चित्रण व्यापक संदर्भ में करते तो यह प्रयोग अत्यधिक चर्चेय होता पर 'चकोर' जी भक्तिप्राण हैं। इस हाइकु काव्य की रचना के मूल में भक्ति भावना ही है। भक्तिभावना कवि की काव्य संवेदना बन गई है। इसलिए दक्षिण के वनवासी जीवन, वनवासी समूह की पीड़ा और साम्राज्यवादी रावण के असुरी दबदबे का संदर्भ पूरे रूप में सामने नहीं आ पाता। भक्तिमूलक परंपरित तथा बड़े सहज ढंग से हाइकु छंद में उतर कर हमें प्रसादित करती है। यह कवि की सफलता है।

कवि ने 'अपनी बात' में लिखा है- "श्रीहनुमान चालिसा एवं रामचरित मानस में जो कुछ पवनसुत के विषय में है वही आधार है इस पुस्तक का। मात्र मैंने तथ्य को जापानी पद्यविधा हाइकु में सजाया है।" इससे स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने युग के अनुकूल हनुमान चरित में कुछ जोड़ा घटाया नहीं है। इसलिए यह काव्य भक्ति काव्य के अंतर्गत परिगणित होगा। पर कवि के हाइकु प्रयोग की प्रशंसा तो करनी होगी। यह प्रयोग सफल है, क्योंकि सहज तथा सरल ढंग से हनुमान जी का चरित्र चित्रण हुआ है। अस्तु, हम कुछ उदाहरणों से प्रयोग का रसास्वादन कर सकते हैं-

हनुमान जी
भक्त अनुरक्त हैं
संत महान।

अपनी जान
देकर भक्तिदान
करें कल्याण

रघुनंदन
हनु के भोलेपन
देख मगन

संपर्क : त्रिपाठी भवन,
13 ए॰ राजेंद्र नगर,
पटना-16

हम आपसे ही मुख़ातिब हैं

पत्रिकाएँ और पुस्तकें खरीदकर पढ़ने में जितना मज़ा आता है उतना मुफ्त में पाकर नहीं। इसलिए जब आप 'विचार दृष्टि' पत्रिका के नमूना प्रति की माँग करें तो यह लिखना न भूलें कि आप इसकी सदस्यता ग्रहण करना चाहते हैं। पता नहीं क्यों पत्रिकाओं का सदस्य बनना अपना कर्त्तव्य नहीं, लोग उसे मुफ्त में झपटना अपना अधिकार समझते हैं।

दो वर्षों तक 'राष्ट्रीय विचार पत्रिका' और बाद में भारत के समाचार पत्रों के पंजीयक द्वारा 'विचार दृष्टि' शीर्षक अनुमोदित एवं निर्बाधित होने पर पिछले आठ साल से निरंतर इसकी प्रति आप प्रबुद्ध पाठकों एवं साहित्य-सेवियों के हाथों जा रही है और जिसके तेवर व कलेवर को भी आपने तहेदिल से स्वीकारा है। समझदारी का तकाज़ा है कि इसकी सदस्यता ग्रहण कर इसके नियमित प्रकाशन में अपेक्षित सहयोग करें। यह आप पाठकों की गरिमा के अनुरूप होगा और हम भी आपकी आकांक्षाओं एवं विश्वासों के अनुरूप एक स्वस्थ पत्रिका आप तक पहुँचाने में समर्थ हो सकेंगे। पिछले छः महीनों में इसकी सदस्यता ग्रहण में अभिरुचि लेकर आपने मुझे प्रोत्साहित किया है यह आपकी सदाशयता, उदारता एवं सेवाभाव का द्योतक है। हम तहेदिल से आभारी हैं आप सभी नए सदस्यों का। अगर आपकी सदस्यता समाप्त हो चुकी है तो एक सौ रुपए भेजकर उसका नवीनीकरण करा लें। पत्रिका परिवार की ओर से नव वर्ष की बधाई।

संपादकीय-प्रकाशकीय कार्यालय

'दृष्टि', यू. 207, शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92 फोन: 011-22059410 / 22530652
'बसेरा', पुरन्दरपुर पटना-800001 फोन: 0612- 2228519 एवं आर॰ ब्लॉक, पथ सं॰-5, आवास सं॰-सी॰/6, पटना- 800001 फोन: 0612- 2226905

....पृष्ठ 26 पर का शेषांश

भाषिक संरचना में संप्रेषणीयता है। यह काव्य-संग्रह संभावनाओं की ही आहट है, क्योंकि गाँव में रहकर सृजन करते हुए लघुघोषित कवि के स्वर से ऐसा प्रतीत होता है कि स्थापित और ख्यातिप्राप्त कवि की तरह ये भी सोचते हैं जिससे आनेवाले समय में कविता की सार्थकता सिद्ध होगी।

मुझे लगता है कि निजी अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने की कला को कवि 'आरोही' बखूबी जानते हैं। आखिर तभी तो उनका हृदयस्पर्शी वर्णन पाठक के मन को गहराई से छू लेता दिखाई देता है।

आज बहुत कम ऐसे रचनाकार हैं जो गाँव की बदली हुई स्थिति को उसकी गहराई और विस्तार के साथ अपनी रचनाओं के कलेवर दे सके। किंतु कवि 'आरोही' ने ठान लिया है - अँधेरा है जहाँ, हमें शब्द के दीप जलाना है। इस दृष्टिकोण से यह कहा जा सकता है कि कवि का तेवर सामाजिकता और मनुष्यता के उज्ज्वल पक्ष को उजागर करने के लिए लक्षित है। गहरी संवेदना और विलक्षण कल्पना-शक्ति को प्रकट करनेवाली रचनाएँ आधुनिकता के साथ ताज़गी और अनोखेपन को स्पष्ट करती हैं। तभी तो कवि की कविता के साथ पाठक एक ऐसी मुकम्मल दुनिया में प्रवेश करता है जहाँ छोटी से छोटी चीज़ें मन को कहीं गहरे छू जाती हैं। इस संकलन की सबसे दिलचस्प पहलू इसका विषय-वस्तु और कवि-कल्पना की उड़ान है जो आज की पीढ़ी को न केवल उभारती है, बल्कि उसपर मरहम लगाने का काम भी करती है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि 'आरोही' के शब्द अँधेरे की अनुभूतियाँ हैं, अनुभूतियों की गंगा है, जो पठनीय तो है ही मननीय भी है। समग्रता में मूल्याँकन यदि किया जाए तो यह कृति बोझिल ज़िंदगी से उबरने की कला सिखाती है।

संपर्क : 'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना -1

❋❋❋

माँ-बाप के प्रति संतान का कर्त्तव्य

○ डॉ॰ ज़ाहिद अनवर

क़ुरान पाक में माँ-बाप के संदर्भ में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है, "हमने इंसान को हिदायत की है कि वे अपने माँ-बाप के साथ अच्छा बर्ताव करता रहे। उसकी माँ ने कष्ट उठाकर उसे पेट में रखा और कष्ट उठाकर ही उसको जन्म दिया और उसके गर्भ और दूध छुड़ाने में तीस महीने लग गए।"

पाप की दो क़िस्में हैं - छोटा पाप और बड़ा पाप। बड़े पाप की भी दो क़िस्में हैं। पहला वह जिसका संबंध अल्लाह से सीधा है, उसे 'हक़्क़ुल्लाह' की संज्ञा दी गई है। दूसरा पाप वह है, जिसका संबंध अल्लाह के बंदे से होता है। जिस शख़्स ने अल्लाह का हक़ मारा अगर वह सच्चे दिल से तौबा कर ले और माफ़ी माँग ले तो अल्लाह उसे माफ़ कर सकता है। परंतु जिसने अल्लाह के बंदे का हक़ मारा या उसे नुक़्सान पहुँचाया हो उसे बंदा ही माफ़ कर सकता है। नमाज़, रोज़ा हज आदि से छोटा पाप माफ़ हो जाता है। मोहम्मद सल्लम ने माँ-बाप की नाफ़रमानी को बड़े पाप की श्रेणी में शुमार किया है।

मोहम्मद सल्लम का कथन है कि सारे गुनाहों की हैसियत यह है कि अल्लाह जिस पाप को चाहेगा माफ़ कर देगा मगर माँ-बाप की नाफ़रमानी करने वालों के संबंध में उसने यह निर्णय लिया है कि इस पाप के करनेवालों को उसकी मौत से पहले दुनिया में सज़ा देकर रहेगा। मोहम्मद सल्लम ने आने माँ-बाप को गालियाँ देनेवालों पर लानत (दुत्कार) भेजी है। माँ-बाप को गालियाँ देना बड़ा पाप है। आपके एक दोस्त ने पूछा कि "ऐ अल्लाह के रसूल! क्या आदमी अपने माँ-बाप को गालियाँ दे सकता है?" आपने फ़रमाया, "हाँ, वह एक शख़्स के बाप को गाली देता है तो दूसरा जवाब में उसके बाप को गाली देता है, वह उसकी माँ को गाली देता है तो वह भी उसकी माँ को गाली देता है।"

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि॰ कहते हैं कि मैंने रसूल अल्लाह सल्लम से प्रश्न किया कि "अल्लाह के यहाँ कौन-सा कृत सबसे अधिक प्रिय है?" आपने फ़रमाया, "समय पर नमाज़ अदा करना।" "फिर कौन-सा कृत?" आपने फ़रमाया "माँ-बाप के साथ अच्छा बर्ताव।" मैंने अर्ज़ किया, "फिर कौन-सा कृत?" आपने फ़रमाया, "अल्लाह की राह में जहाद।"

यही कारण है कि माँ-बाप के साथ अच्छा बर्ताव करना औलाद पर फ़र्ज़ क़रार दिया गया है। माँ-बाप मुसलमान हों या ग़ैर मुस्लिम औलाद को चाहिए उनका आदर-सम्मान करे। अगर उनकी आर्थिक स्थिति ख़राब हो तो आर्थिक मदद करे। उनके दिल को राहत पहुँचाए। अगर वे बीमार पड़ जाएँ तो उनका एलाज कराए और सेवा करे। आज्ञा-पालन करे। औलाद को यह छूट है कि अगर वे कोई ऐसी माँग करें जिसे अल्लाह पसंद नहीं करता, तो वह साफ़ इंकार कर सकता है।

एक बार अल्लाह के रसूल मोहम्मद सल्लम ने तीन बार कहा, "वह ज़लील और रुसवा हो।" पूछा गया, "हजूर कौन?" आपने फ़रमाया, "जिसके पास बूढ़े माँ-बाप हों या उनमें से कोई एक या दोनों मौजूद हों और वह जन्नत में न जाए।" इससे यह साबित हुआ कि वह शख़्स जन्नत का अधिकारी है जो बूढ़े माँ-बाप की सेवा-सत्कार, आर्थिक मदद आदि में कोताही न बरतनेवाला होगा।

एक बार एक शख़्स मोहम्मद सल्लम की सेवा में हाज़िर हुआ और जेहाद पर जाने की आज्ञा माँगी। आपने पूछा, "क्या तेरे माँ-बाप ज़िंदा हैं?" उसने कहा, "हाँ" आपने फ़रमाया, "तू उनके हक़ में जेहाद कर।" ज्ञातव्य है कि जेहाद में जिस्म को थका देनेवाली दौड़-धूप करनी पड़ती है और उद्देश्यपूर्ति के लिए माल भी ख़र्च करना पड़ता है। माँ-बाप के हक़ में जेहाद करो का अर्थ यह है कि उनको राहत और आराम पहुँचाने में माल ख़र्च करो और सेवा में इतनी मेहनत करो कि जिस्म थक जाए। उनकी ख़ुशी के लिए सदैव सक्रिय रहो।

जाहमा रज़ि॰ कहते हैं कि मैं नबी सल्लम के पास जहाद में शरीक होने का मश्विरा तलब करने गया। आपने फ़रमाया, "क्या तेरे माँ-बाप मौजूद हैं?" मैंने कहा "जी, हाँ।" आपने फ़रमाया, "तू उनके साथ रह, जन्नत उनके पाँव के नीचे है।"

एक बार एक शख़्स मोहम्मद सल्लम की सेवा में हाज़िर हुआ और कहा, "ऐ! अल्लाह के रसूल किसका सेवाधिकार मुझ पर ज़्यादा है?" आपने फ़रमाया, "तेरी माँ का।" उसने अर्ज़ किया, "उसके बाद फिर कौन?" आपने फ़रमाया, "तेरी माँ का।" उसने फिर कहा, "उसके बाद फिर कौन?" आपने फ़रमाया, "तेरी माँ का।" उसने कहा, "उसके बाद फिर कौन?" आपने फ़रमाया, "तेरे बाप का।"

अर्थात् कतिपय कारणों से माँ का हक़ अधिक है। वह गर्भ का बोझ उठाती है। बच्चे को जन्म देने की असहनीय पीड़ा सहती है। अपने दूध से बच्चे को पालती है। बच्चे की बीमारी और तकलीफ़ में अपने सुख-चैन को त्याग देती है। बचपन से उसकी देख-रेख करती है।

मुँह बोली माँ के साथ भी वही सलूक करना है। एक बार की घटना है कि मोहम्मद सल्लम के पास एक औरत आई तो वह उसके सम्मान में उठकर खड़े हो गए और उसके लिए अपनी चादर बिछा दी। पूछने पर पता चला कि वह मोहम्मद सल्लम की मुँह बोली माँ थीं।

मोहम्मद सल्लम का कथन है कि अल्लाह की रज़ामंदी बाप की रज़ामंदी में है अल्लाह की नाराज़गी बाप की नाराज़गी में है। तीन दुआओं की स्वीकृति में कोई शक नहीं है। बाप, मुसाफ़िर और मज़लूम की दुआ। हज़रत अबुसैयद रज़ि॰ का कथन है कि एक व्यक्ति मोहम्मद सल्लम के पास आकर कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल माँ-बाप की मृत्यु के बाद भी उनसे नेक सुलूक करना मेरे ज़िम्मे बाक़ी रहता है? आपने फ़रमाया, उनके लिए दुआ करना, उनकी मुक्ति की कामना करना, उनके संकल्प-वसीयत को लागू करना, उनके रिश्तेदारों से अच्छा बर्ताव करना और बाप के दोस्तों और माँ की सहेलियों का आदर करना।

संपर्क : कार्मिक प्रशासनिक सुधार तथा राजभाषा विभाग, झारखण्ड सरकार, राँची

'झूठा सच' में मुस्लिम मानसिकता

○ चंद्र मौलेश्वर प्रसाद

अंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त उपन्यासकार यशपाल का नाम हिंदी साहित्य में प्रेमचंद्र के बाद सर्वाधिक सशक्त लेखक के रूप में लिया जाता है। उनके वृहत् उपन्यास 'झूठा सच' में देश के विभाजन की त्रासदी के साथ-साथ मानव की मानसिकता के विचित्र पहलुओं का सुंदर चित्रण हुआ है।

'झूठा सच' की नायिका है तारा, जो विभाजन के तूफ़ानी दिनों में आपने संस्कार और ख़ानदानी मर्यादा की दुहाई पर मुस्लिम प्रेमी को त्याग कर हिंदू घराने में व्याह तो कर लेती है, परंतु दुर्भाग्य उसका पीछा नहीं छोड़ता। पति की उलाहना से बचने के लिए सुहागरात को ही घर से भाग निकलती है और देश के विभाजन को लेकर चल रहे आतंक के उस माहौल में एक मुस्लिम गुण्डे के हत्थे चढ़ जाती है। दूसरे दिन वहाँ की महिलाओं की बात-चीत में नारी मानसिकता देखी जा सकती है।

''यह तो हिंदनी है। इन्हें खराब किया तो क्या? ये बेहया इसी लायक है।''

''तेरे लिए हिंदू ऐसा कहें तो कैसा लगे? औरत को तो औरत का दर्द होना चाहिए। खुदा न करे तू किसी ऐसे के बस में पड़ जाए। अल्ला ताला ने हिंदू-मुसलमान मर्दों में तो फरक किया है, औरतों में तो उसने भी कोई फरक नहीं रखा।''

''मरे आपस में लड़ते हैं, मिट्टी औरतों की खराब होती है।''

''खुदावंद ने तो मर्द पर फर्ज आयद किया है कि औरत पर रहम करे और उसकी हिफाजत करे, क्योंकि औरत मर्द को अपने जिस्म से पैदा करती और पालती है।''

''खाक रहम और हिफाजत करते हैं। बेहया जहाँ से निकलते हैं उसी को बेइज्जत करते हैं। मर्द मुहब्बत करे तो, गुस्सा करे तो उनका तो सब जोर वहीं उतरता है।''

लाहौर के उस इलाके के जानेमाने वयोवृद्ध समाजसेवी हाफ़िज़ जी के हवाले तारा को किया जाता है। वे तारा को अपने घर ले जाते हैं और अपने परिवार के साथ रखते हैं। उनकी बेगम जब हिंदुओं और मुसलमानों में स्त्री की तुलनात्मक अवस्था की बात छेड़ती है तो हाफ़िज़ जी बताते हैं कि ''हिंदुओं की सभ्यता आदिम और बर्बर है। वे लोग औरत को अपने हैवानों की तरह खानदान की जायदाद समझते हैं। बेवा को खाविंद की लाश की साथ जला देना सवाब समझते हैं। इससे ज्यादा और हैवानियत क्या होगी! इस्लामी शरह में लड़के-लड़की दोनों को जायदाद पर हक़ दिया गया है। तलाक़ का हक़ मर्द और औरत दोनों को हासिल है। मर्द को एक वक़्त में चार से ज़्यादा बीबियाँ रखने का हक़ नहीं। हिंदुओं में चार हज़ार पर भी पाबंदी नहीं है ... उनका किरशन, जिसे हिंदू अपना खुदा मानते हैं, सोलह हजार औरतों से तालुक़ रखता था। लेकिन हिंदू की औरत अगर बेवा हो जाए तो शादी का हक नहीं रखती। हिंदू की बहीन, बेटी, औरत एक दिन के लिए राह भटक जाए, बाप या शौहर से दूर रह जाए तो फिर घर में जगह नहीं पा सकती। हिंदू लोग तो औरत को मिट्टी का कुल्हड़ समझते हैं। एक शख़्स ने पानी पी लिया और उसे फेंक दिया ... खुदा ने औरत को फरिश्तासीरत बनाया है लेकिन इबलीस (शैतान) उसके दिमाग पर गालिब रहता है। इसलिए शरह में हुक्म है कि वह मर्द की हिफाजत में रहे - बचपन में बाप की हिफजत में, जवानी में शौहर की और बुढ़ापे में अपने बेटों की ...।''

तारा सुनती रही और सोचती रही कि स्त्री को पर्दे और बुर्के में बंद रखने वाले, मर्दों के सामने आने का हक न रखने वाली स्त्रियों की स्वतंत्रता और मर्दों से समता की बातें कितनी अनर्गल हैं। इन बातों का असर तारा पर नहीं होता है और जब वह इस्लाम कबूल नहीं करने की इच्छा व्यक्त करती हे तो हाफ़िज़ जी की बहू कहती है-

''इन हिंदनियों को लावारिस गाय-बछिया की तरह उघाडें मुँह-सिर और गली-बाजारों में भ्रमने-फिरने की आदत हो जाती है। वे शरीफ-बाइज्जत औरतों की तरह पर्दे में कैसे रह सकती हैं? हम लोगों के ऊपर बुर्का न हो तो दरवाजे के बाहर कदम उठाना मुश्किल। खुदा की कहर पड़े इन बेहयाओं पर। हया न हुई तो औरत किया हुई?''

ऐसा नहीं है कि इस उपन्यास के सभी मुस्लिम पात्र हिंदुओं के प्रति द्वेष रखते हैं। तारा का प्रेमी असद एक बहस के दौरान यह मानता है कि ''हिंदुत्व कोई मजहब या धर्म विश्वास नहीं है। वह एक समाज और संस्कृति है। उसमें विश्वासों के बंधन नहीं, व्यवहार के बंधन हैं। आप भगवान में विश्वास करें तो हिंदू, विश्वास न भी करें तो अपने-आपको हिंदू कह सकते हैं। आप चाहे जैसे भगवान में, साकार में या निराकार में, एक ही भगवान में, या अनेकों भगवान में विश्वास कर सकते हैं। अवतारों में विश्वास कीजिए या न कीजिए; ब्रह्म, जीव और माया को एक मानिए या पृथक-पृथक; पुनर्जन्म को भी मानने या न मानने की स्वतंत्रता है। बंधन केवल सामाजिक खान-पान और विवाह के नियमों का है। हिंदू समाज में चिंतन की स्वतंत्रता है व्यवहार की नहीं। इस्लाम ऐसी स्वतंत्रता सहन नहीं कर सकता। इस्लाम चिंतन का नहीं विश्वास का मार्ग है। आप खुदा से मुनकिर नहीं हो सकते। आप खुदा से मुनकिर हैं तो आप काफिर हैं। यहीं तक हद नहीं है, इस खुदा का एक रसूल भी मानना होगा और वह रसूल केवल मोहम्मद साहब को मानना होगा। आप आज के विज्ञान और तकनीक से खुदा के संबंध में तर्क नहीं कर सकते, क्योंकि जिस वक़्त मुहम्मद साहब पर इस्लाम का इलहाम नाज़िल हुआ था वहाँ विज्ञान मौजूद नहीं था।''

यशपाल का यह उपन्यास 'झूठा सच' एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ माना जाता है

संपर्क : 1-8-28, यशवंत भवन, अलवाल, सिकंदराबाद 500010 (आं॰प्र॰)

भारतीय राजनीति में पनपती वंशवाद की प्रवृत्ति

○ सिद्धेश्वर

स्वातंत्र्योत्तर काल में जहाँ इस देश में जन्मना वर्ण व्यवस्था मिटकर जातिविहीन समाज-संरचना का संकल्प किया गया है, वहीं भारतीय राजनीति में आज वंशवाद की प्रवृत्ति बड़ी तेज़ी से पनपती जा रही है। पता पहीं राजनेता अपने वंश को ही सत्ता की सीढ़ियों पर आगे बढ़ाने पर क्यों तुले हैं? इसे भारतीय राजनीति की विडंबना ही कही जाए कि एक ओर भारतीय राजनीतिज्ञ पड़ोसी देश नेपाल में सहस्त्राब्दियों से चली आ रही राजशाही की जगह लोकतंत्र बहाल करने के लिए प्रयत्नशील हैं, तो दूसरी ओर अपने देश को वंशवादी राजतंत्र के गड्ढे में ढकेलने में सहयोग दे रहे हैं।

दरअसल भारतीय राजनीति में वंशवाद की शुरुआत नेहरू परिवार से ही हुई है। सन् 1950 ई॰ के बाद काँग्रेस में जो विभाजन का क्रम चला उसमें स्वतंत्रता-संग्राम के सेनानी काँग्रेस से बाहर होते रहे और वंशवाद सत्ता के चाटूकारों की संख्या बढ़ती गई और आज जो काँग्रेस शेष बची है, उसे 120 साल पुरानी काँग्रेस का उत्तराधिकारी बताया जा रहा है, यह इतिहास के साथ अन्याय नहीं तो और क्या है?

काँग्रेस ने तो महात्मा गाँधी से लेकर सरदार पटेल, डॉ॰ राजेन्द्र प्रसाद, मदन मोहन मालवीय, अबुलकलाम आज़ाद, महामना तिलक, नेताजी सुभाष चंद्र बोस, मौलाना मज़हरूल हक़, के॰ कामराज, डॉ॰ राममनोहर लोहिया, डॉ॰ भीमराव अंबेदकर तथा लोकनायक जयप्रकाश नारायण जैसे शीर्ष नेता रहे, जिन्होंने आज़ादी के लिए अपना सबकुछ न्योछावर कर दिया और आज़ादी के बाद देश को विकास पथ पर ले जाने के लिए सदैव प्रयंत्नशील रहे, किंतु इन लोगों ने अपने परिवार को कहाँ आगे बढ़ाया, जबकि मोतीलाल नेहरू ने अपने पुत्र जवाहरलाल नेहरू के लिए काँग्रेस के अध्यक्ष पद के लिए याचना की। फिर नेहरू ने अपनी बेटी इन्दिरा जी को अध्यक्ष बनाया और वह फिर प्रधानमंत्री बनीं। इन्दिरा जी ने भी पहले अपने बेटे संजय गाँधी को आगे बढ़ाया और फिर उनकी अकाल मृत्यु और स्वयं इंदिरा गाँधी की हत्या के बाद राजीव गाँधी को उत्तराधिकारी के रूप में प्रधानमंत्री बनाया गया। फिर राजीव गाँधी की हत्या के बाद सहानुभूति लहर पाकर उनकी इटालियन

पत्नी सोनिया गाँधी काँग्रेस की अध्यक्ष की कुर्सी पर विराजमान हो गईं। पिछले लोक सभा चुनाव में काँग्रेस की जीत होने पर सोनिया जी ने स्वयं प्रधानमंत्री के पद पर न बैठकर डॉ॰ मनमोहन सिंह को कुर्सी थमाई, जिसका राज़ आज तक राज़ बना हुआ है, हालाँकि इसे सोनिया जी के त्याग की संज्ञा दी जा रही है। आज का हाल तो यह है कि रायबरेली में संपन्न लोकसभा के उप चुनाव में सोनिया जी के रेकार्ड मतों से जीत का श्रेय इनके पुत्र राहुल गाँधी के नेतृत्व को दिया गया। चाटूकारिता की तो हद तब हो गई जब अजीत जोगी जैसे 25 काँग्रेस के सांसदों ने 'सोनिया को प्रधानमंत्री बनाओ', 'राहुल को बड़ा पद दो' का चारण राग अलापकर वंशवाद की प्रवृत्ति को पनपाया। इन चाटूकारों को यह पता नहीं कि काँग्रेस में राहुल जैसे युवा नेता की तरह ज्योतिरादित्य सिंधिया, सचिन पायलट, नवीन जिंदल, मिलिंद देवड़ा, जतिन प्रसाद और संदीप दीक्षित आदि जैसे प्रतिभाशाली क्षमतावादी युवा नेता तैयार हैं। हालाँकि ये भी सब के सब वंशवाद का ही प्रतिनिधित्व करते हैं, फिर भी इनके रहते राहुल गाँधी को ही ऊँचा उठाने की बात से वंशवाद की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने का संकेत तो मिलता ही है। सच मानें तो सोनिया जी का अब एकमात्र उद्देश्य यह दिखता है कि वह अपने पुत्र राहुल गाँधी की सत्ता कुर्सी पर आसीन किया जाए और उनकी इसी मंशा को भाँपकर या यों कहें कि उनकी सारी पैतरेबाज़ी के पीछे काँग्रेस के चाटूकार नेता उनकी तरफदारी कर रहे हैं। हालांकि यह भी सच है कि काँग्रेस ही नहीं, भारत की प्राय: सभी राजनीतिक पार्टियाँ वंशवाद को बढ़ावा देने में अग्रसर हैं। जहाँ सपा के मुलायम सिंह यादव अपने पुत्र अखिलेश सिंह यादव, लोजपा के रामविलास पासवान अपने भाई रामचंद्र पासवान सहित अपने सगे-संबंधियों को आगे बढ़ाने में पीछे नहीं हैं, वहीं शिवसेना के बाल ठाकरे ने अपने सुपुत्र उद्भव ठाकरे, के॰ करुणानिधि ने अपने पुत्र स्टालिन तथा राजद के लालू प्रसाद ने अपनी पत्नी राबड़ी देवी को बिहार की मुख्यमंत्री और फिर उससे उतरने के बाद प्रतिपक्ष की नेता बनाकर भी तो उसी वंशवाद की परंपरा को आगे बढ़ाया है। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री तथा जनता दल (एस॰) के अध्यक्ष एच॰ डी॰ देवेगौड़ा ने येन-केन-प्रकारेण अपने सुपुत्र कुमार स्वामी को कर्नाटक के मुख्यमंत्री की कुर्सी पर बैठाकर आख़िर किससे पीछे रहे? अब तो भारतीय राजनीति में पनपते वंशवाद की स्थिति यह है कि 'को बड़ छोट कहत अपराधू' की कहावत चरितार्थ हो रही है।

केवल संवेदना और सहानुभूति के आधार पर किसी दिवंगत नेता के बेटे या बेटी को राजनीति में ले आना एक तरह से परिवारवाद को बढ़ावा देना है। आज के दौर में देश की प्राय: सभी पार्टियों में नेता के मरने के बाद उसकी संतान को ही उत्तराधिकारी बनाना एक प्रचलन-सा हो गया है। हर मेधावी नेता का पुत्र मेधावी नहीं होता और न ही वह अपने पिता के समान सफलता हासिल करने की गारंटी लिए होता है। इस दृष्टिकोण से नेताओं की संतानों को उत्तधिकारी बनाना एक तरह से

लोकतंत्र के विरुद्ध है। राजनेताओं के परिजनों को तो अपनी रुचि, स्वभाव, क्षमता और राजनीतिक कौशल के आधार पर ही राजनीति में प्रवेश करना चाहिए।

पनपते वंशवाद के संबंध में एक बात और क़ाबिले ग़ौर है कि धृतराष्ट्र की तरह पुत्रमोह में अँधे होकर न जाने कितने राजनेताओं की राजनीतिक चुनरियों पर ऐसा दाग़ लगा है कि उनके राजनीतिक भविष्य को ही समाप्त करके रख दिया है। अभी अभी की ताज़ा घटना यूँ है कि काँग्रेस के वयोवद्ध नेता नटवर सिंह को 'अनाज के बदले तेल' योजना के तहत न्यायमूर्ति पाठक की जाँच रिपोर्ट को लेकर अपने पद के दुरुपयोग का दोषी ठकराया गया है, क्योंकि उन्होंने अपने बेटे जगत सिंह को मित्रमंडली के साथ इराक़ भेजा और उन्होंने अपने पुत्रप्रेम में फँसकर इराक़ी तेल मंत्री को तीन पत्र लिखे, जिसके परिणामस्वरूप इराक़ की तत्कालीन सरकार ने 20 लाख बैरल तेल के परमिट जारी कर दिए और इस तरह नटवर सिंह ने अपने बेटे को लाभ पहुँचाया। इसी के चलते उन्हें न केवल विदेश मंत्री पद से हाथ धोना पड़ा, बल्कि काँग्रेस कार्यसमिति की सदस्यता भी गंवानी पड़ी और अब तो उन्हें काँग्रेस से निलंबित भी कर दिया गया है। भारतीय राजनीति में ऐसी घटनाएँ कई राजनेताओं के साथ आए दिन घट रही हैं और इस मायने में प्राय: सभी राजनीतिक दलों के राजनेता एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं।

आपको याद होगा कि पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह कहा करते थे कि राजनीतिज्ञ जब भी मरता है अपनी संतान के हाथों अर्थात् सत्ता में बैठे व्यक्ति की राजनीतिक मौत उसकी संतान के हाथों ही होती है। इस सिलसिले में वह सबसे पहला उदाहरण पंजाब के मुख्यमंत्री स्व॰ प्रताप सिंह कैरो का दिया करते थे। पुत्र मोह से संबंधित घटनाओं का एक ही सबक़ है कि महाभारत के धृतराष्ट्र की तरह राजनीतिज्ञ पुत्रमोह में अँधे नहीं हों अन्यथा ज्ञानी जैल सिंह का यह कथन हमेशा सच सिद्ध होता रहेगा कि सत्ता में बैठे व्यक्ति की राजनीतिक मौत उसकी संतानों के हाथों होती है।

❋❋❋

पृष्ठ 34 का शेषांश

हालांकि यह भी सच है कि कुछ राज्य ज़ोरदार विरोध करते हैं कि ज़िलों और पंचायतों पर सीधे ध्यान देकर केंद्र सरकार उनकी अवहेलना कर रही है। लेकिन वास्तव में केंद्र को यह अधिकार है कि वह पैसा उस संस्था को दे सकता है, जहाँ उसका इस्तेमाल बेहतर ढंग से हो सके। अप्रैल 1993 में हुए संविधान के 73 वें संशोधन और जून, 1993 में निगमों से संबंधित 74 वें संशोधन के बाद ग्राम स्तर पर धन की तरफ ध्यान आकर्षित हुआ है।

केंद्र से सीधे धन के हस्तांतरणों से पंचायतों और नगरपालिकाओं जैसे स्थानीय निकायों के लिए किसी महत्त्वपूर्ण फ़ायदे की अपेक्षा करने में अभी वक़्त लगेगा, कारण कि ग्रामीण समाज का आज जो माहौल है और राजनीति में नैतिकता की जिस तेज़ी से गिरावट होती जा रही है उसमें धन का उचित उपयोग हो सकेगा, इसमें संदेह है। राजनेताओं की तरह पंचायती राज व्यवस्था से जुड़े पदाधिकारियों में भी पारदर्शिता की कमी देखी जा रही है। पर यह भी सच है कि पंचायती राज व्यवस्था को उनके प्रतिनिधि ही प्रभावशील बना सकते हैं बशर्ते कि प्रतिनिधि सही व्यक्ति हों और अपने क्षेत्र के विकास के लिए उनमें ज़ज़्बा हो। स्थानीय स्वशासन प्रणाली की अवधारणा तभी फलीभूत हो सकती है।

❋❋❋

लेखकों से विशेष आग्रह

'विचार दृष्टि' को रचनात्मक सहयोग प्रदान करनेवाले लेखकों से विशेष आग्रह है कि इस तकनीकी युग के साथ चलने के लिए वे अपनी रचनाएँ कंम्यूटर पर कम्पोज करा कर उसका सी.डी. कोरियर से अथवा निम्न ई-मेल पर भेजने की कृपा प्रदान संपादक-मंडल को कृतार्थ करें ताकि संपादकीय-परिवार का समय बर्बाद न हो। असुविधा के लिए मैं क्षमा चाहता हूँ।

संपादक

e-mail :sidheshware66@yahoo.com

संसदीय इतिहास में एक शर्मनाक क्षण

केंद्र सरकार द्वारा लाभ के पद को लेकर राष्ट्रपति की आपत्तियों के बावजूद उस विधेयक को जस का तस उन्हें लौटाने का निर्णय न केवल संविधान और लोक तंत्र की भावना को कुचलनेवाला फ़ैसला कहा जाएगा, बल्कि इसे भारत के संसदीय इतिहास के लिए एक शर्मनाक क्षण भी माना जाएगा, क्योंकि यह विधेयक क़ानून बनाने वालों यानी सांसदों द्वारा अपने अधिकार के मनमाने इस्तेमाल का परिचायक तो है ही, लाभ के पद पर अवैधानिक रूप से क़ाबिज़ देश के लगभग 200 जनप्रतिनिधियों को अनुचित तरीक़े से संरक्षण देने का एक शर्मनाक और ओछा उदाहरण भी है। राष्ट्रपति की सर्वथा उचित आपत्तियों को दरकिनार कर केवल संसद का ही दुरुपयोग नहीं, बल्कि राष्ट्रपति का भी अनादर किया गया है। इस मामले में एक मनमानी यह भी हुई कि इस विधेयक को पिछली तिथि से प्रभावी बनाया गया है। केंद्र सरकार के इस क़दम से न केवल उसके तानाशाही रवैए एवं मनोवृति की झलक मिलती है, बल्कि राजनेताओं एवं सांसदों की स्वार्थपरतता भी स्पष्ट नज़र आती है। सप्रग सरकार के इस अनैतिक कार्य के पीछे वामपंथी दलों के संकीर्ण राजनीतिक स्वार्थों का भी पता चलता है, क्योंकि बड़ी संख्या में वाम दलों के सांसदों की सदस्यता पर ख़तरा मंडरा रहा था। सांसदों की संसद सदस्यता इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं हो सकती कि संवैधानिक मर्यादाओं की उपेक्षा और अनदेखी कर दी जाए, लेकिन लाभ के पद संबंधी विवादस्पद् विधेयक को उसके मूल रूप में राष्ट्रपति को लौटाने के इस क़दम को सप्रग सरकार के लिए सरासर ग़लत कहा जाएगा और अनैतिक भी।

अनुयायी जिन्होंने दुनिया को राह दिखाई

ये सुविधाभोगी सांसद

○ राधाकांत भारती

दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक गणतंत्र भारत की राजधानी नई दिल्ली में स्थित विशालकाय गोल इमारत संसद भवन में बैठकर करोड़ों नागरिकों का प्रतिनिधित्व करने वाले सांसद क्या करते हैं, क्या नहीं करते हैं, यह ग़ौर करने की बात है। विदित हो कि निर्वाचन क्षेत्र की जनता बड़े अरमान के साथ जनप्रतिनिधि को चुन कर संसद भेजती है, जिन पर उनकी कई उम्मीदें टिकी रहती हैं। किंतु नई दिल्ली के गोलघर में पहुँचकर सांसद अपनी ज़मीन तथा मतदाताओं को भूल जाते हैं। इसी का प्रतिफल है कि अगले चुनाव में उसी क्षेत्र से पुनः निर्वाचित होने का प्रतिशत दस से भी कम हो जाता है।

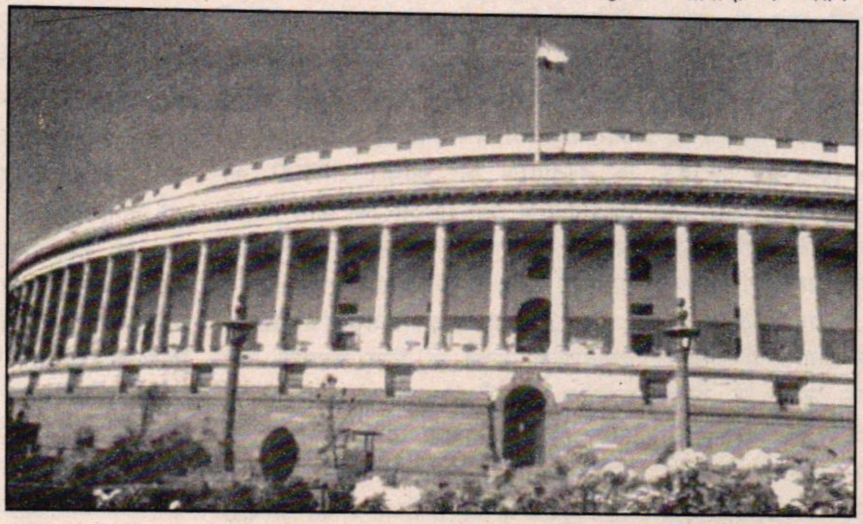

लोकसभा हो या राज्यसभा सांसदों का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य राष्ट्रहित में सदन के पटल पर प्रस्तुत विधेयक पर तर्कसंगत बहस कर पास करना तथा बजट सत्र के दौरान विभिन्न मंत्रालयों के कार्यकलापों पर प्रभावपूर्ण सलाह देना है। इसके अतिरिक्त लेखा अनुदान तथा विभिन्न परामर्शी समितियों, उप समितियों के द्वारा सरकारी कार्यों में सहभागिता की भूमिका अदा करनी है। सांसद अपने इन कर्तव्यों का निर्वाह ठीक ढंग से कर सकें इस वास्ते उन्हें वेतन तथा भत्तों के अलावे उन्हें अनेक प्रकार की सुविधाएँ प्रदान की गई हैं।

सांसदों के वेतन-भत्तों के निर्धारण के लिए गठित के॰पी॰सिंहदेव समिति की सिफ़ाशि के आधार पर आज एक सांसद का वेतन 12 हज़ार से बढ़ाकर 16 हज़ार रु॰, दैनिक भत्ता 500 से 1000 रु॰ तथा सड़क मार्ग भत्ता 08 रु॰ से बढ़ाकर 13 रु॰ प्रति किलोमीटर कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त कार्यालय व्यय 14 हज़ार से बढ़ाकर 21 हज़ार, मासिक पेंशन 3000 हज़ार से बढ़ाकर 6000 रु॰ कर दिए गए हैं। यही नहीं चुनावक्षेत्र भत्ता भी 1400 हज़ार से बढ़ाकर 20 हज़ार रु॰ कर दिए गए हैं। इस वृद्धि पर सभी दल सहमत हैं। केवल वाम दलों के सांसदों ने ही इसका विरोध किया, जिसको दूसरे दलों के सांसदों ने 'पाखंड' कहा तो किसी ने इसे 'ढकोसला' बताया। वामदलों की नैतिकता व सिद्धांतों की सभी दलों के सांसदों ने जमकर बखिया उधेड़ी।

यह तथ्य आँखें खोलनेवाला है कि एक सांसद पर सरकारी ख़र्च क़रीब चार लाख रुपए प्रतिवर्ष होगा और एक मंत्री पर यह ख़र्च लगभग दो गुना हो जाएगा। जहाँ तक संसद के ख़र्च का सवाल है, वह प्रति मिनट 27 हज़ार तीन सौ रुपए है। व्यवधान और हंगामें के कारण प्रति सत्र में संसद की कार्यवाही 50 से 60 घंटे बर्बाद होती है। समय की यह बर्बादी न हो क्या इसके लिए सरकार कोई कारगर उपाय ढूँढ़ेगी? क्योंकि सांसदों को तो इसके लिए कोई चिंता नहीं है। सांसद जब अपने क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करते हैं तब उन्हें व्यवधान करने का कोई अधिकार नहीं दिया जा सकता।

उल्लेख्य है कि हमारे जनप्रतिनिधियों को वेतन और भत्ते के अलावा मामूली किराये पर दिल्ली में शानदार आवास मिलता है, जिसका किराया वास्तव में 30 से 35 हज़ार रुपए से कम नहीं होता है। फिर उन्हें अपने संसदीय क्षेत्र में दौरे के लिए संसदीय भत्ता जिसका दर प्रति किलो मीटर 13 रुपए हो गया है। ग़ौर तलब है कि सांसदों के वेतन-भत्ते पर कोई आयकर नहीं लगता जबकि एक अल्पवेतन भोगी को आयकर देना पड़ता है। क्या एक ग़रीब लोकतांत्रिक देश के लिए यह लाज़िमी है? सांसदों का तर्क है कि दुनिया के किसी भी देश के सांसदों से इस देश के सांसदों का वेतन-भत्ते कम हैं। इस तर्क में कोई दम इसलिए नहीं है कि इस देश में ग़रीबी रेखा से नीचे जीनेवालों की जितनी संख्या है उतनी किसी और देश में नहीं। मगर सांसदों को इसकी चिंता नहीं। सांसदों को टेलीफोन-सेलफोन, बिजली, आतिथ्य-सत्कार, लैपटॉप कम्प्यूटर-प्रिंटर आदि निःशुल्क दिया जाता है। इसके अतिरिक्त अपने संसदीय क्षेत्र विकास-निधि के तहत दो करोड़ रुपए सालाना मिलते हैं, जिससे उनकी आय में कितनी वृद्धि होती है, कहा नहीं जा सकता।

इन सभी सुविधाओं के मद्देनज़र यदि सांसद अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति सजग रहकर संसदीय कार्यों को पूरा करें यह उनका राष्ट्रीय दायित्व बनता है। यदि नहीं तो लोकतंत्र की यह संसदीय प्रणाली हमें कहाँ ले जाएगी, कहना मुश्किल!

संपर्क : 56, नगिन लेक अपार्टमेंट, पीरागढ़ी, नई दिल्ली-87

❋❋❋

प्रतिनिधिक लोकतंत्र के लिए पंचायती राज व्यवस्था

○ सिद्धेश्वर

भारत को दुनिया के सबसे अधिक प्रतिनिधिक और सहभागितावाले लोकतंत्र के रूप में स्थापित करने के लिए स्थानीय स्वशासन पद्धति को संस्थागत स्वरूप प्रदान करना आवश्यक है। पंचायती राज व्यवस्था इसी दिशा में एक कड़ी है। ग्राम स्वराज के माध्यम से गाँधी जी के पूर्ण स्वराज के सपने को साकार करने में गाँव में आर्थिक और संस्थागत सुधारों में ताल-मेल अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। कुछ इसी भाव से प्रेरित होकर भारत सरकार द्वारा सत्ता के विकेंद्रीकरण हेतु संविधान के 73 वें संशोधन द्वारा पंचायतों को विस्तृत स्वरूप प्रदान करने का एक ठोस ढाँचा और दिशा दी गई है। विनिर्दिष्ट शर्तों के अधीन पंचायतों को ऐसी शक्तियाँ और उत्तरदायित्व प्रतिनिर्धारित किए गए हैं, जो उन्हें स्वायत शासन की संस्था के रूप में कार्य करने में समर्थ बनाती है। पंचायत ग्रामीण जीवन के संचालन में आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय के लिए योजनाएँ तैयार करेंगी और उन्हें कार्यान्वित करेंगी। स्पष्टत: ग्राम्य विकास की हर महत्त्वपूर्ण विधा पंचायत के कार्यक्षेत्र के अधीन होगी।

वर्तमान पंचायती राज व्यवस्था के तहत पंचायतें सामाजिक, नैतिक एवं प्रजातांत्रिक रूप से न्यूनतम अवरोधों और रुकावटों के बिना कार्य कर सकें तथा गतिशील बनी रहें, इसलिए पंचायतों का कार्यकाल पाँच साल रखा गया है। हर पाँच साल के पश्चात् पंचायतों का आम निर्वाचन कराना संवैधानिक व्यवस्था के अनुसार राज्यों के लिए बाध्यकारी है। पंचायतों का सम्यक एवं सुचारू निर्वाचन संपन्न कराने हेतु संविधान के अनुच्छेद 243 के द्वारा प्रत्येक राज्य में राज्य निर्वाचन आयोग के गठन की व्यवस्था की गई है। पंचायतों के लिए कराए जानेवाले सभी निर्वाचनों के लिए निर्वाचक नियमावली तैयार करने का और इन सभी निर्वाचन के संचालन का अधिक्षण, निदेशन और नियंत्रण इस राज्य निर्वाचन आयोग में निहित होगा जिसमें राज्यपाल द्वारा नियुक्त किया गया एक राज्य निर्वाचन आयुक्त होगा।

पंचायती राज व्यवस्था के तहत चुने गए निकायों को स्थानीय स्वशासन संस्थान के रूप में कार्य करने के लिए पर्याप्त अधिकार सौंप दिए गए हैं पर अभी बहुत कुछ करना बाकी है। दरअसल दिसंबर, 2002 में संसद में पेश की गई शहरी तथा ग्रामीण विकास की स्थाई समिति की सैंतीसवीं रिपोर्ट में इस क्षेत्र में संभावनाओं की ओर संकेत किया गया है। इस रिपोर्ट के प्रमुख मुद्दों के रूप में कार्यों, पदाधिकारियों और कोष की चर्चा की गई थी। यहाँ कार्यों के हस्तांतरण का आधार सब्सिडी का सिद्धांत रखा गया था और जो कार्य निचले स्तर पर किया जा सकता है, उसे उच्च स्तर को नहीं सौंपा जाना चाहिए।

सरकार के द्वारा योजनाओं को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए पंचायतों जैसे स्थानीय स्तर के संस्थानों को संसाधनों का सीधा हस्तांतरण किया जाना आवश्यक है, क्योंकि ये संस्थाएँ स्थानीय स्तर की समस्याओं को निपटाने में दिल्ली स्थित शक्ति के केंद्रों से ज़्यादा सक्षम होती हैं। दरअसल कार्य करने का ऊपर से नीचे का नज़रिया समाजवादी योजना प्रक्रिया के देन है, जो विकेंद्रीकरण के गाँधीवाद के आदर्शों से बिल्कुल विपरीत है। लेकिन परिस्थितियाँ बदल रहीं हैं क्योंकि उच्च स्तरों पर भी पंचायतों को स्थानीय शासन सौंपने के दृष्टिकोण को राजनीतिक समर्थन मिल रहा है। आखि़र तभी तो पिछले दिनों आयोजित पंचायती राज सम्मेलन में प्रधानमंत्री डॉ॰ मनमोहन सिंह ने पंचायती राज व्यवस्था को पूर्ण रूप से लागू करने की सिफ़ारिश की ताकि ग्रामीण भारत में 70 करोड़ आबादी को 70 करोड़ अवसरों में तब्दील किया जा सके। वर्तमान सरकार द्वारा पंचायती राज मंत्रालय के नाम से एक अलग मंत्रालय बनाना भी यह सिद्ध करता है कि सरकार पंचायती राज समितियों के सहयोग से गाँवों के विकास और स्वशासन के लिए वचनबद्ध है।

इस बीच विश्व बैंक ने ग्रामीण शासन के लिए राजकोषीय विकेंद्रीकरण विषय पर अपनी रिपोर्ट में कहा है कि ग्राम पंचायतों के पास स्थानीय स्वशासन के रूप में काम करने के लिए संवैधानिक जनादेश तो है, परंतु उनके पास सार्थक अर्थवान तरीके से काम करने के लिए पर्याप्त मात्रा में विवेकाधीन संसाधन नहीं है। राज्यों और उच्च स्तरीय सरकारों से ग्राम पंचायतों के मामलों में साझा योजनाओं की निगरानी को छोड़कर अनावश्यक दख़लांदाज़ी से बचने का सुझाव देते हुए विश्व बैंक ने कहा कि ग्राम पंचायतों को चलाई जानेवाली योजनाओं की ज़िम्मेदारी से मुक्त रखने की कोशिश की जानी चाहिए।

उल्लेखनीय है कि प्रत्येक वर्ष भारत सरकार द्वारा तक़रीबन 17 हज़ार करोड़ रुपए की राशि ग्रामीण विकास की विभिन्न योजनाओं पर ख़र्च की जाती है। लेकिन संभवत: यह राशि अधूरी है, क्योंकि सरकारी सहायता से चल रही प्रारंभिक शिक्षा सहित अनेक योजनाओं में भी ग्रामीण एक हद तक शामिल होता है। इस प्रकार यह राशि सकल घरेलू उत्पाद के बाज़ार मूल्य का कुल 0.6 प्रतिशत से एक प्रतिशत बैठती है। पर संसाधनों की उपलब्धता के हिसाब से यह एक अच्छी-ख़ासी राशि है। फिर भी वास्तविकता यह है कि स्थानीय स्वशासन प्रणाली के तहत पंचायती राज व्यवस्था कर्नाटक, प॰ बंगाल, केरल, गुजरात जैसे देश के कुछ ही राज्यों में प्रभावी ढंग से काम कर पा रही है। ऐसे हाल में डॉ॰ मनमोहन सिंह ने सुझाया है कि ऐसी व्यवस्था अपनानी चाहिए, जिससे ज़िलों को उनकी ग़रीबी के आधार पर सीधे संसाधन दिए जाएँ ताकि वे ऐसी योजना बना सकें तथा रणनीतियों पर अमल कर सकें जिनसे उनकी संसाधन क्षमता का श्रेष्ठतम उपयोग किया जा सके। ग्रामीण विकास के बेहतर असर के लिए इससे अधिक कारगर साधन और कोई नहीं है।

शेष पृष्ठ 32 पर देखें

वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था : समस्याएँ और समाधान

डॉ॰ नवल किशोर प्रसाद श्रीवास्तव

किसी भी देश की राजनीतिक और सामाजिक स्थिति का आकलन उसकी शिक्षा व्यवस्था से किया जाता है। भारत की वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था और भारतीय शिक्षा संस्थानों पर एक नजर डालने से उनकी छवि बहुत अच्छी नहीं उभरती, खासकर बिहार और उत्तर प्रदेश में यह व्यवस्था आज अराजक दौर में है। मेरठ विश्वविद्यालय में पिछले दिनों परीक्षा संबंधी घटनाओं पर जो बवाल खड़ा हुआ वह उच्च शिक्षा का एक भयानक दृश्य कहा जाएगा। कहा जाता है कि वहाँ उच्च शिक्षा संबंधी परीक्षाओं की कापियाँ आठवीं के बच्चे पृष्ठ गिन-गिनकर जाँच रहे थे, फेल-पास कर रहे थे। बिहार के विद्यालयों-महाविद्यालयों की हालत भी किसी से छिपी हुई नहीं है। दरअसल शिक्षा की गुणवत्ता के लिए सबसे जरूरी है शिक्षा का सही माहौल, गुणवत्तावाले शिक्षक और भविष्यपरक शिक्षणदृष्टि। विद्वान शिक्षाशास्त्री प्रो0 (डॉ0) नवल किशोर प्रसाद श्रीवास्तव ने वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था पर प्रकाश डालते हुए उसकी समस्याओं और समाधान के क्रम में इन्हीं बिंदुओं पर विस्तार से चर्चा की है जो सत्ता पर बैठे हुकमरानों के लिए शिक्षा के नीति-निर्धरण में निश्चित रुप से दिशा-निर्देश का काम करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है। ऐसे सारगार्भित एवं तथ्यपरक लेख के लिए लेखक को कोटिशः साधुवाद।

— संपादक

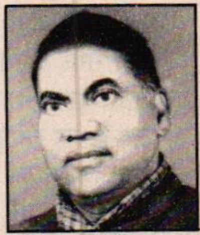

शिक्षा का मानव-जीवन में बड़ा ही अधिक महत्त्व है। यह शिक्षा ही है जो मानव को समस्त मानवेतर प्राणियों से विलग कर उसकी श्रेष्ठता प्रमाणित करती है। 'शिक्षा' लगभग 'विद्या' का ही पर्याय है। इसकी महत्ता की कोई इयत्ता नहीं। कहा भी गया है-'नास्ति विद्या समम् चक्षुः' अर्थात् विद्या के समान कोई आँख नहीं है क्योंकि यह प्रत्यक्ष के दर्शन तो कराती ही है, अप्रत्यक्ष के रहस्य का भी उद्भेदन कर देती है। इतना ही नहीं, यह हमें सभ्य और सुसंस्कृत बनाती था हममें मानवीय संवेदना जाग्रत करती है। फिर, विद्या के संबंध में यह उक्ति भी तो प्रसिद्ध है कि 'विद्ययोमृतमश्नुते' अर्थात् विद्या अमृत-तृल्य है जो हमें अमरत्व प्रदान करती है। आज व्यास, वाल्मीकि, कबीर, जायसी, सूर आदि मरकर भी इसलिये अमर हैं क्योंकि इन सबने विद्या रूपी अमृत का पान किया था। जहाँ व्यास और सूर ने अपने साहित्य का अमृत पिलाकर कृष्ण को आज तक जीवित रखा है वहाँ वाल्मीकि और तुलसी के तूलिकामृत ने राम को अमर बना दिया है।

यह विद्या या शिक्षा ही है जो पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) की प्राप्ति कराती है। तभी तो कहा गया है-

'विद्या ददाति विनयम् विनयाद्यदाति पात्रत्वाम्।
पात्रत्वाद्धनमाप्नोप्ति धनात् धर्मम् ततः सुखम्।।'

अर्थात् विद्या विनय देती है, विनय पात्रता प्रदान करता है, पात्रता से धन की प्राप्ति होती है,

धन से धर्म होता है और तब सुखोपलब्धि होती है।

विद्या हमें सब प्रकार के बंधनों से मुक्त कराती है- 'सा विद्या या विमुक्तये'। इसलिए मनुष्य को मरने-मरने के दिन तक विद्यार्जन करना चाहिये। शिक्षा की प्राप्ति करनी चाहिए। इस संबंध में यह नीतिश्लोक बड़ा ही प्रसिद्ध है-

'अजरारवत् प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिंतयेत्।
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत् ।।'

अर्थात् अपने को अजर-अमर समझते हुए विद्या और धन की प्राप्ति के लिए चिंतन करना चाहिए और जब मृत्यु चोटी पकड़ ले तो धर्म का आचरण करना चाहिये।

विद्या वह सर्वोपरि धन है जिसे न तो कोई बाँट ले सकता है और न कोई उसे चुरा ही सकता है।

विद्या या शिक्षा सब प्रकार से हमारे लिए हितकर, सुखकर और श्रेयस्कर है। जिस समय कोई हमारा साथ नहीं देता, उस समय विद्या ही हमारा साथ देती है। वह हमें जीवन जीने की शैली सिखाती है। वह हमारा ही नहीं, बल्कि हमारे परिवार का भी भरण-पोषण करती है और हमें समाज में प्रतिष्ठा दिलाती है। वह हमें सुयोग्य नागरिक बनाती है और जाने हमारा कौन-कौन उपकार करती है। विद्या या शिक्षा निश्चय ही हमारे लिए हमारी माता के समान उपकारी और गुणकारी है।

इसमें संदेह नहीं कि विद्या या शिक्षा हमें अज्ञान से ज्ञान की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर और मृत्यु से अमरता की ओर ले जाती है।

प्राचीन काल में अपने देश भारतवर्ष के अंतर्गत विभिन्न ऋषियों और आचार्यों के विद्यापीठ हुआ करते थे, जिसमें जन-साधारण से लेकर बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं की संतान तक शिक्षा प्राप्त करती थी। मगर अब वैसे विद्यापीठ नहीं रहें। नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला इत्यादि विश्वविद्यालयों में तो देश-विदेश के विभिन्न भागों से लोग शिक्षा प्राप्त करने के लिए आते थे, क्योंकि उन विश्वविद्याालयों की अपनी कुछ अलग ही विशेषताएँ होती थीं- उनके कुछ अलग ही आदर्श थे और उनकी अपनी कुछ अलग ही नीतियाँ थीं, किंतु ऐसे सभी विश्वविद्यालय विदेशी आक्रमणकारियों द्वारा नष्ट कर दिये गये।

वर्तमान समय में शिक्षा की जो व्यवस्था अन्य देशों में है, वह कुछ हद तक ठीक है, मगर अपने देश भारतवर्ष में और विशेषतः बिहार -झारखण्ड में शिक्षा की जो व्यवस्था है, वह दोषपूर्ण है। यही कारण है कि आज सर्वत्रशैक्षिक अराजकता व्याप्त है। वर्तमान शिक्षा के क्षेत्र की निम्नलिखित समस्याएँ हैं-

(क) आज शिक्षा व्यवसाय बन गयी है। लोग ध्नार्जन के लिए विद्यालय और महाविद्यालय खोल- कर बैठे हैं। आज प्रत्येक मुहल्ले में कुकुरमुत्ते की तरह कन्वेंट स्कूल उग आये हैं जिनका उद्देश्य मात्र अधिक-से-अधिक धन कमाना है और शिक्षा प्रदान करना कम । वहाँ बाह्य-प्रदर्शन अधिक है, मगर पठन-पाठन की व्यवस्था न्यून। ऐसे शिक्षण-संस्थाओं द्वारा अभिभावकों का बहुत अधिक आर्थिक शोषण हो रहा है। बच्चे पुस्तकों के भार से दबे जा रहें हैं। ऐसी स्थिति में शिक्षा का स्तर ऊँचा हो सके तो कैसे?

(ख) आज सर्वत्र शिक्षा-माफियाओं का बोलबाला हो गया है। इन माफियाओं के चलते शिक्षा में ह्रास हो रहा है। इनके कारण परीक्षा के पूर्व ही प्रश्न-पत्रों की गोपनीयता भंग हो जाती है। लाखों-लाखों रुपये लेकर मेडिकल, इंजीनियरिंग आदि की परीक्षाओं में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण करा देने की गारंटी इन माफियाओं द्वारा ली जाती है। इतना ही नहीं, नौकरियों के लिए जो परीक्षाएँ आयोजित की जाती हैं, उनमें भी सफलता की गारंटी दी जाती है। इस तरह के मेधा-घोटाला कई-कई बार उजागर हो चुके हैं। ऐसी विषम परिस्थिति में शिक्षा के क्षेत्र मे सुधार लाना आज एक जटिल समस्या बन गयी है।

(ग) बहुतेरे विद्यालयों के भवन या तो जीर्ण-शीर्ष अवस्था में हैं या गिर चुके हैं और छात्रों को या तो पंचायत-भवन में या किसी वृक्ष नीचे पढ़ाया जाता है। इन विद्यालयों के पास कोई उपकरण भी नहीं है। वहाँ बेंच, डेस्क, टेबल, कुर्सी, ग्लोब, नक्शा, खल्ली, डस्टर, ब्लैक बोर्ड, पानी, बिजली इत्यादि का पूर्णतः अभाव है। बहुतेरे विद्यालयों या महाविद्यालयों में मात्र एक-दो ही कमरे हैं। ऐसी स्थिति में वहाँ अध्यापन-कार्य हो तो कैसे?

(घ) शिक्षकों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर कम, और पैसे-पैरवी तथा जाति के आधार पर अधिक हुई है और हो रही है। प्राथमिक विद्यालयों से लेकर महाविद्यालयों तक में अधिकतर नियुक्ति दोषपूर्ण ढंग से की गयी है। कुछ शिक्षक जाली प्रमाण-पत्रों के आधर पर नियुक्त कर लिये गये है। कुछ ऐसे भी शिक्षक है जो स्थानांतरण-पत्र के आधर पर विभिन्न विद्यालयों मे अपना योगदान देकर कार्य कर रहे है, जबकि उनकी नियुक्ति कभी हुई ही नहीं। इसकी जाँच का प्रयास सरकार की ओर से हुआ था, मगर यह मामला इतना उलझनपूर्ण है कि सरकार का वह प्रयास बिल्कुल निष्फल हो गया। निश्चयमेव अयोग्य अध्यापक अध्यापन-कार्य में सक्षम नहीं दीखते और अपने कर्त्तव्य तथा उत्तरदायित्व से विमुख रहते हैं। फिर शिक्षा में सुधार आये तो कैसे? शिक्षा में गुणवत्ता आने की बात तो दूर रहीं, उसमें उत्तरोत्तर ह्रास हो रहा है।

(छ) बहुतेरे विद्यालयों में छात्रों की संख्या बहुत अधिक है, मगर वहाँ एक-दो ही शिक्षक हैं। क्या ये शिक्षक विभिन्न वर्गों के उतने अधिक छात्रों पर नियंत्रण रख सकेंगे और उन्हें ईमानदारीपूर्वक पढ़ा सकेंगे? कदापि नहीं। इस समस्या का निदान करना भी अत्यावश्यक है।

(च) शैक्षिक वातावरण के दूषित होने का एक कारण यह भी है कि शिक्षा-संबंधी विभिन्न समितियों के अध्यक्ष सचिव या सदस्य आदि के पदों पर अथवा विश्वविद्यालयों में कुलपति, प्रति कुलपति, कुलसचिव आदि जैसे महत्त्वपूर्ण और उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर यदा-कदा भ्रष्ट, अयोग्य और तथाकथित विद्वान राजनीतिक पैरवी और पैसे के बल पर अपनी नियुक्ति करा लेने में सक्षम हो जाते हैं जिससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है और समुचित ढंग से कार्य नहीं हो पाता है। फलतः, शैक्षिक अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(छ) विश्वविद्यालयों या महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम बनानेवाले किसी वाद (ISM) से प्रभावित होने के कारण जो पाठ्य-क्रम तैयार करते है, वे दोषपूर्ण बनकर एक अलग ही समस्या खड़ी कर देते है।

(ज) शिक्षा-बोर्ड, शिक्षा-परिषद् और विश्वविद्यालयों द्वारा एकेडेमिक कैलेण्डर नहीं प्रकाशित किये जाते, जिस कारण भी तरह-तरह की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

(झ) विश्वविद्यालय समय पर अपना बजट और युटिलाइजेशन सर्टिफिकेट सरकार को नहीं दे पाते जिससे हंगामा तथा हड़ताल हो जाया करता है। फलतः शिक्षकों और शिक्षकेतर कर्मचारियों में रोष उत्पन्न हो जाता है जिससे भी अध्यापन-कार्य बाधित होता है। यह जान-बुझकर उत्पन्न की गयी समस्या है।

(ञ) विद्यालयों या महाविद्यालयों की संचालन-व्यवस्था, अध्यापन-व्यवस्था, कार्यतालिका-निर्माण आदि तो त्रुटिपूर्ण होती ही है, परीक्षा-प्रणाली भी दोषपूर्ण है, जिसके चलते न तो प्रायः तथाकथित शिक्षक ही पढ़ाने में रुचि लेते है और न छात्रलोग ही अध्ययन के प्रति रुचि और सजगता दिखलाते हैं। इससे शिक्षकों और छात्रों के बीच परस्पर गुरु-छात्र-संबंध स्थापित नहीं हो पाता और उन दोनों के बीच दूरियाँ बढ़ती जाती हैं। ऐसी स्थिति में पठन-पाठन का कार्य बाधित होना स्वाभाविक ही है। पठन-पाठन न होने के कारण छात्र परीक्षा में गलत चीट-पुर्जो का प्रयोग कर किसी-किसी तरह परीक्षा में उत्तीर्ण तो हो जाते है, मगर जीवन की परीक्षा में उन्हें असफल हो जाना पड़ता है। ऐसे ही छात्र नौकरी न मिलने पर लूट, अपहरण आदि का धंधा अपना लेते हैं या आतंकवादी बन जाते हैं। यह निश्चय ही एक गंभीर समस्या है।

(ट) विद्यालयों या महाविद्यालयों की प्रयोगशालाओं में उपकरणों का अभाव है।

किसी-किसी महाविद्यालय में तो प्रयोगशाला भी नहीं है। कदाचारयुक्त परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त बहुतेरे शिक्षकों ने विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों को देखा तक नहीं है, फिर उनका नाम बताने या उन्हें पहचानने की बात तो दूर रही।

(ठ) अनेक शैक्षणिक संस्थान ऐसे हैं जहाँ न तो सामान्य कक्ष हैं, न मनोरंजन या खेल-कूद की व्यवस्था ही। इन संस्थानों में पुस्तकालयों और वाचनालयों का नामोनिशान तक नहीं है और न पत्र-पत्रिकाएँ ही वहाँ मँगायी जाती हैं। फलतः रिक्त समय में छात्र लोग व्यर्थ की बातों में समय व्यतीत कर लेते हैं या खुराफात करते हैं। मगर, इस समस्या की ओर भी किसी का ध्यान नहीं जाता।

(ढ़) प्रायः विद्यालयों या महाविद्यालयों में न तो कोई सेमिनार होता है और न महापुरुषों की जयंतियाँ ही मनायी जाती हैं। ऐसे संस्थानों में छात्रों के बीच विभिन्न प्रकार की प्रतियोगिताएँ भी आयोजित नहीं होती हैं। परिणामतः छात्रों की मेधा-शक्ति का विकास नहीं हो पाता है। यह भी एक चिंतनीय समस्या है।

(ड) सबसे गंभीर बात तो यह है कि विश्वविद्यालयों में शोध-कार्य का स्तर भी गिरता जा रहा है। प्रायः शोध-प्रबंध अपने पूर्व के शोध-प्रबंध के विश्लेषण मात्र होते हैं। बहुतेरे शोध प्रबंध शोध-छात्र स्वयं न लिखकर किसी अन्य व्यक्ति से लिखवाते है और पी-एच0डी0, डी0 लिट् तथा डी-एस0सी0 की उपाधियाँ प्राप्त कर लेने में सक्षम हो जाते हैं। ऐसे शोध-प्रबंधों से न तो कोई नया तथ्य सामने आ पाता है और न किसी अभाव की ही पूर्ति हो पाती है।

(ण) विश्वविद्यालयों द्वारा आयोजित परीक्षा-प्रणाली तथा उत्तर पुस्तिकाओं के परीक्षण की पद्धति भी कई कारणों से दोषपूर्ण है। यह भी एक गंभीर समस्या है।

(त) सरकारी नीति और आरक्षण के कारण अन्य तबके के मेधावी एवं पढ़ने-लिखनेवाले छात्रों का नामांकन नहीं हो पाता तथा जाति के नाम पर ऐसे छात्रों का नामांकन कर लिया जाता है जिन्हें पढ़ाई-लिखाई से कोई मतलब नहीं होता या न के बराबर मतलब होता है। ऐसे छात्र विद्यालयों या महाविद्यालयों में आते ही नहीं या यदा-कदा आ भी जाते है तो शैक्षिक वातावरण को दूषित बनाये बिना नहीं रहते। बहुतेरे अच्छे छात्रों का अच्छे शिक्षणालयों में नामांकन नहीं हो पाता है और उन्हें मजबूर होकर ऐसे शिक्षण-संस्थानों में नामांकन कराना पड़ता है जहाँ पढ़ाई की उत्तम व्यवस्था नहीं होती है। शिक्षण-संस्थाओं में विद्यार्थियों की अनुपस्थिति का यही कारण है। यह समस्या भी ध्यान देने योग्य है।

(थ) जबतक विद्यालयों या महाविद्यालयों का सरकारीकरण नहीं हुआ था, वहाँ की कार्यकारिणी समिति या प्रबंधकारिणी समिति अथवा तदर्थ समिति के शासन या भय से अच्छी पढ़ाई होती थी, मगर सरकारीकरण होते ही पढ़ाई में उदासीनता देखी जा रही है। सरकारी विद्यालयों की अपेक्षा अभिभावकगण अपने पाल्यों को कान्वेंट स्कूलों में भेजना अधिक अच्छा समझते हैं। यह भी एक विचित्र विडंबना है।

(द) विद्यालय या महाविद्यालय के प्रायः शिक्षकों द्वारा अपने-अपने आर्थिक लाभ के लिए कोचिंग इंस्टीच्यूट चलाये जाते हैं। ऐसे शिक्षक अपने-अपने स्कूलों या कॉलेजों में न के बराबर जाते हैं या जाते भी हैं तो समय पर नहीं। यह भी एक विचित्र समस्या है।

(ध) पहले के शिक्षक लोग न तो किसी नशा का सेवन करते थे और न व्यर्थ के विवाद में पड़ते थे। छात्र ऐसे शिक्षकों के आदर्श चरित्र का अनुकरण करते थे। छात्रों की गलती पर शिक्षकों द्वारा दी गयी सजा के विरोध में अभिभावकलोग कुछ न बोलते थे, क्योंकि उनके हृदय में शिक्षकों के प्रति श्रद्धा का भाव होता था और उन्हें पूर्ण विश्वास था कि शिक्षक उनके पाल्यों को सुधारने-हेतु उन्हें दंडित करते हैं, मगर आज तो स्थिति इतनी गंभीर हो गयी है कि शिक्षकों द्वारा छात्रों को तनिक भी डाँटे-फटकारे जाने पर लोग उन शिक्षकों से झगड़ पड़ते है या उनके विरूद्ध मुकदमा तक कर देते हैं। इसलिए शिक्षकलोग छात्रों की गलतियों पर ध्यान नहीं देते और केवल पढ़ाने से या यों कहें कि समय काट लेने से अपना मतलब रखते हैं। फलतः, अधिकतर छात्रों में उदंडता आती जा रही है। ऐसे छात्र होटलबाजी करते हैं, शाम के समय चौक-चौराहों पर गप्पें हाँकते हैं, छेड़खानी करते हैं, गंदे-गंदे चल-चित्र देखते हैं और नशा का सेवन करते हैं। फिर उनका चारित्रिक विकास हो तो कैसे, अध्ययन के प्रति उनमें रुचि जगे तो कैसे और उनमें गुणवत्ता आये तो कैसें? यह भी एक गंभीर समस्या है।

अब प्रश्न उठता है कि शिक्षा-संबंधी इन समस्त समस्याओं का समाधान कैसे किया जाय? इन समस्याओं के समाधन के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना अत्यावश्यक है:-

(1) वर्तमान शिक्षा-पद्धति से भिन्न अलग ही एक गुणात्मक और मनोवैज्ञानिक शिक्षा-नीति का निर्धरण करना होगा। इस शिक्षा-नीति की निर्माण-समिति में किसी भी राजनीतिक दल से जुड़े लोगों को या दबंग नेताओं के चहेतों या सगे-संबंधियों को सदस्य न बनाकर विशुद्ध विद्वानों को सदस्य बनाना चाहिए।

(2) विभिन्न विद्यालयों से उर्दू, फारसी और संस्कृत आदि को हटाकर कुछेक विद्यालय या महाविद्यालयों में उनके अध्यापन की व्यवस्था करनी चाहिए क्योंकि उन-उन विषयों में छात्रों की संख्या नगण्य रहने के कारण उनसे मासिक शुल्क के रूप में सौ-दो सौ रुपये तक ही आ पाते हैं और अध्यापकों पर हजारों-हजार रुपये मासिक वेतन के रूप में खर्च करने पड़ते हैं। इससे सरकार तथा शिक्षण-संस्थानों को काफी वित्तीय भार वहन करना पड़ता है और आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है।

(3) जिन-जिन समर्थ इंजीनियरिंग कॉलेजों, मेडिकल कॉलेजों और शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों की मान्यता रद्द कर दी गयी है, उन्हें फिर से मान्यता दे दी जानी चाहिए।

(4) प्राथमिक विद्यालयों और मध्य विद्यालयों के छात्र-छात्राओं को खिचड़ी बनाकर खिलाने का प्रावधान बंद कर दिया जाना चाहिए। मैंने अपनी आँखों देखा है कि शिक्षक लोग चावल, दाल, नमक, लकड़ी आदि का प्रबंध कर खिचड़ी बनाने में लग जाते हैं। इसमें दो-ढाई घंटे समय लग जाते है और छात्र-छात्राओं को खिचड़ी खाने में आधे घंटे का समय लग जाता है। जब तक खिचड़ी बनती रहती है, तबतक छात्र-छात्राओं का ध्यान उसी ओर केंद्रीत रहता है, पढ़ाई पर नहीं। खिचड़ी खाते ही वे सब विद्यालय से नौ दो ग्यारह हो जाते हैं। इस प्रकार के दैनिक

भोज-भंडारे शिक्षकों और छात्र-छात्राओं के कर्त्तव्य-मार्ग में बिल्कुल बाधक हैं। प्रत्येक महीने खिचड़ी पर जितने पैसे व्यय किये जाते है उनसे शिक्षा संबंधी अन्य महत्त्वपूर्ण विकास-कार्य किये जा सकते हैं।

(5) जिन-जिन शैक्षणिक्र संस्थानों के भवन जीर्ण-शीर्ष अवस्था में हैं उनकी मरम्मत की जानी चाहिए और जहाँ भवन है ही नहीं, वहाँ नये भवन का निर्माण किया जाना चाहिए।

(6) शिक्षकों की नियुक्ति पूर्णतः अहर्ता के आधार पर होनी चाहिए, जाति या संप्रदाय के आधार पर नहीं, पैसे और पैरवी के आधार पर नहीं।

(7) शिक्षकों की नियुक्ति अध्यापन-कार्य के लिए की जाती है। अतः उन्हें अन्य कार्यों में नहीं लगाना चाहिए।

(8) विद्यालयों या महाविद्यालयों की देख-रेख के लिए अथवा सुचारू रूप से अध्यापन कार्य-संचालन-हेतु प्रत्येक शैक्षिक संस्थानों में निगरानी-समिति का गठन किया जाना चाहिए।

(9) प्रत्येक उच्च विद्यालय और महाविद्यालय में एक-एक डाकघर, एक-एक बैंक और एक-एक पुलिस-चौकी की व्यवस्था होनी चाहिए।

(10) प्रत्येक शिक्षक और शिक्षकेत्तर कर्मचारी के लिए खादी के अलग-अलग विशेष परिधान होने चाहिए और संस्थान-परिसर में किसी भी प्रकार के मादक-द्रव्य के सेवन पर रोक लगायी जानी चाहिए।

(11) छात्रावासों में किसी भी प्रकार के अस्त्र-शस्त्र रखने पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए।

(12) प्रत्येक शिक्षण-संस्थान में योग तथा सैनिक-शिक्षा की व्यवस्था अनिवार्य रूप से होनी चाहिए।

(13) स्तरीय पाठ्यक्रम का निर्माण कराया जाना चाहिए एवं प्रत्येक वर्ष एकैडेमिक कैलेण्डर का प्रकाशन किया जाना चाहिए।

(14) विद्यालयों या महाविद्यालयों में जमकर सैद्धांतिक और प्रायौगिक वर्ग चलाये जाने चाहिए।

(15) प्रत्येक छात्र के लिए प्रतिमाह 75 प्रतिशत उपस्थिति अनिवार्य रूप से होनी चाहिए और शैक्षिकों को 10 बजे पूर्वाह्न से 4 बजे अपराह्न तक अपने-अपने संस्थानों में उपस्थित रहना अनिवार्य कर देना चाहिए।

(16) आवश्यकता से अधिक लंबी छुटिट्यों में कटौती होनी चाहिए जिससे अधिक-से-अधिक वर्ग चल सकें।

(17) मौलिक शोध-प्रबंध लिखा जाना चाहिए और शोध का स्तर भी ऊँचा उठाया जाना चाहिए जिससे शिक्षा के क्षेत्र में एक अभाव की पूर्ति हो सके।

(18) प्रत्येक माह के अंतिम सप्ताह में विद्यालयों और महाविद्यालयों के प्रत्येक कार्य की समीक्षा होनी चाहिए जिससे किसी भी प्रकार की त्रुटि का निवारण किया जा सके।

(19) परीक्षा-प्रणाली में सुधार होनी चाहिए और उत्तर-पुस्तिकाओं की जाँच अन्य राज्य के शिक्षकों द्वारा करायी जानी चाहिए जिससे परीक्षार्थियों की मेधा का सही-सही आलकन और मूल्याँकन किया जा सके।

(20) विद्यालय या महाविद्यालय के शिक्षकों द्वारा ट्यूशन पढ़ाये जाने पर तो प्रतिबंध ा लगाया ही जाना चाहिए, कोचिंग इंस्टीच्यूट खोलने या उसमें पढ़ाने पर भी रोक लगायी जानी चाहिए।

(21) प्रत्येक शैक्षिक संस्थान में मासिक शुल्क तथा परीक्षा-शुल्क में थोड़ी बढ़ोत्तरी की जानी चाहिए जिससे सरकार पर अधिक वित्तीय भार न आ सके।

(22) प्रत्येक शिक्षण-संस्थान में सामान्य कक्ष, खेल-कूद के साधन, पुस्तकालय और वाचनालय तथा पत्र-पत्रिकाओं की व्यवस्था होनी चाहिए।

(23) केवल कागज पर चलने वाले शिक्षण-संस्थानों या फर्जी शिक्षण-संस्थानों को बंद कर दिया जाना चाहिए।

(24) समाज और राज्य की आवश्यकता को देखते हुए नये-नये इंजीनियरिंग कॉलेज, मेडिकल कॉलेज, शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय आदि खोले जाने चाहिए।

संपर्क : पूर्व अध्यक्ष,
स्नातकोत्तर हिंदी विभाग,
आर0 एन0 कॉलेज, हाजीपुर
(वैशाली)

....पृष्ठ 39 का शेषांश

की भावना को उभारा जाए। सरदार पटेल के वे मूल्य पुनः स्थापित किए जाएँ जो अपने देश पर मर मिटने का जज़्बा भरते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि आतंकवाद का बढ़ता ख़तरा हमारे लोकतंत्र पर ख़तरे का सबब बना हुआ है। आज़ादी की भारी गठरियों के साथ 562 देशी रियासतें, बँटा-टूटा समाज, जर्जर अर्थ व्यवस्था, ख़स्ताहाल प्रशासन, पाक नाम के पिशाज का हर पल सर पर सवार प्रतिरोधी रूप, सामाजिक कूप्रथाएँ, प्रशासनिक अनुभवहीनता के साथ और न जाने क्या-क्या लगा बँध मिला था, मगर सरदार पटेल ने दूरदर्शिता, सूझ-बूझ और अदम्य् साहस की बदौल सभी 562 देशी रियासतों को मिलाकर हमें न केवल अखंड भारत प्राप्त हुआ, प्रथम गृहमंत्री होने के नाते सरदार पटेल ख़स्तेहाल प्रशासन को चुस्त-दुरुस्त किया। जब गाँधी और पटेल चले गए तब हम देशवासी छले गए अपनों, सपनों से। ऐसा लगता हे कि आज हमने आज़ादी की 60 वीं सालगिरह मनाने के वक़्त इस कालखंड में हम राजनीतिक दल और सरकार के साथ पक्षपात और भ्रष्टाचार को लेकर बेतहाशा बढ़ते जा रहे हैं। ख़ैर, स्याह, सफ़ेद, आदर्शों, विसंगतियों, विद्रूपताओं और हसीन सपनों को साथ-साथ लेकर चलना आज भी युगीन मजबूरी हो गई है, मगर इन बेतालों को हमें हर हाल में उतार फेंकना होगा और इसके लिए सरदार पटेल के बताए रास्तों पर चलना होगा, उनके आदर्शों एवं विचारों को घर-घर तक पहुँचाना होगा। सच मानिए, दुनिया के मानचित्र पर आज यह देश जिस जिस स्थिति में है वह चिंताजनक है। पड़ोसी से आँखें दिखाने का दुस्साहस कर रहे हैं, तीन-चौथाई भारत आतंकवाद, नकसलवाद ओर माओवाद की लपेटे में है। न कोई सड़क पर सुरक्षित है, न घर में और न आसमान में। कल्पना करें कि सरदार पटेल अगर आज होते तो क्या इसकी कल्पना की जा सकती थी?

संपर्क : एस० 107,
स्कूल ब्लॉक, शकरपुर,
दिल्ली-92

❋❋❋

सरदार पटेल की 131 वीं जयंती पर

काश! सरदार पटेल होते ...

O उदय कुमार 'राज़'

क्या आज इस देश के लोग यह महसूस नहीं करते कि लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल के अदम्य् साहस, सूझ-बूझ तथा उनकी राष्ट्र के प्रति सच्ची आस्था-निष्ठा के चलते जिस देश को आज अखण्ड भारत के रूप में हम देख रहे हैं, उसे देशद्रोही तथा आतंकवादी ताक़तें पुन: खंडित करने पर आमादा हैं और इधर हाल के वर्षों में देशवासियों में भी राष्ट्रीयता की भावना का तेज़ी से ह्रास होता चला जा रहा है। ऐसी विषम परिस्थिति में काश! आज अगर सरदार पटेल होते तो देश की एकता व अखंडता पर यूँ तो ख़तरा मंडराता ही नहीं और यदि देशद्रोही एवं आतंकवादी शक्तियाँ इसे खंडित करने के लिए अपना सिर उठातीं तो ये सख़्ती से पेश आते। कश्मीर के सवाल पर एक ग़लत निर्णय की वजह से आजतक वह एक गंभीर समस्या बनी हुई है और प्रति वर्ष हज़ारों बेगुनाह एवं निर्दोष नागरिकों की जानें जा रही हैं तथा लाखों लोगों की ज़िंदगी प्रभावित हो रही हैं। आज हर देशवासी यह महसूस कर रहा है कि सरदार पटेल के सबल कंधों पर यदि कश्मीर की समस्या के निदान का दायित्व देने का सही फैसला लिया गया होता तो कश्मीर समस्या का समाधान कब का हो गया होता।

आज अगर सरदार पटेल होते तो भारतीय राजनीति में फैली असामाजिकता, भ्रष्टाचार, सत्ता-लोलूपता तथा लालच जैसी बुराइयाँ पनपती ही नहीं, क्योंकि उनके व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व में एक पारदर्शिता थी जो आज के सार्वजनिक जीवन जीनेवालों में नहीं दिखती। पूरे देश में क़ानून-व्यवस्था की आज जो धज्जियाँ उड़ाई जा रही हैं वह सरदार पटेल की अनुशासनप्रियता के आगे व्यवस्थित होती और नियम-क़ानून का पालन होता। इस संदर्भ में 'राष्ट्रीय विचार मंच' के राष्ट्रीय महासचिव श्री सिद्धेश्वर ने बताया कि 31 अक्टूबर को ही जब सरदार पटेल की जयंती पटना में मनाने का आयोजन हुआ तो उसके उद्घाटन के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह ने अपनी स्वीकृति दी थी, किंतु उसी दिन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी की हत्या के कारण श्री सिंह को अपना कार्यक्रम रद्द करना पड़ा पर महासचिव को उन्होंने अपना

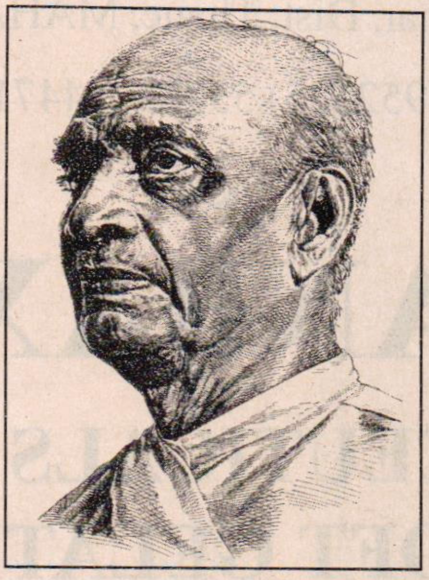

एक संदेश भेजा जिसमें उन्होंने लिखा था, ''यदि सरदार पटेल प्रधानमंत्री होते तो कदाचित जितनी समस्याओं का सामना आज देश को करना पड़ रहा है वह समस्या उत्पन्न ही नहीं होती।'' ऐसा था उनका व्यक्तित्व।

भारत के गाँवों और वहाँ की कृषि व्यवस्था के चौपट होने तथा कुटीर एवं लघु उद्योगों के बंद होने की वजह से करोड़ों युवकों को बेरोज़गारी का जो सामना करना पड़ रहा है उसका इतना भयानक रूप सरदार पटेल की उपस्थिति में नहीं दिखता। कारण की स्वयं किसानों एवं मज़दूरों के हिमायती होने की वजह से सरदार पटेल का ध्यान कृषि एवं उद्योगों का सुव्यवस्थित विकास करने का होता जिससे देश का कायाकल्प हो सकता था।

देश की अन्य समस्याओं पर जब हम एक नज़र डालते हैं तो पाते हैं कि उन समस्याओं की जटिलता पहले की अपेक्षा आज कहीं ज़्यादा घनीभूत हुई हैं। साम्राज्य वादी हमलों के तौर-तरीक़े भी बदले हैं। सांप्रदायिकता पहले से भी अधिक संगठित और भयानक रूप ले चुकी है। सामंती कुसंस्कार आज भी अपनी जगह बने हुए हैं। जनतांत्रिक मूल्यों पर शोषण-सत्ता के शिकंजे कसते जा रहे हैं। संसदीय प्रणाली तथा हमारी न्यायव्यवस्था भी आज शक के दायरे में आ गई है। इन बदली हुई परिस्थितियों में सरदार पटेल की प्रासंगिकता का अहम सवाल आज हमारे सामने है। इसलिए यह ज़रूरी है कि हम सरदार पटेल के सिद्धांतों एवं विचारों पर गहराई से विचार करें तथा उन उपादनों की पड़ताल करें जो हमारे लिए काम के हो सकते हैं, क्योंकि सरदार पटेल एकमात्र ऐसे व्यावहारिक राजनेता हुए जिन्होंने अपनी दृढ़ इच्छा-शक्ति की विलक्षणता की बदौलत राष्ट्रीय एकीकरण के प्रमुख आधार-स्तंभ के रूप में अपने को सिद्ध किया। मगर दुखद स्थिति यह है कि आज़ादी के 59 वर्षों के बाद भी आज पुन: देश विभाजन का ख़तरा फिर मंडराने लगा है। ऐसी भयावह स्थिति में देश की एकता व अखंडता के प्रमुख सूत्रधार सरदार पटेल के चिंतन के प्रमुख आधार-राष्ट्रवाद तथा उनके कौशल और निष्ठा की याद स्वाभाविक है। भारतीय इतिहास के ऐसे कालजयी महापुरुष की स्मृति को उनकी 131 वीं जयंती पर मैं नमन् करता हूँ और जन-जन तक उनके संदेश को पहुँचाने के लिए लोगों में राष्ट्र चेतना जागरित करने का संकल्प लेता हूँ। यह हम सजग नागरिकों का राष्ट्रीय दायित्व है, क्योंकि इस देश के राजनेताओं की लगातार धुँधली होती छवी देखकर पारदर्शी चरित्रवाले सरदार पटेल की याद आती है क्योंकि न तो कहीं राष्ट्रीयता की भावना दिख रही है और न ही देशभक्ति की। ऐसे में आज ज़रूरत इस बात की है कि राष्ट्रीयता और देशभक्ति

शेष पृष्ठ 38 पर देखें...

DENSA
PHARMACEUTICALS PVT. LTD.

Fact. Add. :Plot No. 10, Dewan & Sons Udyog Nagar,
Taluka Palghar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Phone No.: (952525) 55285, 54471, Fax: 55286

&

DANBAXY
PHARMACEUTICALS PVT. LTD.
(SOFT GELATIN)

Fact. Add: Plot No. K-38, MIDC Tarapur,

Dahisar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Office Address:

1, Anurag Mansion, Ashokvan,
Shiv Vallabh Raod, Dahisar (E),
Mumbai-400068
Phone No.: 28974777, Fax: 28972458
MR. DEVENDRA KUMAR SINGH, C.M.D

हैदराबाद की चिट्ठी

सिकंदराबाद की द्विशताब्दी वर्षगाँठ :

चार सौ वर्ष का गौरवशाली इतिहास संजोए हैदराबाद के गोलकोंडा किले से कई ऐतिहासिक कहानियाँ जुड़ी हैं और इसकी भव्यता और अद्भुत तकनीकी कुशलता देखकर पर्यटक आज भी चकित हो जाते हैं। छत्रपति शिवाजी महाराज से जुड़े इस किले को विश्व की धरोहर का दर्जा दिलाने के लिए अब भारतीय पुरातत्त्व विभाग युनेस्को को प्रस्ताव भेजने की तैयारी में है। हैदराबाद की जुड़वाँ बहन सिकंदराबाद की द्विशताब्ती वर्षगाँठ पर न केवल इसे दुल्हन की तरह सजाया गया, बल्कि शहर के बीचों-बीच स्थित 'क्लॉक टावर' को प्रतीक चिह्न बनाकर एक समारोह में उसके चित्र वितरित किए गए।

पर्यावरण :

हैदराबाद सिकंदराबाद की बढ़ती आबादी और कई औधोगिक परियोजनों के कारण दिनोदिन प्रदूषित हो रहे इस शहर को दूषित होने से बचाने के लिए स्थानीय ग्रीन पीस संगठन से जुड़े लोगों के द्वारा पिछले दिनों हुसैन सागर स्थित बुद्ध प्रतिमा के समक्ष प्रदर्शन किया गया।

उत्सव :

तेलंगाना का प्रसिद्ध बोनालु उत्सव के अवसर पर जून में महाकाली की पूजा के साथ-साथ तेलंगानावासी जुलूस में पोतराजू नाचते-गाते देखे गए।

नाटक :

हैदराबाद की शिल्प कला बेहिका में पिछले दिनों 'इप्टा' द्वारा 'कैफी और मैं' नाटक का मंचन किया गया जिसमें जावेद अख़्तर, शबाना आज़मी और जसविंदर सिंह ने अभिनय किया और इसका निर्देशन रमेश तलवार ने किया।

कला :

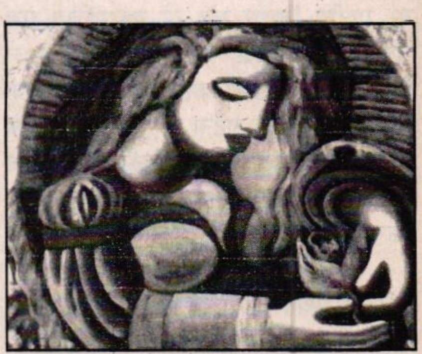

विगत 15 जून 2006 से माधापुर स्थित चित्रमई स्टेट गैलरी में आयोजित अमिता और मीरा चूडास्मा की चित्र-प्रदर्शनी 'कॉफी आन दवाल' की खासबात यह थी कि इस चित्रकला में रंगों का प्रयोग न होकर मात्र कॉफी की सहायता ली गई थी।

राजनीति :

हैदराबाद में विधानसभा के बाहर टी.आर.एस. के विधायकों और कार्यकर्त्ताओं ने पृथक तेलंगाना के लिए मानव ऋंखला बनाई।

संपर्क : 1.8.28, यशवंत भवन, अलवाल, सिकंदराबाद-500010 (आँ. प्र.)

चंद्र मौलेश्वर प्रसाद,
विचार प्रतिनिधि हैदराबाद से।

झंडोतोलन एवं विचार-संगोष्ठी

स्वतंत्रता के 60 वें वार्षिकोत्सव पर राष्ट्रीय विचार मंच के महासचिव एवं 'विचार दृष्टि' के संपादक सिद्धेश्वर ने दिल्ली में जहाँ झंडा फहराया, वहीं मंच के बिहार कार्यालय, पटना में महासविच एवं 'विचार दृष्टि' के उप संपादक डॉ॰ शाहिद जमील ने बड़े हर्षोल्लास के साथ झंडोतोलन किया।

इस अवसर पर पटना के 'बसेरा' पुरंदरपुर स्थित कार्यालय में 'आतंकवाद के साये में हमारी राष्ट्रीय चेतना' विषय पर मंच के प्रचार सचिव श्री मनु सिहं की अध्यक्षता में एक विचार-संगोष्ठी का आयोजन भी किया गया। आगत अतिथियों का स्वागत तथा संगोष्ठी के विषयवस्तु को प्रस्तुत करते हुए डॉ॰ शाहिद जमील ने कहा कि आतंकवाद की समस्या विश्वस्तरीय समस्या है। प्रबुद्धजनों को इस पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। इसकी जड़ें तलाश कर उन्हें समूल नष्ट करने की ज़रूरत है। आतंकी कार्यवाइयों को किसी धर्म, जाति, समुदाय, दल, संगठन, देश और प्रांत से जोड़कर उसकी निंदा मात्र से हम अपने राष्ट्रीय दायित्वों से मुक्त नहीं हो सकते। हमें अभियान चलाकर सोच की धारा को मोड़नी होगी। इस्लाम में हिंसा का कोई मुकाम नहीं है। अंत में उन्होंने अंक 29 के संपादकीय का पाठ किया, जिसमें संपादक श्री सिद्धेश्वर ने इसी विषय पर अपने विचार व्यक्त किए हैं।

संगोष्ठी के अध्यक्ष श्री मनु सिंह ने विशिष्ट वक्ता मनोज कुमार, विशेश्वर प्रसाद सिंह, हीरा लाल पाण्डेय एवं राध रमण वर्मा आदि द्वारा व्यक्त विचारों की समीक्षा करते हुए कहा कि आतंकवाद को किसी एक समुदाय विशेष से जोड़ना अनुचित होगा। अलगाववादी और विध्वंसक गतिविधि से जुड़ी सभी कार्यवाइयाँ आतंकवाद की परिधि के अंदर हैं। बयानबाज़ी से आतंकवाद को समाप्त नहीं किया जा सकता। अब समय आ गया है कि प्रबुद्धजनों को इस समस्या पर गंभीरता से विचार करना होगा और आम जनों में राष्ट्रीय भावना को जागृत करना होगा। श्रीमती सिद्धेश्वर ने अतिथियों का धन्यवाद ज्ञापित किया।

– पटना कार्यालय से

'शापित-सपने' का लोकार्पण

बिहार में साहित्यिक-चेतना का सर्वाधिक नुक़सान – सुशील कुमार मोदी

विगत 25 जुलाई, 2006 को पटना संग्रहालय के सभागार में मगध विश्वविद्यालय, बोधगया के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष तथा वरिष्ठ साहित्यकार प्रो॰ वैद्यनाथ शर्मा के सद्यः प्रकाशित कहानी संग्रह 'शापित-सपने' का लोकार्पण करते हुए बिहार के उप मुख्यमंत्री सुशील कुमार मोदी ने कहा कि पिछले पंद्रह वर्षों के शासन-काल में बिहार के समाज में साहित्यिक-चेतना का सर्वाधिक ह्रास हुआ है। साहित्यिक गतिविधियों का केंद्र रहा बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन तथा राज्य के केंद्रीय पुस्तकालय की स्थिति में सुधार की आवश्यकता है, क्योंकि वहाँ इन दिनों साहित्यिक चर्चा एवं हिंदी साहित्य को समृद्ध करने की बात न होकर व्यवसायिक मेले का आयोजन किया जा रहा है, जो निश्चित रूप से दुर्भाग्यपूर्ण है। उन्होंने अपनी ओर से इसके सुधार के लिए प्रयास करने का आश्वासन दिया। उन्होंने पुनः कहा कि यहाँ बुद्धिजीवियों की न केवल उपेक्षा हुई है, बल्कि उन्हें हाशिए पर ढकेलने का काम किया गया है। यही नहीं, नाट्य संगठनों के लिए नाट्यशाला का निर्माण नहीं किया गया है। बिहार जैसे साहित्यिक और राजनीतिक चेतनावाले राज्य में पिछले दो-तीन दशकों में किसी दूसरे रेणु या दिनकर के पैदा न होने पर श्री मोदी ने दुख व्यक्त किया। प्रो॰ वैद्यनाथ शर्मा ने

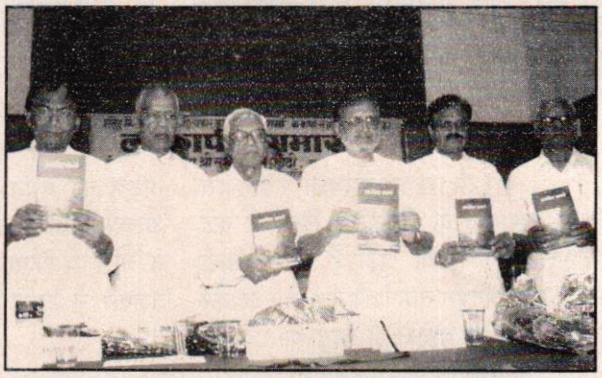

लेखकीय वक्तव्य प्रस्तुत किया। समारोह को श्री जिया लाल आर्य ने भी संबोधित किया। प्रो॰सियाराम तिवारी की अध्यक्षता में आयोजित इस समारोह में कवि बाबूलाल मधुकर ने मान्य अतिथियों का स्वागत तथा मंच संचालन डॉ॰ शिवनारायण ने किया। 'समय संवाद' के तत्त्वावधान में आयोजित इस कार्यक्रम के अंत में आभार व्यक्त किया डॉ॰ योगेश्वर प्रसाद 'योगेश' ने।

- राजेन्द्र प्रसाद पटना से

रचनाकारों से

(1) रचना भेजने के लिए कोई शर्त नहीं है, सभी रचनाकारों का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। उदीयमान रचनाकारों को विशेष रूप से प्रोत्साहित किए जाने का प्रयास रहेगा।
(2) राष्ट्रीय भावनाओं पर आधारित तथा वैचारिक रचनाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।
(3) रचना एक तरफ/कम्प्यूटर पर कम्पोज्ड अथवा सुवाच्य स्पष्ट लिखी होनी चाहिए। प्रयास यह हो कि रचना कम्प्यूटर पर कम्पोज़ कराने के बाद उसका सी॰डी॰ कोरियर से भेजें अथवा उसे ईमेल द्वारा भेजें।
(4) रचना के अंत में उसके मौलिक अप्रकाशित व अप्रसारित होने के प्रमाण पत्र के साथ रचनाकार का नाम व पूरा पता अवश्य लिखा होना चाहिए।
(5) रचना के साथ पासपोर्ट/स्टाम्प आकार की श्वेत एवं श्याम तस्वीर की दो प्रतियाँ अवश्य संलग्न करें।
(6) प्रकाशित रचनाएँ वापस नहीं की जातीं, कृपया उसकी प्रति अवश्य रख लें।
(7) प्रकाशित रचनाओं पर फिलहाल पारिश्रमिक देने की कोई व्यवस्था नहीं है, हाँ, रचना प्रकाशित होने पर अंक की प्रति अवश्य भेजी जाएगी।
(8) किसी भी विधा की गद्य रचनाएँ 1500 शब्दों अथवा दो पृष्ठों की मर्यादा में ही स्वीकार्य होंगी।
(9) समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजना आवश्यक है।

दृष्टि 6, विचार बिहार,
यू-207, शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92,
दूरभाष: (011) 22530652, 22059410

संपादक, 'विचार दृष्टि'
email-sidheshwar66@yahoo.com

बचे समय में एक छोटा-सा जीवन जीना चाहता हूँ, किसी बड़े सपने के लिए।

-नामवर सिंह

नामवर हुए अस्सी साल के

मोजूदा दौर में हिंदी आलोचना के शिखर पुरुष डॉ॰ नामवर सिंह अपने जीवन के अस्सी वंसत पूरे कर लिए। आपको याद होगा आज से पाँच वर्ष पूर्व जब वे पचहत्तर वर्ष के थे तो समूचे हिंदी जगत में आयोजित उनके अमृत महोत्सव के अवसर पर 'नामवर के निमित्त' विषय को लेकर दिल्ली, पटना, भोपाल, जोधपुर, बनारस आदि अनेक शहरों में साल भर तक कार्यक्रम चले थे। इस वर्ष हिंदी आलोचना के इस शिखर हस्ताक्षर की अस्सीवीं वर्षगांठ को सहस्र चंद्रोदय महोत्सव के रूप में पिछले दिनों दिल्ली में मनाया गया।

इस अवसर पर बनारस में बिताए अपने क्षण को याद करते हुए डॉ॰ नामवर सिंह ने अपने जीवन के अस्सी वर्ष पूरे होने को बनारस के उस 'अस्सी घाट' नामक मकान से जोड़ा, जिसमें पहली बार उन्होंने रहना शुरू किया। निराला की काव्य-पंक्ति, 'बोलूँ अल्प न करूँ जल्पना' के माध्यम से उन्होंने यह संकेत देने का प्रयास किया है कि उन्होंने सारा कुछ बोलकर कह दिया और उसी में सारा तत्त्व बह गया। फिर अपने समकालीन कवि कुँवर नारायण की काव्य-पंक्तियों को याद करते हुए डॉ॰ नामवर सिंह ने कहा कि, "कोई ख़ास बात नहीं, बचे समय में

एक छोटा-सा जीवना चाहता हूँ, किसी बड़े सपने के लिए।" उन्होंने यह भी जोड़ा कि जीना ही काफ़ी नहीं है, एक सार्थक जीवन जीना ज़रूरी है।

कार्यक्रम के प्रारंभ में वरिष्ठ पत्रकार प्रभाष जोशी ने डॉ॰ नामवर सिंह को हिंदी समाज की विभूति बताते हुए इस महोत्सव की महत्ता को उजागर किया। उन्होंने पुनः कहा कि नामवर जी की उपस्थिति विश्वास भी जगाती है और आश्वस्त भी करती है। त्रिवेणी संगम के सभागार में आयोजित इस समारोह में नामवर जी के द्वारा काशीनाथ सिंह के नाम लिखे पत्रों का संग्रह 'काशी के नाम' तथा संस्मरणों और बात-चीत पर आधारित पुस्तकों यथा 'घर का जोगी जोगड़ा' और "बात बात में बात" का लोकार्पण क्रमशः सुप्रसिद्ध लेखिका कृष्णा सोबती, पूर्व प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह तथा वामपंथी नेता ए॰बी॰ वर्धन ने किया। कार्यक्रम के प्रारंभ में राजकमल समूह के अशोक महेश्वरी ने अतिथियों का स्वागत और मदन कश्यप ने कार्यक्रम का संचालन किया।

– विचार प्रतिनिधि, उदकुमार 'राज़', दिल्ली से

डॉ. वर्मा का जन्मशती समापन समारोह

विगत 5 सितंबर 2006 को नई दिल्ली में एकांकियों के जनक डॉ. रामकुमार वर्मा के जन्मशती समापन समारोह के मुख्य अतिथि तथा केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह ने कहा कि डॉ. वर्मा की रचनाओं में भारतीय संस्कृति तथा अतीत का गौरव स्पष्ट दिखाई देता है। इस अवसर पर राष्ट्रीय विचार मंच, दिल्ली के अध्यक्ष डॉ. सोम दत्त शर्मा 'सोम' ने अपनी नवीनतम कृति 'डॉ. रामकुमार वर्मा का एकांकी संसार' की प्रति अर्जुन सिंह को भेंट की जिसके अवलोकन पर उन्होंने डॉ. 'सोम' के कार्य की प्रशंसा की। डॉ. वर्मा की सुपुत्री डॉ. राजलक्ष्मी वर्मा ने कहा कि प्रस्तुत पुस्तक में उनके पिताजी की भावना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। कथाकार कमलेश्वर की अध्यक्षता में आयोजित इस समारोह में देवेंद्र राज अँकुर, डॉ. योगेन्द्र प्रताप सिंह, डॉ. गंगा प्र. विमल, राज नारायण बिसारिया तथा डॉ. गोविंद व्यास ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए। कार्यालय मंत्री पं. ओम प्रकाश कौशिक, दिल्ली से।

सत्याग्रह की शताब्दी पर नया सामाजिक आंदोलन

देश में 11 सितंबर 2006 से एक नये सामाजिक आंदोलन की शुरुआत हुई जब विभिन्न सामाजिक एवं सांस्कृतिक संगठनों के सदस्य घर-घर जाकर लोगों को सामाजिक बुराइयों, बढ़ती हिंसक प्रवृत्तियों और पर्यावरण में आ रही गिरावट के प्रति सचेत करेंगे। गाँधी दर्शन और स्मृति समिति, नई दिल्ली के नैतृत्व में राष्ट्रीय विचार मंच सहित अणुव्रत महासमिति के अहिंसा समवाय से जुड़े सक्रिय कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त कोई एक दर्जन संगठनों ने इस अभियान को

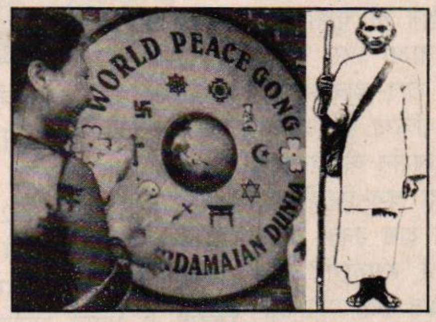

एक साल तक चलाने को संकल्प ले रेखा है। उल्लेख्य है कि यह आंदोलन सौ साल पहले दक्षिण अफ्रीका में 'बापू' द्वारा प्रारंभ किए गए 'सत्याग्रह' की याद में किया गया है। याद रहे कि अफ्रकी में इसी सत्याग्रह का प्रयोग करके महात्मा गाँधी ने दुनिया को अहिंसात्मक ढंग से अपनी बात कहना सिखाया था और इसी 11 सितंबर, 1893 को शिकागों में स्वामी विवेकानंद ने सहनशीलता और सहजीवन का नर्म समझाया था। काश। दुनिया उनकी दिखाई राह पर चली होती।

राबिया क़दीर
नोबल शांति पुरस्कार के लिए नामित

व्यवसायी से मनावाधिकार की सक्रिय सदस्या बन जानेवाली चीन की राबिया क़दीर को इस वर्ष के नोबल शांति पुरस्कार के लिए नामित किया गया है। सुईडन के सांसद एंटीलीएनाकिस ने उक्त पुरस्कार के निमित्त राबिया क़दीर को नामित करते हुए लिखा है कि वह पश्चिमी चीन में एको नस्ल के व्यक्तियों के अधिकारों के लिए झण्डाबरदार और महिलाओं के मानवाधिकारों की वकालत करनेवाली चीनी महिला हैं। 58 वर्षीय क़दीर कोजोवादगर नस्ल की हैं।

– पटना कार्यालय से

उदयभानु हंस
शिखर सम्मान से सम्मानित

प्रतिष्ठित साहित्यकार तथा हरियाणा के राज्यकवि उदयभानु हंस को हरियाणा साहित्य अकादमी की ओर से शिखर सम्मान के रूप में 'सूर पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। साहित्यवाचस्पति श्री हंस को इस पुरस्कार के तहत एक लाख रुपये, प्रतीक चिह्न तथा सम्मान-पत्र भेंट किया गया।

उल्लेखनीय है कि गीत, ग़ज़ल, रुबाई, मुक्तक, दोहा, महाकाव्य, समीक्षा, निबंध तथा आत्मकथा आदि की 20 से अधिक रचनाएँ 'उदयभानु हंस की रचनावली' के चार खण्डों में प्रकाशित हो चुकी हैं। यही नहीं, उनकी रचनाओं पर सात विश्वविद्यालयों द्वारा कई छात्र-छात्राओं ने पीएच॰डी॰ के लिए शोध किया है। उनके जीवन एवं कृतित्व पर दूरदर्शन के दिल्ली तथा जालंधर केंद्रों से दो वृत्त-चित्रों के प्रसारण हेतु आकाशवाणी द्वारा इनके तीन घंटे की प्रसारण अवधि की 'हंसवाणी' को राष्ट्रीय संग्रहालय में सुरक्षित रखा गया है, जो उनके 80 वर्षीय जीवन का चिरंतन आभूषण माना जाएगा। वरिष्ठ कवि हंस जी को 'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से हार्दिक बधाई और दीर्घायु होने की मंगल कामना।

–विचार कार्यालय, गुड़गाँव से

जावेद अख़्तर
को इंदिरागाँधी क़ौमीएकता पुरस्कार

लब्धप्रतिष्ट गीतकार और शायर जावेद अख़तर को सांप्रदायिक और राष्ट्रीय उकता के क्षेत्र में उल्लेखनीय सेवा पर उन्हें 2005 के 'इंदिरागाँधी राष्ट्रीय क़ौमीएकता पुरस्कार' के लिए नामित किए गए हैं। इसमें एक लाख 51 हज़ार नक़द और प्रशस्ति-पत्र पर आधारित यह 21 वां पुरस्कार हे जो जावेद अख़तर को इंदिरागाँधी के शाहातद-दिवस पर काँग्रेस अध्यक्ष सोनिया गाँधी पेशे करेंगी।

अरविंद केजरीवाल
मैगसेसे पुरस्कार से सम्मानित

भारत में सूचना के अधिकार से जुड़े आंदोलन और भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए आम आदमी को सशक्त बनानेवाली दिल्ली की एक ग़ैर सरकारी संस्था 'परिवर्तन' के अध्यक्ष अरविंद केजरीवाल को पिछले 31 अगस्त को मनीला में आयोजित एक समारोह में एशिया में नोबेल पुरस्कार के समकक्ष आँके जानेवाले रेमन मैगसेसे पुरस्कार

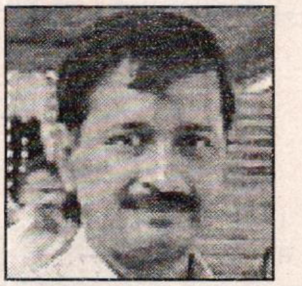

से नवाज़ा गया। 34 वर्षीय श्री केजरीवाल आई॰टी॰आई॰ खड्‌कपुर से मेकैनिकल इंजीनियर और भारतीय राजस्व सेवा के सदस्य के तौर पर 1992 से नौकरशाही से जुड़े हैं और फिलहाल दो साल के अवकाश पर हैं। इन्होंने आम आदमी पर रोज़मर्रा की ज़िंदगी में सामने आनेवाले भ्रष्टाचार की महत्ता को समझकर ही अपने बदलाव अभियान की शुरुआत छोटी चीज़ों से की है। उन्होंने सूचना के अधिकार का मतलब इन शब्दों में निकाला है- ''मुझे यह बताइए कि मेरा काम क्यों नहीं हुआ? किस अधिकारी को करना था? मेरा काम, किसने लटकाई मेरी संचिका? किसकी लापरवाही से मुझे हुआ नुक़सान? क्या सज़ा दी जाएगी उस अधिकारी को?''

सचमुच अद्‌भुत व्याख्या है यह सूचना के अधिकार की। श्री केजरीवाल ने गलियों घूम-घूमकर लोगों को समझाया- आप एक साबुन भी ख़रीदते हो तो टैक्स देते हो। इसी पैसे से अफसर को वेतन मिलता है। जनता मालिक है, अफसर नौकर। जनता अपने पैसे का हिसाब ले। हम अफसर से पूछें कि तुम्हारी ड्यूटी क्या है? तुमने क्या काम किया? क्यों नहीं किया? ऐसे ही सवालों को लेकर पिछले एक से पंद्रह जुलाई तक देश के 48 शहरों में घूस को 'घूसा अभियान' के ज़रिए अरविंद ने सूचना क़ानून की नई व्याख्या को पूरे देश में लोकप्रिय कर दिया है। इस बदली हुई भाषा के बाद भष्टाचार पर कितना लगाम लग पाएगा, शासन-प्रशासन को किस हद तक जनता के प्रति जवाबदेह बनाया जा सकेगा, यह तो वक़्त ही बताएगा। पर यह सच है कि इस प्रयोग ने देश में सुशासन और दायित्वबोध का एक नया आधार अवश्य प्रस्तुत किया है। सूचना की इस जुबान को 'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से हार्दिक बधाई। सूचना के अधिकार क़ानून में नौकर शाहों को बचाने के लिए किए जा रहे संशोधन के फैसले को टालकर केंद्र सरकार ने जनभावना का आदर करने का संकेत तो अवश्य दिया है। किंतु सरकार ने इस फैसले को फिलहाल टाला है, रद्द नहीं किया है। ऐसा लगता है कि उसने नौकरशाही के दबाव में आकर अपने हाथ खड़े कर दिए जिससे उसने अपने ही हाथों अपनी विश्वसनीयता पर चोट की है। याद रहे लोकतंत्र में सरकारें जनता के लिए होती हैं न कि नौकरशाही के लिए। इसलिए बेहतर यह होगा कि सरकार यह साफ करे कि क़ानून में कोई काट-छाँट नहीं होनेवाली है।

-विचार कार्यालय, दिल्ली से

निश्चल नारायण
गिनीज बुक में

अद्‌भुत स्मरण-शक्ति के निश्चल नारायण का नाम गिनीज बुक में इसलिए दर्ज किया गया कि विभिन्न वस्तुओं के

नाम याद करने का उसने कीर्तिमान हासिल किया है। हैदराबाद स्थित गीतांजलि स्कूल के छठे वर्ग का निश्चल विभिन्न वस्तुओं के 225 नाम याद करने में सफलता पाई है। निश्चल ने न केवल इन 225 वस्तुओं के नाम याद किए हैं, बल्कि उनके साथ जो क्रम संख्या दी गई है उन्हें भी याद कर चुका है। निश्चल ने इसका श्रेय अपनी माँ को दिया जिन्होंने उसे यह कीर्तिमान स्थापित करने में काफ़ी मदद की।

निश्चल के पिता एन॰ नागेश्वर राव तथा उसकी माँ एन॰ पद्मावती ने बताया कि बचपन से ही अपने बच्चे की स्मरण-शक्ति असाधारण देखते हुए उन्होंने जयसिम्हा जैसे शिक्षक से इसे कीर्तिमान स्थापित करने के लिए प्रशिक्षण दिलवाया।

– चंद्र मौलेश्वर प्रसाद, हैदराबाद से

डॉ॰ 'भास्कर' जनहित व साहित्य सेवा सम्मान से सम्मानित

अ॰भा॰भाषा साहित्य सम्मेलन की बिहार इकाई के उपाध्यक्ष डॉ॰ भगवान सिंह 'भास्कर' को हिंदी एवं भोजपुरी साहित्य में उल्लेखनीय योगदान के लिए पिछले दिनों भोजपुर जिला भोजपुरी सम्मेलन की ओर से उसके उपाध्यक्ष हरिद्वार प्रसाद 'किसलय' द्वारा जहाँ 'जनहित साहित्य सम्मान' से नावाज़ा गया वहीं बक्सर में स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर शिव बहादुर पाण्डेय 'प्रीतम' ने डॉ॰ 'भास्कर' को शॉल, प्रतीक चिह्न एवं पुष्पहार भेंटकर 'साहित्य सेवा सम्मान' प्रदान किया।

इसी प्रकार उत्तर प्रदेश के बलिया में भी डॉ॰ 'भास्कर' के सम्मान में आयोजित एक समारोह में उन्हें अभिनंदन किया गया। उल्लेख्य है कि डॉ॰ 'भास्कर' ने अबतक हिंदी एवं भोजपुरी की लगभग बीस पुस्तकों का प्रणयन-संपादन किया है।

– राजेंद्र प्रसाद, पटना से

करंदीकर को ज्ञानपीठ पुरस्कार

नई दिल्ली में राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने मराठी के प्रख्यात कवि बंदा करंदीकर को ज्ञानपीठ पुरस्कार से नवाजा।

डॉ. मनमोहन सिंह को डॉक्टरेट की उपाधि

डॉ. मनमोहन सिंह को डॉक्टरेट की उपाधि प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने लगभग पचास साल पहले जिस कैंब्रिज विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र (आनर्स) में प्रथम स्थान प्राप्त किया था, उसी विश्वविद्यालय की ओर से अपने होनहार छात्र डॉ. मनमोहन सिंह को 11 अक्टूबर 2006 को ड्यूक आफ एडिनबरा राजकुमार फिलिप कुलपति की हैसियत से डॉक्टरेट की मानद उपाधि प्रदान करेंगे।

शबाना को अंतरराष्ट्रीय गाँधी शांति पुरस्कार

फिल्मी दुनिया की सुप्रसिद्ध अभिनेत्री तथा समाज सेविका शबाना आजमी को इस साल

के लिए अंतरराष्ट्रीय गाँधी शांति पुरस्कार के लिए चयन किए जाने से उनकी शानदार उपलब्धियों में एक और नया आयाम जुड़ गया है। राज्यसभा की पूर्व सदस्य शबाना आजमी को ऐसा लगता है कि झुग्गी बस्तियों के निवासियों के बीच उनकी सक्रियता देखकर ही उन्हें इस प्रतिष्ठित पुरस्कार के लिए चुना गया है। आगामी 26 अक्टूबर, 2006 को लंदन के हाउस ऑफ लॉर्डस में दिए जानेवाले इस पुरस्कार के वक्त, वे अपने पति जावेद अख्तर को साथ ले जाना चाहती हैं क्योंकि जीवन के इस गौरवांवित क्षण में वह उन्हें कैसे भूल सकती है। वह पहली भारतीय हैं जिन्हें यह सम्मान मिल रहा है।

– विचार संवाददाता, मुंबई से।

हिंदी सेवियों को सम्मान

नई दिल्ली के विज्ञान भवन में हिंदी दिवस के अवसर पर 14 सितंबर 2006 को केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री अर्जुन सिंह की अध्यक्षता में केंद्रीय हिंदी संस्थान

की ओर से आयोजित सम्मान-समारोह में राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने हिंदी के सर्जनात्मक व प्रसार-प्रचार के कार्य में लगे 30 राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय हिंदी सेवियों और विद्वानों को सम्मानित किया।

गंगाशरण सिंह पुरस्कार : प्रो. आर. जनार्दनन पिल्लै, डॉ. वी.राम संजीवैया, डॉ. पालि विजयराघव रेड्डी, डॉ. ए. अहमद हुसैन, श्री एम. पियोंग तेजमन जामीर, प्रो. इबोइस सिंह काडजम, मोहन दास सोनू सुर्लकर, डॉ. सत्यपाल श्रीवत्स व मानिक, बच्छा वत।

गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार : ओम थानवी, पंकज बिष्ट, मोहनदास नैमिश राय, राज किशोर व मणिमाला।

आत्माराम पुरस्कार : डॉ. राम अवधेश कुमार श्रीवास्तव, अनुपम मिश्र, जगदीप सक्सेना, राकेश कुमार अवस्थी व दिलीप भाटिया।

सुब्रह्मण्यम भारती पुरस्कार : प्रो. मैनेजर पाण्डेय, विष्णु चन्द्र शर्मा, डॉ. विजेंद्र नारायण सिंह व ऋतुराज।

महापंडित राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार : कृष्ण नाथ, दिनेश्वर प्रसाद, अमृत लाल बेगड़ व वीरेंद्र कुमार बरनवाल।

डॉ. जार्ज ग्रियर्सन पुरस्कार : वर्ष 2003 के लिए प्रो. तोशियो तनाका व 2004 के लिए डॉ. रोनाल्डों स्टूट मेकग्रेगर।

—उदय कुमार 'राज़', दिल्ली से

साइजी माकिनो हिंदी रत्न से सम्मानित

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन की जयंती के अवसर पर पिछले दिनों नई दिल्ली में हिंदी भवन द्वारा आयोजित एक समारोह में पहली बार किसी विदेशी हिंदी सेवी जापान के साइजी माकिनो को दिल्ली के उप राज्यपाल बनवारी लाल जोशी और विधिवेत्ता लक्ष्मीमल सिंघवी द्वारा हिंदी रत्न से सम्मानित किया गया। उल्लेख्य है कि हिंदी भवन द्वारा यह सम्मान अहिंदी भाषी सेवकों को दिया जाता है।

कर्नाटक के राज्यपाल एवं हिंदी भवन के अध्यक्ष त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी की अध्यक्षता में संपन्न इस समारोह में जापानी राजदूत यासूकोनी इनोकि, वयोवृद्ध साहित्यकार पद्मविभूषण विष्णु प्रभाकर सहित शहर के अनेक साहित्यकार एवं विद्वतजन उपस्थित थे। समारोह के प्रारंभ में जापानी राजदूत ने हिंदी के प्रथम सेनापति महर्षि दयानंद के तैल चित्र का अनावरण किया।

सम्मान ग्रहण करने के बाद मानिको ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुए कहा कि "इतना बड़ा सम्मान मेरे लिए एक बोझ है। आज हिंदी की वजह से ही मैं यहाँ हूँ। गाँधी जी के संपर्क में आकर मुझे हिंदी सीखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। हिंदी विश्व शांति की भाषा है और जबतक मैं जिऊँगा हिंदी के साथ रहूँगा।" माकिनो ने 'भारतवर्ष में 45 साल : मेरी हिंदी यात्रा' नामक एक ग्रंथ लिखा है।

जापान में 11 फ़रवरी 1924 को जन्मे साइजी माकिनो 36 वर्ष की उम्र में एक बार भारत जो आए तो फिर यहीं के होकर रह गए। आए तो थे गाँधी जी के सेवाग्राम में स्थित हिंदुस्तानी तालीमी संघ में पशु चिकित्सक के रूप में पर हिंदुस्तान का ऐसा रंग चढ़ा कि फिर जापान लौटने का मन ही नहीं किया। खादी क्या अपनाई संपूर्ण चिंतन ही गाँधीमय हो गया। 82 वर्ष की उम्र में भी कुछ और कर गुज़रने की इच्छा-आकांक्षा लिए साइजी माकिनो का सीधा-सादा व्यक्तित्व, व्यवहार में ग़ज़ब की सादगी और आँखों से झाँकती ईमानदारी, जिसे देखाकर ही उसकी निश्छलता, मेहनत और समर्पण का अंदाज़ा लगाया जा सकता है।

रत्नावली कौशिक के एक प्रश्न के उत्तर में साइजी माकिनो ने बताया कि भारत बहुत बड़ा देश है। दुनिया का कोई भी देश उसका मुक़ाबला नहीं कर सकता।

समारोह के अंत में हिंदी भवन के मंत्री डॉ॰ गोविंद व्यास ने उपस्थित अभ्यागतों के प्रति आभार व्यक्त किया। मंच-संचालन इंदू जैन ने किया।

डॉ. नामवर को भारत भारती सम्मान

लखनऊ में हिंदी के सुविख्या आलोचक डॉ. नामवर सिंह को हिंदी संस्थान के सर्वोच्च सम्मान भारत-भारती से नवाजते उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव

फिक्की समागार में हिंदी दिवस पर आयोजित कवि सम्मेलन में (बाएं से) अशोक चक्रधर, बरखा सिंह, सुरेंद्र शर्मा व केंद्रीय ऊर्जा मंत्री सुशील कुमार शिंदे

उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ

गंगा-जमुनी तहज़ीब की जीती-जागती मिसाल

○ सिद्धेश्वर

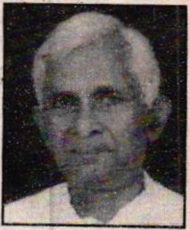

'संगीत वह चीज़ है जिसमें जात-पांत कुछ नहीं है। संगीत की नज़र में सब धर्म और मज़हब एक हैं। उनमें मानवीय प्रेम और बंधुत्व भावना का आह्वान है।' ये उद्गार हैं शहनाई के शिखर पुरुष और भारतरत्न उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ के, जो गंगा-जमुनी जहज़ीब की जीती-जागती मिसाल तो थे ही, सांप्रदायिकता से लोहा लेनेवाले सामासिक संस्कृति के सच्चे प्रतीक भी थे।

भारत के प्राचीन वाद्यों में शहनाई संभवत: सबसे लोकप्रिय वाद्य है, जो आम तौर पर मंदिरों में सुबह और शाम को प्रार्थना के समय, त्योहारों और सभी पावन अवसरों के साथ-साथ बच्चों के जन्म, विवाह-शादियों, धार्मिक पर्वों आदि में लोक धुनों पर बजाया जाता है, किंतु उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ ने इस साज़ को न केवल शास्त्रीय संगीत में ढाला और संगीत की महफ़िलों में उसे सम्मानित स्थान दिलाया, बल्कि दोयम दर्जे की समझी जानेवाली शहनाई को दिव्य बना दिया। पिछले क़रीब सात दशक से शहनाई और उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ एक दूसरे के पर्याय बन गए थे। पाँच वक़्त के नमाज़ी उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ बनारस के शिव मंदिर और गंगा के घाट इसके साक्षी हैं, जिसे उन्होंने शांति और माधुर्य का स्रोत माना। बनारस और वहाँ की गंगा नदी से उन्हें बेहद लगाव था। गंगा की गोद में बैठकर शहनाई वादन उनका शग़ल बन गया था। उस्ताद कहते भी थे कि माँ गंगा ने उन्हें यह मुक़ाम अता किया है। आख़िर तभी तो मन से गंगा की तरह निर्मल बिस्मिल्ला को इस मुक़ाम पर पहुँचने के बाद भी अहम् छू तक नहीं पाया। गंगा से उनके लगाव से संदर्भित एक वाक्या सुनाया राष्ट्रीय विचार मंच तथा उसके मुख-पत्र 'विचार दृष्टि' से जुड़े मेरे मित्र व पूर्व पुलिस पदाधिकारी सीताराम प्रसाद ने, जो उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ के इलाक़े के ही निवासी हैं। वाक्या यूँ है कि जब उस्ताद एक संगीत समारोह में भाग लेने यूरोप गए तो उनके प्रशंसक ने उन्हें बंगला-गाड़ी व अन्य ख़र्चों के अलावा यूरोप नागरिकता का भी प्रस्ताव दिया, मगर उनके इस सवाल ने उक्त प्रशंसक को उस्ताद ने निरुत्तर कर डाला यह कहकर कि "आप यूरोप में सब कुछ देंगे, पर गंगा कहाँ से लाएंगे?" उस्ताद को गंगा नदी से न केवल प्रेरणा मिलती थी, बल्कि उनको गंगा नदी में तैरने का भी शौक़ था। उनका मानना था कि शहनाई बजाने में वृद्धावस्था में भी उनके फेफड़ों को जो ताक़त मिलती रही है उसका पूरा श्रेय गंगा को जाता है। यही है वह भारतीय संस्कृति जो इस देश की हस्ती को मिटने नहीं देती और उस्ताद बिस्मिल्ला जैसे ही इस देश के वासी इसे अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए आजीवन कटिबद्ध रहे।

उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ ने पाँच वर्ष की उम्र में ही शहनाई थाम लिया था। उन्होंने अपना पहला सार्वजनिक कार्यक्रम 14 वर्ष की आयु में सन् 1930 ई॰ में इलाहाबाद में किया। सन् 1937 ई॰ में कोलकाता में आयोजित अखिल भारतीय संगीत समारोह में शहनाई बजाकर उन्होंने अपनी धाक जमाई तथा वहाँ स्वर्ण पदक अर्जित किया। 15 अगस्त 1947 ई॰ को उस्ताद की असाधारण संगीत यात्रा का स्वर्णिम पड़ाव दिल्ली के लाल क़िले में आयोजित आज़ादी के जश्न में शहनाई वादन था और उसके बाद उनका यह सिलसिला तब तक जारी रहा जबतक कि इस वर्ष 15 अगस्त, 2006 ई॰ को अपनी अस्वस्थता और आतंकी हमले की आशंका के कारण लाल क़िले में शहनाई बजाने से वे वंचित रह गए। कहा जाता है कि दिल्ली के ऐतिहासिक इंडिया गेट पर शहीदों की स्मृति में वे शहनाई

वादन करना चाहते थे, किंतु अस्वस्थता की वजह से उनका यह सपना साकार नहीं हो सका। अभी दो माह पहले की बात है जब गंगा के इस पुजारी के पास केंद्रीय गृह राज्यमंत्री श्री प्रकाश जायसवाल की पाती लेकर इंडिया गेट पर शहनाई बजाने का न्योता देने गए थे, लेकिन इसे सियासी मजबूरी कहें या आतंकवाद का ख़ोफ़, कहीं कोई अनहोनी न हो जाए, इसलिए सरकार ने इस कार्यक्रम को कुछ समय के लिए मुल्तवी कर दिया और उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ की मौत के साथ उनकी यह हसरत भी शहीद हो गई।

पिछले सात दशक से अनवरत रूप से देश-विदेश के कोने-कोने में शहनाई को बुलंदियों तक पहुँचाने वाले और संगीत की दुनिया का एक महान सितारा 20 अगस्त, 2006 की रात 2.30 बजे हमारे बीच से उठ गया मानो शहनाई मौन हो गई। उस्ताद के आस-पास तो क्या, दूर दराज़ भी खड़ा होनेवाला आज कोई नहीं दिखता जो उनकी जगह ले सके।

उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ के गुज़रने से न केवल शहनाई अनाथ हो गई, बल्कि राष्ट्र की भावात्मक एकता के प्रतीक की जादूगरी से हम भारतीय हमेशा के लिए महरूम हो गए। मुझे अच्छी तरह याद है कि आज से नौ वर्ष पूर्व पटना के ऐतिहासिक गाँधी मैदान में दुर्गापूजा के मौके पर आयोजित एक संगीत समारोह में ख़ाँ साहब की शहनाई के सुरों को सुनने का मौका मुझे भी मिला था। गले में जन्नत बसा हो जिसके उसके सुरों की तासीर का कोई मुक़ाबला कैसे होगा? उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ की शहनाई से निकले सुर माहौल को जादुई बना देते थे। पटना के गोल घर और जिलेबी के साथ-साथ पटना को भी वे इसलिए पसंद करते थे कि यहाँ के लोग सरल, सहज और दिमाग़दार होते हैं। बिहार की राजधानी पटना इसलिए भी पसंद था कि ये खुद भी बिहार के बक्सर जिलांतर्गत डुमरांव के थे।

सनद रहे कि उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ का जन्म 21 मार्च 1916 ई॰ को डुमरांव में पैगंबरबख़्श ऊर्फ बचई मियां के घर हुआ था। इनके पूर्वज डुमरांव राज में बिहारी जी के मंदिर के सामने शहनाई बजाते थे। यहाँ तक कि उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ ने भी बचपन में उसी मंदिर में शहनाई बजाई बाद में वे अपने मामा जनाब विलायत हुसैन ख़ाँ एवं जनाब अलीबख़्श से शहनाई का रियाज़ करने लगे। फिर धीरे-धीरे वे लोग चले गए बनारस, जहाँ से उनके पूर्वज आए थे और वहीं बस गए। बनारस आने के बाद गंगा-जमुनी संस्कृति के इस वास्तविक नुमाइंदे के रूप में उस्ताद ने गंगा-घाट और मंदिरों में अपनी संगीत-साधना की और जीवनपर्यंत देश की गंगा-जमुनी संस्कृति को आगे बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रहे। वाराणसी में मुहर्रम के अवसर पर श्री ख़ाँ प्रत्येक साल शहनाई से मातमी धुन बजाते थे जिससे लोगों के दिलो-दिमाग़ पर कर्बला की शहादत सजीव हो उठती थी तथा उनकी आँखें नम हो जाती थीं।

इधर हाल के वर्षों में संगीत के व्यवसायीकरण और गुरु-शिष्य परंपरा के कमज़ोर होने को लेकर उस्ताद चिंतित रहा करते थे। उनका मानना था कि संगीत पैसा कमाने का ज़रिया नहीं, बल्कि इबादत का एक तरीका है। पिछली आधी शताब्दी से उन्होंने देश के प्रायः सभी शास्त्रीय संगीत वादकों के साथ जुगलबंदी की। इनमें प॰ रविशंकर, उस्ताद विलायत अली ख़ाँ, अमजद अली ख़ाँ जैसे दिग्गज वादक शामिल हैं। श्री ख़ाँ ने कजरी और ठुमरी जैसी उप शास्त्रीय विधाओं को भी शहनाई के ज़रिए प्रभावी ढंग से मुखरित किया। वाराणसी की प्रमुख कजरी गायिकाओं सिद्धेश्वरी देवी और गिरिजा देवी के साथ उन्होंने कजरी को जनमानस में लोकप्रिय बनाया। श्री ख़ाँ अफ़ग़ानिस्तान, यूरोप, ईरान, ईराक़, कनाडा, प॰ अफ्रीका, अमेरिका, सोवियत संघ, जापान, हांकांग और तक़रीबन सभी देशों की राजधानियों में शहनाई वादन किया। आख़िर तभी तो उस्ताद के देहावसान के बाद पूरी दुनिया में शोक की लहर छा गई। ब्रिटिश मीडिया में तो स्व॰ ख़ाँ के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने का एक कीर्तिमान स्थापित हुआ। 'दि गार्जियन', 'दि इंडिपेंडेंट', 'दि टेलीग्राफ़' और 'दि टाइम्स' जैसे ब्रिटिश अख़बार ने उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ के निधन के समाचार को प्रमुखता से प्रकाशित कर उन्हें जिस प्रकार हिंदु-मुस्लिम एकता का सर्वोत्तम प्रतीक माना और उनके जीवन को आदर्श और अनूठा क़रार दिया वह इस बात का परिचायक है कि उन्होंने न केवल अपने देश भारत में, बल्कि विदेशों में समान लोकप्रियता हासिल की थी। वास्तव में स्व॰ ख़ाँ शहनाई के ऐसे जादूगर थे, जिन्होंने अपने विचार और व्यवहार से दुनिया के सभी धर्म के लोगों का सम्मान पाया, क्योंकि मुसलमान होते हुए भी उन्होंने कभी संगीत और इस्लाम के बीच अंतर्विरोध महसूस नहीं किया। कभी उस्ताद ख़ाँ ने कहा था, "जब मौलवी और मौलाना उनसे संगीत और इस्लाम के बारे में पूछते हैं तो मैं गुस्से में उन्हें कहता हूँ कि आपका प्रश्न मुझे समझ में नहीं आ रहा है।"

उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ संगीत की अब दुर्लभ होती जा रही उस पुरानी कला-परंपरा के प्रतिनिधि थे जिनके लिए सादगी और इंसानियत से बड़ा कुछ भी नहीं था। तभी तो दुनिया भर में इतनी शोहरत और सम्मान पाने के बावजूद ख़ाँ साहब को अहंकार कभी छू तक नहीं पाया और वे हमेशा ज़मीन से जुड़े रहे। एक ऐसा भी दौर आया जब फ़िल्मनगरी मुंबई ने उनको अपनी दुनिया में शामिल करने की कोशिश की, लेकिन श्री ख़ाँ को एक-दो फ़िल्मों में शहनाई बजाने के बाद यह दुनिया रास नहीं आई। 'गूँज उठी शहनाई' फ़िल्म में उन्होंने 'दिल का खिलौना हाय टूट गया ..." गीत पर जब शहनाई बजाई तो उस दौर के अज़ीम संगीतकार भी ख़ाँ साहब की शहनाई के मुरीद हो गए मगर ख़ाँ साहब की ही कुछ कमज़ोरियाँ थीं, वह थी बेगम अख़्तर की गायकी। श्री ख़ाँ को अख़्तर की 'हमरी अटरिया आ जा संवरिया, देखा-देखी तनिक हुई जाए ..." ठुमरी से बेपनाह मुहब्बत थी। जब कभी एकांत में वे बैठते, बरबस ही इस ठुमरी के बोल उनके मुँह से फूट पड़ते थे।

सुप्रसिद्ध शायर नज़ीर बनारसी यदि काशी में गंगा-जमुनी संस्कृति के प्रतिनिधि कहे जाते थे तो उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ को इस तहज़ीब का मसीहा कहने में हिचकिचाहट की कोई गुँज़ाइश नहीं। वास्तव में संगीत के ज़रिए उन्होंने निर्गुण की साधना की। कबीर के निर्गुण को उस्ताद के पूरे अंदाज़ में देखा जा सकता है। सियासत का कोई भी रंग हो चाहे वह कश्मीर का मसला हो या कोई और, उस्ताद ने कभी भी किसी बयानबाज़ी में

रुचि नहीं दिखाई। हाँ, आतंकवाद और धार्मिक कट्टरता को दुतकारा अवश्य। काशी में संकटमोचन मंदिर पर जब पिछले दिनों आतंकवादियों ने बम विस्फोट किया तो उस्ताद ख़ाँ की त्योरियाँ चढ़ीं और इस कृत्य के ख़िलाफ़ बेहब तल्ख़ अल्फ़ाज़ का उन्होंने इस्तेमाल किया। वे अक्सरहाँ कहा करते थे कि सारी समस्या का समाधान मुहब्बत से है और इसका आधार संगीत है। इस नज़रिए से उनकी सुर-साधना को एक निर्णायक आंदोलन भी कहा जा सकता है। आज इस देश तो क्या पूरे विश्व को उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ पर गर्व है। इनके बेटे महताब, नैय्यर, जामिन, काज़िम एवं नाज़िम हुसैन संगीत से जुड़े हैं। इनके अतिरिक्त उनकी तीन पुत्रियाँ पंद्रह पौत्र और दस पौत्रियाँ हैं।

वैसे सच कहा जाए तो उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ ने अपने जीवन में वह सब कुछ पाया, जिसकी कल्पना भी एक साधारण परिवार से आया व्यक्ति नहीं कर सकता है। शांत चेहरा, बच्चों जैसी मुस्कान और पहुँचे फ़कीर जैसे हाव-भाव उन्हें सबसे अलग और अनोखा बना देते थे। उन्होंने फ़ाकामस्ती में दिन गुज़ारे, लेकिन बड़े शहर या सत्ता के गलियारे के क़रीब जाने की कोशिश नहीं की। मुझे लगता है कि ख़ाँ साहब के इस आत्मसम्मान की मानसिकता के चलते भी उन्हें सरकार का ख़ामियाज़ा भुगतना पड़ा। मसलन एक सप्ताह तक अपने निवास और बनारस के हेरिटेज अस्पताल में मृत्युशय्या पर पड़े रहने के बावजूद किसी भी सरकार द्वारा उनके बेहतर इलाज का बंदोबस्त कराना लाज़िमी नहीं समझा गया, जबकि एक प्राइवेट अस्पताल ने उनकी नि:शुल्क चिकित्सा का प्रस्ताव दिया था। कहना नहीं होगा कि ख़ाँ साहब के देहावसान के बाद कई सरकारों द्वारा घड़ियाली आँसू बहाए गए। आपने देखा नहीं कि उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव ने जहाँ स्व॰ ख़ाँ की याद में एक करोड़ रुपए की लागत से एक संगीत अकादमी के गठन और पाँच लाख रुपए का एक संगीत पुरस्कार देने की घोषणा की, वहीं बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार को भी ख़ाँ साहब की मौत के बाद यह याद आई कि उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ बिहार के ही निवासी थे और अफ़रातफ़री में श्री कुमार ने भी उनके पैतृक गाँव डुमरांव में उनकी आदमक़द प्रतिमा स्थापित करने की घोषणा के साथ-साथ उनकी स्मृति में संगीत पुरस्कार देने की बात कह डाली।

'विचार दृष्टि' के उप संपादक डॉ॰ शाहिद जमील से इस मसले और श्री ख़ाँ की चिकित्सा के मामले में सरकार की उदासीनता पर जब मेरी बात-चीत हो रही थी, तो उन्होंने शाद अज़ीमाबादी और उनके पौत्र बहज़ाद फ़ातमी के एक-एक शेर सुनाए, जिसे इस संदर्भ में यहाँ प्रस्तुत करना समीचीन होगा-

पर्दापोशाने वतन तुझसे ये भी न हुआ
एक चादर को तरसती रही तुर्बत मेरी

बहज़ाद फ़ातमी के शेर को भी देखें-

ज़िंदा रहा बहज़ाद तो पूछा न किसी ने
सुनते हैं मर जाने पे कुहराम बहुत है

सचमुच उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ के देहावसान के बाद इलेक्ट्रॉनिक तथा प्रिंट मीडिया सहित सरकारों में जितने कुहराम मचे उससे तो आप सभी वाक़िफ़ हैं ही। केंद्र सरकार द्वारा सन् 1961 ई॰ में पद्मश्री, 1968 ई॰ में पद्मभूषण, 1980 ई॰ में पद्मविभूषण तथा 2001 ई॰ में भारतरत्न से सम्मानित करने के अतिरिक्त संगीत से संबंधित प्राय: सभी प्रतिष्ठित सम्मान एवं पुरस्कार से नवाज़े गए शहनाई के इस शहंशाह की जब यह उपेक्षा हो सकती है तो फिर अन्य पुरस्कृत एवं सम्मानित महानुभावों की क्या बिसात! हालंकि वाराणसी की मिट्टी की सोधी गँध उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ की धमनियों में लहू बनकर कुछ इस तरह दौड़ रही थी कि अपने आख़िरी वक़्त में भी कहीं और जाकर इलाज कराने की बजाए बनारस में ही उन्होंने रहना पसंद किया, जबकि उत्तर प्रदेश के राज्यपाल चाहते थे कि उनका इलाज लखनऊ में जाकर बेहतरीन तरीक़े से ही हो।

क़रीब चौदह साल पहले अपनी पत्नी के निधन के बाद से ही उस्ताद श्री ख़ाँ अपनी शहनाई को तकिए के नीचे रखते थे ओर उसे ही अपनी पत्नी मानते थे। इससे उन्हें राग और संगीत के बारे में सोचने का जज़्बा मिलता था। पाँच वक़्ती नमाज़ी मुसलमान होने के बावजूद ख़ाँ साहब संगीत की देवी सरस्वती के भी अराधक थे। उन्होंने कोई घराना नहीं बनाया। उन्हें जब भी समय मिलता वे बच्चों को पढ़ाते थे। उनके छ: बेटे थे, जिनमें से एक नाज़िम तबला बजाते हैं। ख़ाँ साहब दो भाई थे। बड़े का नाम शमसुद्दीन और स्वयं कमरूद्दीन थे जो बाद में बिस्मिल्ला हो गए और आज वे सचमुच बिस्मिल्लाह हो गए। मिट्टी से पहले जब उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ की देह सुकून की तरह भींग रही थी खुले आसमान में, सुर घुल रहे थे अगली दुनिया की तैयारी में और उस्ताद जैसे कह रहे हों, ''सुरों से मेरा साथ कभी नहीं छूटा, कभी नहीं छूटेगा, मैं रहूँ या न रहूँ। साँस की डोर देह से टूटती है तो जाकर ख़ुदा से जुड़ जाती है। इसी एक सुर की तलाश में ताउम्र जीता रहा हूँ मैं।''

वैसे सच कहा जाए तो कलाकार की मौत नहीं होती, क्योंकि अपनी कीर्ति के ज़रिए वे लोगों के दिलोदिमाग़ में ज़िंदा रहते हैं। उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ भी अपनी शहनाई बादन कला के साथ हमेशा ज़िंदा रहेंगे और वे हमेशा ही एक महान कलाकार के रूप में याद किए जाते रहेंगे। भारतीय इतिहास में अपने अविस्मरणीय, अतुलनीय, अकथनीय अवदानों की वजह से उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा और उनकी शहनाई के सुर हमारे कानों में गूँजते रहेंगे। वास्तव में उस्ताद ख़ाँ ने देश की धरती की मिट्टी से उठनेवाली सांस्कृतिक सुगंध को अपनी शहनाई में बसा लिया था, जिसकी ख़ुशबू ऐसी थी जिसमें वे पले-बढ़े और ज़िंदगी का सफ़र तय करते रहे। उनके सुरों में मानव जीवन हँसता-चहकता, सिसकता, संघर्ष करता हुआ सच की खोज करता हुआ सुनाई पड़ता है। उनकी शहनाई के सुर एक अलग स्वाद और स्वभाव रखते हैं, जो अपनी ओर आकर्षित और प्रभावित करते रहे। उनकी शहनाई की मीठी और ऊँचाई लिए अलाप श्रोता सिहर उठते थे। दरअसल उनके सुरों में हिंदुस्तान की मिट्टी रच-बस गई थी। लोकप्रियता और प्रसिद्धी के चरमोत्कर्ष पर पहुँचे उस्ताद बिस्मिल्ला ख़ाँ 20 अगस्त, 2006 को चलते-चलते यह कहते गए :

अब तुमसे विदा लेता हूँ, आओ संभालो मेरी साज
नये तराने छेड़ो मेरे सुरों को नींद आती है।

❋❋❋

नेपाली के साथ गुजरे वे अविस्मरणीय दिन

○ विमल राजस्थानी

चौथी कक्षा में पहली कविता लिखी सन् 1932 ई॰ में। छठी-सातवीं तक आते-आते वह और प्रस्फुटित और विकसित हुई। आठवीं कक्षा में पहुँचा तो 'बालक' मासिक (लहेरियासराय) में 'हिमालय' शीर्षक कविता छपी। इस पहली कविता ने देश के कई भागों में अपनी किलकारी की गूँज संप्रेषित कर दी और विभिन्न स्थानों से संपादकों के अनुरोध-पत्र विद्यालय के पते पर, आने आरंभ हो गए। नेपाली जी के शब्दों में :-प्रथम-प्रथम ही चुंच खुली थी पहुँच गई पंचम में। यह मेरे कविता-जीवन की अत्यंत उत्साह-वर्धक, विस्मयकारिणी घटना थी। बाद में जाना कि नेपाली जी मेरे ही इस विद्यालय के छात्र थे और उनकी भी पहली कविता 'बालक' में ही प्रकाशित हुई थी। मेरी कविताएँ धड़ाधड़ छपनी शुरू हो गई और मैं एक कवि के रूप में जिले में ख्यात हो गया।

ग्यारवीं कक्षा तक आते-आते और मंचीय जीवन के नाते देश के स्थापित कवियों-लेखकों के स्नेह-सानिध्य में आ गया। 'कोर्स' की पुस्तकों के माध्यम, बड़ी चतुराई से 'छंद-प्रभाकर' और 'स्वप्न' तथा 'पथिक' के साथ 'भारत-भारती' छिपाकर रखता और पढ़ा करता। धीरे-धीरे 'प्रसाद', 'महादेवी', 'पंत' और 'दिनकर' की काव्य-पुस्तकों का जमघट लगता चला गया। नेपाली जी के नाम से परिचय मात्र हुआ था। वे बेतिया में बहुत बाद में आए। परंतु 'दिनकर' जी से परिचित होने में देर नहीं लगी। उन दिनों कवि-सम्मेलनों की बड़ी धूम रहती थी। उनमें जनता भी खूब उमड़ती। लोगों में पढ़ने-सुनने का बहुत जज़्बा था। गाँधी जी का स्वतंत्रता-आंदोलन अपने उफान पर था। अंग्रज़ों द्वारा ज़ब्त किया गया साहित्य लोग ढूँढ़-ढूँढ़ कर पढ़ते। हस्त-लिखित पत्र-पत्रिकाएँ निकलतीं, जिन्हें प्रबुद्धजन बहुत चाव से पढ़ा करते। राष्ट्र-प्रेम की कविताओं से जनता प्रेरणा और बलिदान की ललकार पाती रहती। क्रांति-गीतों की भी बहुत माँग रहती।

कवि-सम्मेलनों में मैं अपनी प्रथम प्रकाशित काव्य-पुस्तक 'झंझा' के गीत उकालता तो श्रोता मुझे कंधों पर बिठाकर थिरक उठते। 'दिनकर' जी के बहुत निकट आने का तथा अंतरंग बनने का यही मुख्य कारण भी बना कि तभी बेतिया राज के व्यवस्थापक के पद पर प्रथम भारतीय के रूप में काँग्रेस के नेता कीर्तिशेष विपिन बिहारी वर्मा बार-एँटलॉ की नियुक्ति हुई। नेपाली जी तब तक 'रेतलाम टाइम्स', 'चित्रपट' और 'सुधा' से छुट्टी पाकर पटना से प्रकाशित होने वाले ''योगी'' साप्ताहित में आ गए थे। 'योगी' में उनका लिखा-छपा 'गोलघर के मुँडेर से' मैं बड़े चाव से पढ़ता और अभिभूत होता। स्व॰

सूर्य्य मल्ल झुनझुनवाला के निवास पर हुई एक छोटी-सी कवि-गोष्ठी में मैंने उन्हें पहली बार देखा-सुना। उस दिन उन्होंने जो कविता पढ़ी उसकी एक पंक्ति मुझे आज तक याद है-' जीवन की रसमय चर्चा में कुछ समय शांति से निकल जाए।' उनके स्वर में बसी मिठास ने मुझे सर्वाधिक प्रभावित-सम्मोहित किया और उनके सानिध्य का अभिलाषा भी बना। दिनकर जी चूंकि पटना में ही वास करने लगे थे, 'योगी' से भली-भाँति संपर्कित थे। पता नहीं किन विशेष सूत्रों के सहारे नेपाली जी बेतिया राज-प्रेस के -प्रिंटर' के पद पर आए। बेतिया राज में 'मैनेजर' के मात्र तीन पद थे। एक पर विपिन बाबू आ चुके थे परंतु शेष दोनों पदों पर अभी अँग्रेज ही पदस्थापित थे। मिस्टर वाइल्ड और मिस्टर मंस। मैनेजर का चौथा पद सृजित ही नहीं था। भूल से कई बंधुओं ने उन्हें प्रेस का मैनेजर लिख दिया है, जो सत्य नहीं है। उनका वेतन मात्र अस्सी रुपये था। पिता स्व॰ रेल बहादुर मिस्टर वाइल्ड के बंगले के गार्ड पद पर थे और संभवत: रिटायर कर चुके थे। उन्होंने विधुर होने पर चम्पारण में ही दूसरी शादी कर ली थी। विमाता से नेपाली जी की कभी नहीं पटी। तालमेल के ज़रिए काम चलाते जा रहे थे। कुँवारे थे इस लिए निभ भी रही थी। बाद में 'मरूना मइया' से शादी हुई और संबंधों में वर्तमान तनाव तेज़ होता चला गया। नेपाली जी किसी से अपनी गृह-कलह की बात नहीं बतलाते थे। गोपन ही रखते थे। अन्य सूत्रों से यह जानकारियाँ सार्वजनिक होती रहती थीं। मैं उन दिनों ग्यारहवीं का छात्र था। मेरी एक कविता 'योगी' में छपी। 'योगी' नियमित रूप से नेपाली जी के पास आता ही रहता था सो वह कविता उन्होंने पढ़ी थी। यही कविता मेरे और उनके प्रगाढ़ संबंधों का कारण बनी। प्रेस विद्यालय के निकट था। छुट्टी की घंटी होते ही वे प्रेस से बाहर निकलकर टहलने लगे थे और मेरी प्रतीक्षा में थे। दूर से ही उन्होंने मुझे पहचान लिया था। मैंने भी उन्हें देख लिया था। निकट आते ही उन्होंने मेरी बायीं कलाई अपने बलिष्ट हाथों में थाम ली और कहा, 'योगी' में छपी तुम्हारी कविता मैंने पढ़ी है। तुम इतना उम्दा लिख लेते हो, मैं नहीं जानता था। जानते हो विमल! मैं अपनी पीठ पर तुम्हारी साँसों का स्पर्श महसूस कर रहा हूँ। तुम्हारा भविष्य बहुत उज्ज्वल है। लिखो और खूब लिखो। मुझसे मिलते रहोगे तो दोनों को बहुत आनंद आएगा।'' मैं गद्‌गद् था। जिस कवि की कविताएँ- 'पीपल' और 'भाई-बहन' में अपनी कोर्स की किताबों में पढ़ चुका था- उसी का यह अभूतपूर्व अप्रत्याशित साक्षात्कार और ऐसी विलक्षण शुभकामना। मैं एक शब्द भी बोल नहीं पाया और नमस्कार कर लौट आया। राजस्थान में रेत

के छोटे-छोटे टीलों के समूह में बसे एक छोटे-से ग्राम में मैंने जन्म लिया था। आँखें खुलीं तो चारों ओर रेत ही रेत नज़र आई। प्राकृतिक सुषमा का, नैसर्गिक हरीतिमा तो दुर्लभ रहा ही, उसके अभिनव सौंदर्य का स्पर्श तक शिशु लोगों को नहीं हो सकताथा। अभिभावकों का दूर-दराज़ स्थित गहरे कुँओं से जल लाकर प्यास बुझाने तथा ऊँटों के सहारे रेत के उबड़-खाबड़ खेतों में अन्न के दाने डाल कर आसमान की ओर टकटकी लगाए रहनेवाले श्रम-साध्य कठोर जीवन। आज सोचता हूँ कि जीवन और परिवेश की यही कठोरता मुझे 'दिनकर' के दीप्तिमान व्यक्तित्व और सिंहनाद के निकट लाने में सहायक सिद्ध हुई। बहुत बाद में भाग्य ने जब चंपारण की शस्य-श्यामला धरती से नाता जुड़वाया तभी प्रकृति की आँचल तले जो अनिर्वचनीय सुखानुभूति हुई उसी ने मुझे 'नेपाली' के प्रति प्रेम से बाँधा होगा। उसके बहुत बाद जब गृहस्थी का जूआ कंधों पर बोझ बना और पहली बार उस नृशंस बोझ तले दब-पिस कर आँखें छलकी होंगी तो 'महादेवी वर्मा' और 'बच्चन' ने मेरे हृदयाकाश में करुणा और कातरता के मेघों की भीड़ लगाने में सक्षमता प्राप्त की होगी। मेरा संपूर्ण कवि-जीवन इन्हीं चारों ओर ही चक्कर काटता रहा है। यही चौमुखा दीया मेरे अंतर-तम के प्रकाश का आधार भी रहा है। इस सत्य को स्वीकार करने में मुझे तनिक-सी भी हिचक नहीं हो रही। नेपाली जी की सर्वाधिक ख्याति उनके बेतिया प्रवास-काल में ही हासिल हुई। इसी काल में उन्होंने अपनी सर्वाधिक जन-प्रिय रचनाओं का सृजन किया। मैं अंतरंग भाव से इन दोनों ही तथ्यों का साक्षी रहा हूँ। अपने बेतिया प्रवास-काल में ही उन्होंने 'कविवासर' नामक संस्था की स्थापना की थी और उसकी साप्ताहिक गोष्ठियों के ज़रिए उन्होंने अपना प्रभाव क्षेत्र भी बढ़ाया। जिस दिन गाँधी जी की निर्मम हत्या हुई उस दिन उन्हें मेरे यहाँ भोजन करने का निमंत्रण था। परंतु हत्यारा मुस्लिम था या हिंदू इस बात का खुलासा नहीं हो सकने की स्थिति में नगर में घोर सन्नाटा पसर गया था। आबाल-वृद्ध सभी उदास और दुखी थे। आसन्न संकट से गंभीर रूप से चिंतित और भयातुर। मैं भागा-भागा नेपाली जी के निवास पर गया और निर्धारित कार्य-क्रम के बारे में जिज्ञासा की तो उत्तर मिला- "गाँधी मरा है, नेपाली नहीं। हम साथ-साथ खाना भी खाएँगे और काव्य-पाठ भी करेंगे।" मैं यह अप्रत्याशित उत्तर सुनकर स्तब्ध रह गया था। सुकोमल भावनाओं से आपादमस्तक परिवेष्ठित यह जन्मजात कवि का इतना संवेदना शून्य और कठोर हृदय का है? परंतु विवशता थी। हमने साथ-साथ भोजन किया और देर रात तक काव्य-पाठ का भी (आधा-अधूरा) आनंद उठाया। नेपाली जी निर्धन थे। उन्हें कभी अच्छे वस्त्र नसीब नहीं हुए। मोटी धोती, डोरिए की हाफ सर्ट और पाँव में नगर के मोची द्वारा बनाई गई एकदम साधारण चप्पलें। न कलाई में घड़ी और न जेब में फाउंटेन पेन। हाँ, उनकी बढ़ी हुई दाढ़ी मैंने कभी नहीं देखी। सदा हँसते हुए पाया। दुख में भी, सुख में भी। परंतु सुखों में लिखना शायद एकदम ग़लत होगा। सुख से तो वे दूर रहे। सांसारिक सुखों से महरूम रहते हुए भी उन्हें सदैव प्रफुल्लित और प्रसन्न पाया। प्रत्युत्पन्नमति थे वे। हाज़िर जवाब ऐसे कि सुनकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता था। जूते उन्होंने जीवन में कभी नहीं पहने। सिनेमा-संसार में जाकर भी नहीं। हाँ, हाल में नज़र में स्थापित उनकी प्रस्तक-प्रतिमा को संगतराश ने भूल से, जूते ज़रूर पहना दिए हैं। उनके काव्य-कौशल की चर्चा करना संस्मरण-लेखक का अभिष्ट नहीं। उनके साथ बिताए क्षणों तथा कुछ खट्टे-मीठे अनुभवों को उजागर करना ही एक मात्र प्रयोजन। एक बार उन्होंने मन बनाया कि गाँव में एक रात बिताई जाए सो भाई माधव शरण कुमुद के मच्छर ग्राम के निकट गाँव में गोष्ठी का आयोजन रखा गया। हम टमटम से वहाँ गए। आम का मौसम था। कुमुद जी के या उनके किसी परिचित के बाग़ीचे में आमों की बहार आई हुई थी। मुझसे बोले- चुपके से निकल चलो। आज डालों पर बैठकर आम खाएँ। हम दोनों जा पहुँचे बाग़ीचे में जर्दा आम से पेड़ लद-फद हो रहे थे। चारों ओर खुशबू ही खुशबू। लपक कर एक वृक्ष पर चढ़ गए और लगे आम तोड़-तोड़ कर चूसने। मुझसे कहा कि मैं भी उचक लूँ। पर जब मुझसे यह संभव नहीं हो सका तो लगे आम तोड़-तोड़ कर नीचे गिराने। तृप्त होकर वे नीचे आ लिए। अब समस्या थी मुँह-हाथ धोने की। भय भी था, संकोच भी था कि पकड़ लिए गए तो भद होगी। उनके पास तो रूमाल तक नहीं था। भले ही अपने एक गीत में उन्होंने 'रेशमी रूमाल' की चर्चा की है। मेरे रूमाल में ही हाथ-मुँह पोंछा और डेरे पर ऐसे लौटे जैसे कहीं घूम-फिर कर आए हों। आह! कितने प्यारे थे वे दिन। देश के हिंदी भाषाभाषी प्रांतों से अक्सर उन्हें काव्य-पाठ के लिए बुलाया जाता था। उनका काव्य-पाठ मंत्रमुग्ध कर देनेवाला होता था। श्रोता मात्र उन्हीं को देर रात तक सुनना चाहते। हिंदी के कवि-सम्मेलनों में कवियों के तान का बहुत नाम था। नेपाली, बच्चन और नीरज। परंतु नेपाली जी 'नीरज' का लोहा मान गए थे। मुझसे कहते- " सा ... क्या पढ़ता है। लंबी-लंबी पंक्तियाँ ऐसे सहज भाव से पढ़ता है कि सुनकर झुरझुरी-सी उठने लगती है।" नेपाली जी मंच के कवि थे। एक-दो बार बेतिया में हुए कवि-सम्मेलनों में मैंने एक विशेष बात परिलक्षित की। बेतिया राज की ओर से तब दशहरे के अवसर पर प्रतिवर्ष एक दिन अखिल भारतीय कवि-सम्मेलन, दूसरे दिन अखिल भारतीय मुशायरा और तीसरे दिन संगीत-सम्मेलन। संयोजक बदलते रहते। एक बार नेपाली जी संयोजक बने थे और एक बार में भी संयोजक नियुक्त हुआ था। अभी भारत आज़ाद नहीं हुआ था। साहित्यकारों का बहुत आदर-सम्मान था। मंचों पर केवल साहित्यकार ही विराजते थे। नेपाली जी के पीयूषवर्षी काव्य- पाठ पर श्रोताओं को झूमते देख मंचासीन दिनकर हतप्रभ हो उठे थे। मुझसे सिगरेट ले कर फूँकने लगते मानों धुएँ के गुब्बार में अपनी हीन मान्यता को दूर उड़ाने की चेष्टा कर रहे हों। 'दिनकर' गरजते थे। 'नेपाली' काव्य-पाठ के द्वारा फुहार बरसाते थे। एक ओज का कवि तो दूसरा रसवर्जी दिनकर धुँआ तो उड़ाते ही थे, अगल-बगल बैठे लोगों का ध्यान बँटा देने के उद्देश्य से गप्पें भी मारने लगते थे। मैं शांत भाव से यह सब देखकर मन ही मन मुस्करा पड़ता था। मानव-मन की कुहेलिकाओं का गहरा अध्ययन मुझे इन श्रेष्ठजनों के सान्निध्य-संपर्क में आने पर ही हुआ। नेपाली जी तो ग्यारहवीं कक्षा

आयुक्त निखिल कुमार औरंगाबाद से ही चुनाव जीतकर लोकसभा में पहुँचे।

छोटे साहब ने न केवल आजादी की लड़ाई में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, बल्कि राज्य की प्रगति के लिए प्रयास किया। सत्येंद्र बाबू वक्तृत्वकला के भी धनी थे। पटना में रहने के चलते मुझे भी उन्हें अनेक बार देखने-सुनने का मौका मिला। वे मृदुभाषी स्वभाव के थे, किंतु आत्मसम्मान से वे कभी समझौता नहीं करते थे। पिछले कई वर्षों से वे अस्वस्थ चल रहे थे। 4 सितंबर 2006 की सुबह उन्होंने किडनी फेल हो जाने की वजह से अंतिम साँसें लीं। कवि की इन पंक्तियों से मैं छोटे साहब को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ :

दूब भरी इस शैल-तटी पर, उषा विहँसती आएगी,
युग-युग कली खिलेगी, युग-युग कोयल गीत सुनाएगी,
घुल-मिल चंद्रकिरण से निसदिन बरसेगी आनंद सुधा
केवल मैं न रहूँगा, यह मधुधार उमड़ती जाएगी।

❋❋❋

हृषिकेश मुखर्जी

जिन्होंने इंद्रधनुषी रंगों से सजाए मध्यवर्गीय चरित्र

सामाजिक सरोकारों से लेकर सूक्ष्म मानवीय संवेदनाओं तक को कैमरे की नज़र से रुपहले पर्दे पर उतारनेवाले दिग्गज फिल्मकार हृषिकेश मुखर्जी का 27 अगसत, 2006 को मुबई में लंबी बीमारी के बाद निधन हो गया। उनके निधन से हिंदी सिनेमा के एक युग का, एक शैली, एक परंपरा के अंत का सूचक है। अपनी फिल्मों के ज़रिए हिंदी सिनेमा के इतिहासपुरुष बन चुके

हृषि दा की यादगार फिल्में 'आनंद', 'अभिमान', 'चुपके चुपके', 'खूबसूरत', 'अनुराध', 'बावर्ची', 'गुड्डी', 'मिली', 'रजनीगँधा', 'गोलमाल', 'सत्यकाम' आदि की एक लंबी सूची है। फिल्म जगत में इनके उल्लेखनीय योगदान के लिए इन्हें फिल्मों के शीर्ष सम्मान 'दादा साहब फालके पुरस्कार' से वर्ष 1999 में नवाज़ा गया। इसके अतिरिक्त दादा को पद्मविभूषण सहित अनेक सम्मान व पुरस्कार मिले। राजकपूर और नूतन की भूमिका को लेकर बनी इनकी 'अनाड़ी' फिल्म में इन्हें काफ़ी सफलता मिली। इनकी कई फिल्में मध्यवर्गीय जीवन की तहों को बड़ी ही ख़ूबसूरती से खोलती हैं जिनमें निहित जीवन मूल्यों, प्रतिबद्धताओं और विडंबनाओं को ईमानदारी से पेश किया गया है। आम आदमी से जुड़े इस 87 वर्षीय फिल्मकार को श्रद्धांजलि।

स्व. मुखर्जी ने फिल्मों के निर्देशन की अपनी शैली और जीवन के प्रति सोच की वजह से भारतीय सिनेमा पर अमिट छाप छोड़ी। कुशल संपादक बनने के बाद उन्होंने 1957 में पहली बार 'मुसाफ़िर' फिल्म का स्वतंत्र निर्देशन किया और 'अनाड़ी' फिल्म से लोगों का ध्यान खींचा। हृषिकेश दा ने अपनी फिल्मों से केवल दर्शकों का दिल ही नहीं जीता, बल्कि उनके दौर में सारे पोपुलर अभिनेता व अभिनेत्रियाँ उनके साथ काम करने के लिए हमेशा तैयार रहते थे। यह बात ठीक है कि हृषि दा के ज़्यादा किरदार शहरी हैं, पर उनमें बनावटीपन नहीं है। उन्होंने फिल्मों के अलावा दो टी.वी. सीरियल - 'हम हिंदुस्तानी' (1986) और 'तलाश' (1992) का भी निर्देशन किया।

30 सितंबर 1922 को कोलकाता में जन्मे हृषिकेश मुखर्जी अपने चार भाइयों में सबसे बड़े थे। पाँच दशकों के अपने कार्यकाल में उन्होंने दर्शकों को मधुर गीत-संगीत से सजी और साफ-सुथरी सामाजिक-पारिवारिक कहानियों पर बनी कुल 46 फिल्में दीं। लंबे समय तक उन्होंने सेंसर बोर्ड का अध्यक्ष पद भी बख़ूबी संभाला।

27 अगस्त, 2006 को हृषि दा मौत से हार गए और आनेवाली पीढ़ियों के लिए छोड़ गए साफ-सुथरी मनोरंजक फिल्में और मधुर गीत-संगीत का वह अनमोल ख़ज़ाना जिसने हिंदी सिनेमा के इतिहास में हृषिकेश मुखर्जी के नाम को हमेशा के लिए अमर कर दिया।

-संपादक

सूरजभान

उपेक्षितों के रहनुमा का निधन

अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग के अध्यक्ष तथा उत्तर प्रदेश तथा

हिमाचल प्रदेश के पूर्व राज्यपाल सूरजभान का हृदय गति रुक जाने से विगत 06.8.2006 को निधन हो गया। वे भाजपा के प्रमुख नेता तो थे ही, दलित, पीड़ित तथा उपेक्षितों के रहनुमा भी थे। वर्ष 1998 में प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी के मंत्रिमंडल में वे मंत्री थे।

स्व. सूरजभान अपने पीछे हज़ारों शुभेच्छुओं के साथ-साथ अपनी विधवा पत्नी और तीन पुत्रों को छोड़ गए। शोषितों के इस रहनुमा को 'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से श्रद्धांजलि।

— सुश्री लक्ष्मी निषाद, दिल्ली से

नजीब महफ़ूज़

नोबल पुरस्कार से सम्मानित उपन्यासकार का निधन

नजीब महफ़ूज़ पहले अरब निवासी साहित्यकार हैं, जिन्हें साहित्य के नोबल पुरस्कार पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनके उपन्यास में क़हिरा की ज़िंदगी की तस्वीर मिलती है। उनका कहना था कि लेखक अपने समाज का चित्रण करता है और समाजिक परिवर्तनों का प्रभाव उस पर भी पड़ता है। उनके निधन समाचार में कहा गया है कि वह नासूर की बीमारी से ग्रस्त थे। 19 जुलाई, 06 को सड़क पर गिर जाने के कारण उनके सिर में गहरे ज़ख़्म आ गए थे। उनके ज़ख़्म का ऑपरेशन करना पड़ा था। टी.वी. से प्रसारित समाचार में कहा गया कि उनके परिवार वालों ने उपचार के लिए उन्हें अमरिका ले जाने से इंकार कर दिया था। 94 वर्षीय नजीब महफ़ूज़ का 30 अगस्त, 2006 को निधन हो गया। समाज के चितेरा उपन्यासकार को 'विचार दृष्टि' परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि।

- पटना कार्यालय से

प्रज्ञापुरुष

डॉ॰ अब्दुल मुग्नी का निधन

मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के पूर्व कुलपति डॉ. अब्दुल मुग्नी का विगत 6 सितंबर, 2006 को पटना में निधन हो गया। डॉ. मुग्नी उद्‌भट विद्वान तथा कुशल प्रशासक तो थे ही, सांप्रदायिक सौहार्द के प्रबल स्तंभ

भी थे। उनकी ईमानदारी से त्रस्त भ्रष्ट कर्मचारी व अधिकारी उनसे नाराज़ रहते थे और तरह-तरह के मुक़दमों में फँसाकर उन्हें परेशान करते थे। सरकारी महकमों में आज ऐसा दौर चल पड़ा है कि किसी कर्मचारी व अधिकारी की ईमानदारी और निष्ठा भी उसके लिए वरदान की जगह अभिशाप होती जा रही है।

उल्लेख्य है कि डॉ. मुग्नी अंजुमन तरक़्क़ी उर्दू, बिहार के अध्यक्ष भी थे। उन्होंने अबतक लगभग साठ पुस्तकों की रचना की। उन्हें ग़ालिब अवार्ड के अलावा कई पुरस्कारों से नवाज़ा जा चुका है। इस संदर्भ में यह भी कहना लाज़िमी होगा कि बिहार में उर्दू को द्वितीय राजभाषा के रूप में लागू कराने में डॉ. मुग्नी का योगदान सराहनीय रहा है। वह साहित्यकार के साथ-साथ एक अच्छे पत्रकार भी थे। यद्यपि वे अँग्रेज़ी के शिक्षक थे फिर भी उर्दू साहित्य पर जो उन्होंने कार्य किया उसे भुलाया नही जा सकता। ऐसे उद्‌भट विद्वान को 'विचार दृष्टि' की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि।

- पटना कार्यालय से

पुस्तकें

1. अँधेरे में शब्द - काव्य-संग्रह
   कवि : प्रो॰ लखन लाल सिंह 'आरोही'
2. महामारी - उपन्यास
   शमोएल अहमद
3. लफ़्ज़ों में एहसास - ग़ज़ल-संग्रह
   शायर : इफ़्तिख़ार राग़िब
4. संगीतका - (संगीत-ज्ञान से संबंधित)
   कुशोर कुमार
5. राग-रंग-मकरन्द - हिंदीतर कविताएँ
   कवि : डॉ॰ रमेश नीलकमल
6. लघुकथा और लघुकथा
   कथाकार : डॉ॰ रमेश नीलकमल
7. नेपोलियन - जीवनी
   अनुवादक : अमीत स्वामी
8. श्री रामदूत हनूमान - हाइकु-संग्रह
   कवि : डॉ॰ नरेश पाण्डेय 'चकोर'
9. शापित सपने - कहानी-संग्रह
   कथाकार : डॉ॰ वैद्यनाथ शर्मा
10. संग सागर संगम - यात्रा-वृतांत
    लेखक : डॉ॰ भगवान सिंह 'भास्कर'
11. मन के जीते जीत - दोहा सतसई
    दोहाकार : ए.बी. सिंह, चितौड़गढ़

राष्ट्रीय विचार मंच

अत्यावश्यक सूचना

राष्ट्रीय विचार मंच तथा विचार दृष्टि के सभी सदस्यों तथा उससे जुड़े शुभेच्छुओं को सूचित किया जाता है कि लौह पुरुष सरदार पटेल की 131 वीं जयंती के अवसर पर 31 अक्टूबर, 2006 को राष्ट्रीय विचार मंच एवं गाँधी दर्शन एवं स्मृति समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में नई दिल्ली के राजघाट स्थित स्मृति समिति के सभागार में एक संगोष्ठी करने हेतु मंच तथा समिति के पदाधिकारियों के साथ विचार विमर्श चल रहा है। संगोष्ठी का संभावित विषय होगा 'आतंकवाद के साये में सत्याग्रह और अहिंसा'।

अतः सदस्यों से आग्रह है कि समारोह एवं संगोष्ठी में भाग लेकर इसे सफल बनाएँ।

राष्ट्रीय महासचिव

पत्रिकाएँ

1. मानस-चंदन (अप्रैल-जून, 06)
   प्रधान संपादक : डॉ॰ गणेश दत्त सारस्वत
   सारस्वत सदन, सिविल लाइन्स, सीतापुर 261001 (उ॰प्र॰)
2. अणुव्रत (जुलाई-सितंबर, 06)
   संपादक : डॉ॰ महेंद्र कर्णावत
3. अंबेदकर मिशन पत्रिका(जुलाई-गस्त,06)
   संपादक : बुद्ध शरण हंस
4. शब्द कारख़ाना (अप्रैल-सितंबर 06)
   संपादक : डॉ॰ रमेश नील कमल
5. वैश्य वसुण (जनवरी-मार्च, 06)
   संपादक : डॉ॰ रमेश नील कमल
6. लेखा-परीक्षा प्रकाश (अक्टूबर-दि॰, 05)
   संपादक : मेहरबान सिंह नेगी
7. दि इंडियन जर्नल ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन (अप्रैल-जून, 05)
8. मूकवाणी (अंक 9)
   संपादक : मुकेश कुमार
9. चक्रवाक् (जनवरी-मार्च, 07)
   संपादक : निशांतकेतु
10. धम्मसेनानायक (जून, 06)
    प्र॰ संपादक : दीक्षित आव्रले
11. रश्मिरथी (मई-जून, 06)
    संपादक : अरुण कुमार आर्य
12. आग़ाज़ (अप्रैल, 06) मुंगेर
    संपादक : राशिद तर्राज़
13. मध्यांतर - अगस्त-सितंबर 06
    संपादक : डॉ. पुरुषोत्तम प्रशांत, हैदराबाद
14. लोक शिक्षक मासिक - अगस्त,06
    संपादक : डॉ. सत्येन्द्र चतुर्वेदी, जयपुर
15. केरल हिंदी साहित्य अकादमी - शोध पत्रिका, जुलाई 06
    संपादक : डॉ. एन चंद्रशेखरन नायर, तिरूवनंतपुरम, केरल
16. सभ्यता संस्कृति - अगस्त 06
    संपादक : डॉ. ऋचा सिंह, नई दिल्ली
17. साप्ताहिक शिवनाथ अंक - 22
    संपादक : हर प्रसाद अग्रवाल, रायपुर

त्रिमूर्ति ज्वेलर्स

बाईपास रोड, चास, बोकारो

झारखंड

दूरभाष : 65765

फैक्स : 65123

परीक्षा

प्रार्थनीय

सुरेश एवं राजीव

त्रिमूर्ति अलंकार

त्रिमूर्ति पैलेस

(रुपक सिनेमा के पूरब)

बाकरगंज,

पटना-800004

दूरभाष : 2662837

आधुनिक आभूषणों के निर्माता, नए डिजाइन, शुद्ध सोने-चाँदी तथा हीरे के गहनों का प्रमुख प्रतिष्ठान

Tele.0612-2352480

THE PEOPLE'S CO-OPERATIVE HOUSE CONSTRUCTION SOCIETY LTD.

KANKERBAGH, PATNA-800020.

HIGHLIGHTS:

1. For members of lower & middle income group of people this society is said to be one of the largest co-operative house construction societies in Asia.
2. In the first phase 131.12 acres of land acquired by Government of Bihar were handed over to this society.
3. The society has got an opportunity to attract 1730 members from lower income group of people.
4. In all 1600 plots were bifurcated in planning out of which 10 plots were reserved for community hall, office building, godown and four-storied building for common utilities.
5. 1400 houses have so far been constructed by the members.
6. 500 members have been given housing loan through this society.
7. Boundary walls in 15 parks have already been constructed by the society.
8. In most of the sectors metalled & cemented roads have also been construcred.
9. Efforts are being made to improve the drainage system, to have plantation and lighting facilities.
10. In the second phase 7 acres of land have been purchased at Jaganpura village in which six houses have been constructed so far.
11. Out of 96 plots 95 plots have already been allotted to the members and one plot has been reserved for common utilities.
12. The society makes available its community hall to the members on priority basis for the marriage ceremony of their sons & daughters at half of the preseribed charges.
13. As far as possible the society tries to provide street light, maintain roads, clean manholes, construct parks and other development activities.
14. All those members who have not filled up their nominee forms as yet are requested to deposit the forms duly filled in after getting the forms from the office of the society.

WITH REGARDS TO THE MEMBERS.

L.P.K. Rajgrihar
Chairman

Sidheshwar Prasad
Vice Chairman

Prof. M.P. Sinha
Secrectary

वर्ष : 8 अंक : 29 अक्टूबर-दिसंबर 2006 RNI REG. NO. : DEL HIN/1999/791

सरदार पटेल की 131वीं जयंती के अवसर पर
हमारी शुभकामनाएँ

पटेल फाउंडेशन
(सरदार पटेल के विचारों के प्रति समर्पित)

संस्था का ध्येय है –

- सरदार पटेल के विचारों को जन-जन तक पहुँचाना
- राष्ट्रीय एकता व अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखना
- सामाजिक समरसता कायम करना
- सांप्रदायिक सद्भाव का वातावरण बनाना
- पाखंड, अंधविश्वास और रूढ़िवादी प्रवृत्तियों से परहेज करना

तो आइए, आप भी इस अभियान का एक हिस्सा बन इसे अपेक्षित सहयोग प्रदान करें।

147, अंसल चैंबर-II, भीकाजी कामा प्लेस, नई दिल्ली
फोन : 30926763 • मो. : 9891491661

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी सिद्धेश्वर द्वारा 'दृष्टि', यू-207, विकास मार्ग, शकरपुर, दिल्ली-92 से प्रकाशित एवं प्रोलिफिक इनकारपोरेटिड, एक्स-47, ओखला फेस-2, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित। संपादक-सिद्धेश्वर